भारतीय साहित्य

भाषाविज्ञान तथा भारतीय भाषाओं का शोधप्रधान त्रैमासिक

जुलाई १९५९

[वर्ष ४, अंक ३]

सम्पादक

डॉ० विश्वनाथ प्रसाद

क० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ,

आगरा विश्वविद्यालय, आगरा ।

विषय-सूची

डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया

हिन्दी तथा अँग्रेजी के व्यंजन-गुच्छों का तुलनात्मक विवेचन

[हिन्दी में अँग्रेजी के आगत शब्दों के आधार पर]

हिन्दी तथा अँग्रेजी के व्यंजन-गुच्छों पर विहंगम दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में इनकी प्रधानता है। हिन्दी में संस्कृत के तत्सम शब्दों का आधिक्य होने के कारण संस्कृत के व्यंजन-गुच्छों की एक बड़ी संख्या हिन्दी में गृहीत है, फिर भी आदि स्थिति में इनका उच्चारण उतना सहज और सुलभ नहीं है जितना अन्त-स्थिति में। फलतः आदि व्यंजन-गुच्छ बोलचाल में समाप्त होते जा रहे हैं। इसी आधार पर अँग्रेजी के शब्दों के आदि व्यंजन-गुच्छ जनसाधारण द्वारा प्रयुक्त व उच्चरित न होने पर स्वरागम से युक्त अक्षर में परिवर्तित हो जाते हैं, यद्यपि लिखित रूप से हिन्दी में वे चलते हैं। शुद्ध उच्चारण तो केवल शिष्टों तक ही सीमित रह गया है और फिर कुछ शब्दों का उच्चारण तो सभी स्तरों पर समाप्त हो गया है, जैसे आदि / स् / से प्रारम्भ होने वाले शब्दों में स्वभावतः आदि स्वरागम[1] के साथ अक्षर का उच्चारण होता है—

---

१. उर्दू का भी प्रभाव इस दिशा में पड़ा है। उर्दू में तो आदि व्यंजन-गुच्छों का कहीं पता नहीं—Dr. Masud Husain-A Phonetic and Phonological Study of the Word in Urdu पृ० १५। पंजाबी के प्रभाव से मध्य स्वरागम भी हो जाता है। "इस्टेशन" के स्थान पर पंजाबी में "सटेशन" सुनाई पड़ता है।

मैंने डॉ० धीरेन्द्र वर्मा* द्वारा लिये गये हिन्दी में अँग्रेजी के ५०० के लगभग गृहीत शब्दों के उच्चारण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि आदि व्यंजन-गुच्छ अधिकांशतः स्वर द्वारा अक्षर में परिवर्तित कर दिये जाते हैं। जिन स्वरों का आगम होता है वे इस प्रकार हैं:—
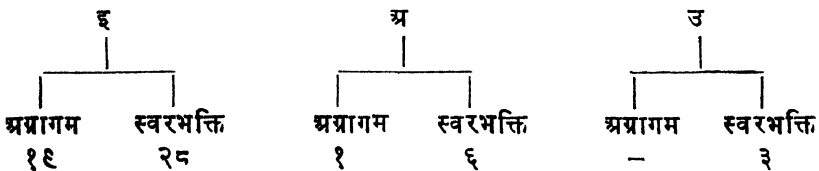
* Dr. Dhirendra Verma-English Loan Words in Hindi, Allahabad University Studies, 1932, part Ipp 33-52.

	अंग्रेजी		हिन्दी
Station	['steiʃən]	इस्टेशन	[isṭe:ʃən]
School	['sku:l]	इस्कूल	[isku:l]

आदि व्यंजन-गुच्छ:

अँग्रेजी में सबसे अधिक व्यंजन-गुच्छ 'स्' ध्वनि से प्रारम्भ होते हैं :—
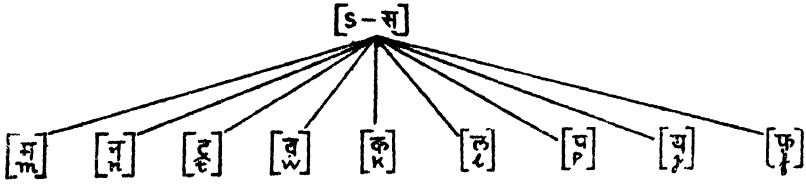
इनमें से हिन्दी में /st –स्ट्–/ तथा /sl –स्ल/ दो व्यंजन-गुच्छ सर्वथा नवीन हैं और इनसे प्रारम्भ होने वाले अँग्रेजी के आगत शब्दों की संख्या अधिक है। इन व्यंजन-गुच्छों का उच्चारण भी शिष्ट समाज तक में शुद्ध सुनाई नहीं पड़ता।

slate [sleit] और slipper [slipə] का उच्चारण भी क्रमशः 'सिलेट' और 'सिलीपर' ही सुना जाता है। अँग्रेजी के प्रभाव से गृहीत व्यंजन-गुच्छ ये हैं :—

ध्वनि	ध्वनि-गुच्छ	अँग्रेजी शब्द	ध्वन्यात्मक रूप	हिन्दी रूप	उच्चारण
/t ट्/					
	/tw –ट्व/	Tweed	[twi:d]	ट्वीड	[ṭwi:ḍ]
	/tj –ट्य/	Tuition	[tju:ʃən]	ट्यूशन[२]	[ṭju: ʃən]
	/tr-ट्र/	tram	[træm]	ट्राम	[ṭra:m]
/b–ब/	/bl-ब्ल/	blause	[blauz]	ब्लाउज	[blauj]
/d–ड्/	/dj-ड्य/	Duty	[dju:ti]	ड्यूटी	[ḍju:ṭi:]

२. /ट्य/ व्यंजन-गुच्छ प्रारम्भ में ट्यूब, ट्यून आदि शब्दों में भी सुना जा सकता है।

/स/ ध्वनि के साथ संलग्न होने पर य-ध्वनि का लोप हो जाता है, जैसे :—

Student	[stju:dənt]	इस्टूडेंट	[isṭu:ḍe:nṭ]
Studio	['stju:diou]	इस्टूडिओ	[isṭu:ḍio.]

/ट्य/ का मध्य में उच्चारण कहीं-कहीं च-ध्वनि के समान हो जाता है :—

Portuguese	[pɔ:tju'gi:z]	पोर्चगीज	[po:rcgi:j]
Christian	['kristjən]	क्रिश्चियन	[kriscijan]

मध्य-स्थिति में अन्य ध्वनि-गुच्छों में भी 'य' का लोप होगया है। जैसे,

[pj]	Deputy	['depjuti]	डिप्टी	[ḍipṭi:]
[mj]	Formula	[fɔ:mjulə]	फार्मूला	[pha:rmu:la:]

ध्वनि	ध्वनि-गुच्छ	अँग्रेजी शब्द	ध्वन्यात्मक रूप	हिन्दी-रूप	उच्चारण
	/dr-ड्र्/	Driver	[draivə]	ड्राइवर	[ḍraivər]
/f–फ़्/	/fj-फ़्य्/	Future	[fju:tʃə]	फ़्यूचर	[phju:čər]
	/fl-फ़्ल्/	Flat	[flæt]	फ़्लैट	[phlɛ:ṭ]
	/fr-फ़्र्/	Frame	[freim]	फ़्रेम	[phre:m]
/θ-थ्/	/θr-थ्र्/	Through	[θru:]	थ्रू	[thru:]

इस प्रकार हिन्दी में ट्व, ट्य, ट्र, ब्ल, ड्य, ड्र, फ़्य, फ़्ल, फ़्र, थ्र, स्ट, स्ल नवीन ध्वनि-गुच्छ गृहीत हुए हैं जिनके आधार पर ही यह पहचाना जा सकता है कि इनसे प्रारम्भ होने वाले शब्द निश्चित रूप से अँग्रेजी से गृहीत किये गये हैं।

तीन ध्वनियों के गुच्छ--

प्रारम्भ में तीन ध्वनियों का गुच्छ हिन्दी में प्रचलित नहीं है। लिखित रूप में भी ऐसे कुछ ही शब्द प्राप्त होते हैं पर जनसाधारण में उनका उच्चारण भी वस्तुतः भिन्न[३] होता है और इस प्रकार मूल शब्द का एक अक्षर दो अक्षरों में परिवर्तित हो जाता है।

अँग्रेजी में इस प्रकार के शब्दों का बाहुल्य है पर सभी गृहीत शब्दों में इसको दो अक्षरों में विभाजित करके ही गृहीत किया गया है। उदाहरणार्थ अँग्रेजी के निम्नलिखित ध्वनि-गुच्छ लिये जा सकते हैं—

/k–क्/	/klj-क्ल्य्/	Clue	[klju:]	क्ल्यू[४]	[kilju:]
/s-स/	/spl-स्प्ल्/	Splint	[splint]	स्पिल्ंट[५]	[isplinṭ]
	/spr-स्प्र्/	Spring	[spriŋ]	स्प्रिंग[६]	[ispriŋg]
	/str-स्ट्र्/	Street	[stri:t]	स्ट्रीट[७]	[isṭri:ṭ]
	/stj-स्ट्य्/	Student	[stju:dənt]	स्टूडेंट[८]	[isṭu:ḍe:nṭ]
	/skr-स्क्र/	Screen	[skri:n]	स्क्रीन[९]	[iskri:n]

---

३. स्त्री [stri:] का उच्चारण वस्तुतः [istri:] होता है।

४. बोलचाल में प्रयुक्त—क्या कुछ क्लयू निकला ?

५. फर्स्ट एड में प्रयुक्त।

६. स्प्रिंगदार गद्दे।

७. बड़े नगरों में जैसे, दिल्ली में हनुमान स्ट्रीट।

८. कालेजों में प्रयुक्त।

९. ड्रामा तथा सिनेमा में।

/skl-स्कूल्/	Sclerosis	[skliərousis]	हिन्दी में कोई शब्द नहीं[10]
/skw-स्कव्/	Square	[skwɛə]	स्क्वायर[11] [iskwa:jar]
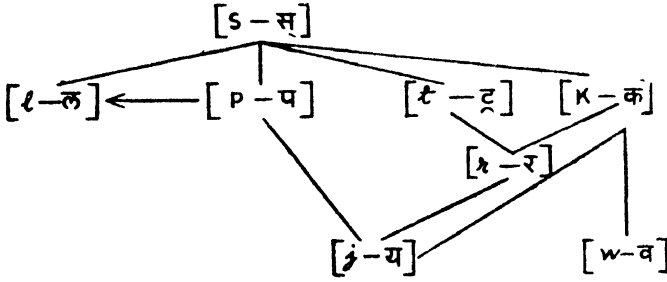
अन्त्य व्यंजन-गुच्छ—

अँग्रेजी अन्त्य व्यंजन-गुच्छों का प्राधान्य है, पर हिन्दी में ऐसे व्यंजन-गुच्छों से युक्त शब्द कम गृहीत हुए हैं क्योंकि इस प्रकार के अधिकांशत: व्यंजन-गुच्छों का प्रयोग शब्दों के बहुवचन और भूतकालिक रूप में हुआ है। हिन्दी में गृहीत शब्दों के रूप का परिवर्तन अधिकांशत: हिन्दी के व्याकरण के आधार पर हुआ है। अतएव हिन्दी में इस प्रकार के शब्द अधिक प्रवेश न पा सके।[12]

फिर भी अँग्रेजी के शब्दों के माध्यम से कुछ नवीन अन्त्य व्यंजन-गुच्छ प्रविष्ट हो चुके हैं, इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ेगा।

गुच्छ		अंग्रेजी	हिन्दी	
/kt–क्ट्/	Pact	[pækt]	पैक्ट	[pɛ·kṭ]
	District	[distrikt]	डिस्ट्रिक्ट	[ḍisṭrikṭ]
/ft–फ़्ट्/	Draft	[dræft]	ड्राफ़्ट	[dra:fṭ]
/st–स्ट्/	List	[list]	लिस्ट	[lisṭ]
/lt–ल्ट्/	Result	[rizʌlt]	रिजल्ट	[rijəlṭ]

१०. इस अकेले शब्द के डेनिश भाषा में गृहीत होने के कारण ही /स्कल्/ का नवीन गुच्छ उस भाषा को गृहीत करना पड़ा है। सौभाग्य है कि यह शब्द हिन्दी में नहीं आया।

Vogt Hans-Language Contact
(Linguistics To-day-Martinet, 1954, page 250.)

११. ज्यामिति में।

१२. बोलचाल में ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है पर बहुत ही कम। फिर भी यह मानने से मना नहीं किया जा सकता कि कपड़े के व्यापार में प्रिन्ट्स और परीक्षा में हिन्ट्स प्रचलित हैं।

/ks–क्स्/	Box	[bɔks]	बक्स	[bəks]
	Tax	[tæks]	टैक्स	[ṭɛ·ks]
/ps–प्स्/	Tops	[tɔps]	टौप्स	[to·ps]
/rs–र्स्/	Nurse	[nə:s]	नर्स	[nərs]
/rl–र्ल्/	Pearl	[pə:l]	पर्ल	[pərl]
/rf–र्फ़्/	Scarf	[ska:f]	स्कार्फ	[iskarph]

इस प्रकार हिन्दी में प्रयुक्त होने वाले शब्दों में यदि अन्त्य स्थिति में 'क्ट', 'फ़्ट', 'स्ट', 'ल्ट', 'क्स', 'प्स', 'र्स', 'र्ल', 'र्फ़' आदि व्यंजन-गुच्छ हों तो निस्सन्देह इस आधार पर हम इनको विदेशी मान सकते हैं। आदि स्थिति में साधारणतः बोलचाल में जिस प्रकार व्यंजन-गुच्छ अक्षर में परिवर्तित कर दिये जाते हैं, उस अनुपात से अन्त्य स्थिति में नहीं; जैसे 'स्ट' का उच्चारण आदि स्थिति में मिलना कठिन है, पर अन्त्य स्थिति में यह पूर्णरूपेण सुरक्षित है। मैंने 'लिस्ट' को 'लिसिट' कहते हुए नहीं सुना।

व्यंजन-गुच्छों के तुलनात्मक विवेचन से हम निम्नलिखित निष्कर्ष निकाल सकते हैं—

१. व्यंजन-गुच्छ को तोड़ दिया जाता है। व्यंजन-गुच्छ तोड़ने के लिए अग्रागम तथा स्वरभक्ति का प्रयोग होता है—

School	[sku:l]	इस्कूल	[isku:l]	अग्रागम के द्वारा
Slate	[sleit]	सिलेट	[sile:ṭ]	स्वरभक्ति के द्वारा

२. व्यंजन-गुच्छों को ग्राहक भाषा अपनी निकटतम ध्वनियों के व्यंजन-गुच्छ में बदल देती है—

List [list] लिस्ट [lisṭ] बर्स्व्य ट् के स्थान पर मूर्द्धन्य ट

३. व्यंजन-गुच्छ अपरिवर्तित रहते हैं—

Cream [kri:m] क्रीम [kri:m] 'क्र' अपरिवर्तित रहा।

४. व्यंजन-गुच्छ साधारण व्यंजन रह जाता है—

Studio [stju:diou] स्टूडियो [isṭu:ḍiju] ट्य के स्थान पर केवल 'ट्' रह गया।

५. नवीन व्यंजन-गुच्छ गृहीत हो जाते हैं—

Tweed [twi:d] ट्वीड [ṭwi:ḍ]

श्री रमेशचन्द्र महरोत्रा

शब्द-स्तर पर 'हो' का ध्वनि-प्रक्रिया-विचार

१.१. जिस भाषा का विश्लेषण प्रस्तुत लेख में किया जा रहा है, वह मुंडा परिवार की प्रमुख भाषाओं में से एक है। इस 'हो' नामक भाषा को मातृभाषा के रूप में व्यवहृत करने वाले व्यक्तियों की संख्या तीन लाख से अधिक, किन्तु साढ़े तीन लाखसे कम है; और इसके बोलने वालों में से अधिकतर लोग बिहार के सिंहभूम नामक जिले में बसे हुएहैं।

१.२. जिस व्यक्ति से सूचक (Informent) का काम लिया गया है, वह इस समय बीस वर्ष का एक साहू देवगाम नामधारी युवक है। वह अपनी मातृभाषा हो के अतिरिक्त हिन्दी भी बहुत अच्छी प्रकार जानता है। वह मुंडा परिवार की मुंडारी और संथाली भाषाओं को भी समझ लेता है, लेकिन उन्हें अच्छी गति के साथ बोल नहीं पाता। वह जिला सिंहभूम के जामकुंडिया नामक ग्राम का निवासी है। शब्द-संग्रह करते समय तथा शब्दों की पुन: पुन: जाँच के साथ अन्य प्रश्न करते समय सूचक के साथ हिन्दी भाषा को ही माध्यम के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

१.३. यह लेखकेवल तीन सौ पचास शब्दों की सामग्री पर आधारित है, और सूचक के साथपच्चीस घण्टे से अधिक समय काम किया गया है।

१.४. इस लेख में मुख्यतः खंडीय स्वनिमों (Segmental phonemes) पर विचार किया गया है। संस्वनों की स्थापना का भी प्रयत्न किया गया है। जो अंतिम निर्णय निकाले गये हैं, उनमें हेर-फेर की गुंजाइश तब तक नहीं है, जब तक कि इस भाषा के किसी दूसरे सूचक के साथ काम न किया जाय।

२.१. हो में व्यंजन स्वनिमों की संख्या २२ है, और स्वर स्वनिमों की ५। इनके अतिरिक्त १ स्वनिम दीर्घता का, और १ अनुनासिकता का भी है। बाद वाले ये दोनों स्वनिम खंडीय न होने पर भी सूची में सम्मिलित कर लिए गएहैं, जिसका कारण यह है कि ऐसा करने से हो के स्वरों का वर्गीकरण सरलतर हो जाता है, अन्यथा अनेक अन्य स्वर स्वनिम, नामार्थ सानुनासिक स्वर दीर्घ स्वर, और ह्रस्व स्वर, स्थापति करने पड़ते।

शब्दान्त की स्थिति में, नासिक्य व्यंजन के पश्चात्, एक सानुनासिक स्वर तथा शुद्ध (निरनुनासिक) स्वर में व्यतिरेक (Contrast) नहीं मिलता। तथ्यतः उस स्थिति में इन दोनों में मुक्त विभेद (free variation) है। शब्दान्त की ही स्थिति में दीर्घ स्वर और ह्रस्व स्वर के मध्य का व्यतिरेक लुप्त हो जाता है। शब्द-स्तर पर हो में सुर (pitch) स्वानिमिक नहीं है।

हो के खंडीय स्वनिमों की पूर्ण सूची नीचे दी जाती है—

व्यंजन—							स्वर	
अवरोधी								
(Obstruents) :	p	t	ṭ	c	k	ʔ	i	u
	b	d	ḍ	j	g		e	o
गुंजित		s			h		a	
(Sonorants)	m	n		ñ	ŋ			
		l						
		r	ṛ					
	(w)		(y)					

अखंडीय स्वनिम (non-segmental)

/ : /

/N/

२.२. व्यंजनों का विवरण—

२.२.१. सूची में दिए गए प्रथम पंक्ति के सब व्यंजन अघोष अल्पप्राण 'स्पर्श' और 'स्पर्श-संघर्षी' हैं। दो स्वरों के मध्य की स्थिति में इन सब व्यंजनों का अपना-अपना एक आतत और अपेक्षाकृत थोड़ा दीर्घ संस्वन आता है, जो कभी-कभी द्वित्व के रूप में सुनाई पड़ता है। यह संस्वन दीर्घ स्वरों के पश्चात् इतना आतत नहीं होता जितना कि ह्रस्व स्वरों के पश्चात्। इन व्यंजनों का विस्फोट स्वर के पहले होता है तथा ये किसी व्यंजन के पहले नहीं आते, अर्थात् ये ऐसे व्यंजन-गुच्छ नहीं बनाते जिनका पहला सदस्य इनमें से कोई एक व्यंजन हो। /t/ और /k/ शब्दान्त की स्थिति में प्राप्त नहीं होते। /p/, /ṭ/ और /c/ शब्दान्त की स्थिति में क्रमशः [b̥'], [ḍ̥'] और [j̥] (काकल्यित तथा अघोषित) रूपों में आते हैं। /p/, /t/, /ṭ/, /c/ और /k/ परस्पर व्यतिरेक में शब्दारंभ की स्थिति तथा दो स्वरों के बीच की स्थिति में आते हैं। ये व्यंजन किसी व्यंजन के बाद पाये तो जाते हैं, लेकिन बहुत कम; और किसी स्पर्श या स्पर्श-संघर्षी व्यंजन के बाद तो कभी नहीं।

/p/ द्वयोष्ठ्य स्पर्श, [p] शब्दारंभ में और व्यंजन के बाद, जैसे

/pi/ 'समतल'; /silpin/ 'दरवाजा';
[p·] दो स्वरों के बीच में, जैसे /supu/ 'बाँह';
[b'] शब्दान्त में, जैसे /dup/ 'बैठना'

।ṭ। दन्त्य स्पर्श, [t] आरंभ में, जैसे ।ti:। 'हाथ'
[t·] स्वरों के बीच में, जैसे ।hatom। 'चाची'

।ṭ। पश्च बर्त्स्य मूर्धन्य स्पर्श, जिसके संस्वन ।p। के संस्वनों के समान हैं,
[ṭ] जैसे ।ṭa:l। 'मेज़'
[ṭ·] जैसे ।kaṭa। 'टाँग'
[d̥'] जैसे ।meṭ। 'आँख'

।c। तालव्य स्पर्श-संघर्षी, जिसके संस्वन ।p। और ।ṭ। के संस्वनों के समकक्ष हैं,
[c] जैसे ।coke। 'मेंढक'
[c·] जैसे ।moca। 'मुँह'
[j̥'] जैसे ।dec। 'चढ़ना'

।k। कोमलतालव्य स्पर्श, [k] जैसे ।koḍo। 'बत्तख';
।ti:talka। 'हथेली';
।ḍa:k। 'डाक'
[k·] जैसे ।sakam। 'पत्ता'

।ʔ। काकल्य स्पर्श—[ʔ] को ।k। या ।h। का संस्वन मानने के बारे में विचार करना इसलिए निरर्थक है कि [ʔ] से [k] का, और [ʔ] से [h] का व्यतिरेक प्रदर्शित करने वाले शब्द-युग्म उदाहरणस्वरूप उपलब्ध हैं,

[ka:ʔ] 'कौवा' और [ḍa:k] 'डाक'
[raʔa:] 'रोना' और [mahal·i:] 'टोकरी'

।ʔ। का केवल एक संस्वन है [ʔ] ।

२.२.२. सूची में दिए गए दूसरी पंक्ति के सब व्यंजन प्रथम पंक्ति के व्यंजनों के सघोष प्रतिरूप हैं। ये भी व्यंजनों के पहले नहीं आते। व्यंजनों के पश्चात् ये आते हैं, पर स्पर्श व्यंजनों के बाद नहीं। ये सब शब्दारंभ तथा स्वरों के बीच में प्राप्त होते हैं। इनमें से कुछ शब्दांत में भी मिलते हैं लेकिन बहुत ही अल्प उदाहरणों में। संभव है कि अधिक सामग्री एकत्र करने पर ये पाँचों शब्दांत की स्थिति में पा लिए जायें। इनका अपना अपना एक ही संस्वन उपलब्ध है।

।b।—।ba। 'फूल'; ।ji:bon। 'हृदय'; ।ca:b। 'जँभाई लेना'
।d।—।diri। 'पत्थर'; ।sa:dom। 'घोड़ा'
।ḍ।—।ḍubuc। 'डूबना'; ।koḍo। 'बत्तख'; ।meṭkanḍom। 'भौं'
।j।—।ji:bon। 'हृदय'
।g।—।goc। 'मार डालना'

२.२.३. सूची में दिये गए तीसरी पंक्ति के व्यंजन संघर्षी हैं। ।s। आरंभ, स्वरों के बीच, तथा व्यंजन के पश्चात् की स्थितियों में प्राप्त होता है। इसके दो संस्वन हैं: पहला [s] बर्त्स्य समतल-पार्श्व (slit) संघर्षी है, और दूसरा [ʃ] बर्त्स्य उत्थित-पार्श्व (groove) संघर्षी है। ये दोनों मुक्त विभेद में हैं, लेकिन सब स्थितियों में नहीं।

कभी-कभी, और किन्हीं परिस्थितियों में सूचक इनमें से कोई एक, स्थिर रूप से एकसा उच्चारित करता है । अनुमान यह है कि इनके निश्चित बंटन के लिए बहुत परिश्रम और बहुत सामग्री के साथ काम करना पड़ेगा ।

।s।--।sir। [ʃir] 'नस'; ।ba:si। 'बासी'; ।kursi। 'कुर्सी'

।h। एक अघोष काकल्य संघर्षी व्यंजन है, जिसका एक सघोष संस्वन दो स्वरों के मध्य की स्थिति में आता है । यह शब्दान्त में, और किसी व्यंजन के साथ प्राप्त नहीं होता । उदाहरण हैं—।ha:ti। 'हाथी'; ।mahali। 'टोकरी' ।

२.२.४. गुंजितों में सबसे पहला नम्बर है चार नासिक्य व्यंजन-स्वनिमों का, जो इस प्रकार हैं:— ।m।, ।n।, ।ṇ। और ।ŋ। । यद्यपि । ।n̑। और ।ŋ। शब्दारंभ तथा v-v में नहीं मिलते, पर हो के चारों नासिक्य व्यंजन शब्दान्त की स्थिति में एक-दूसरे के व्यतिरेक में उपस्थित मिलते हैं । [ṇ] केवल अपने समरूपी (मूर्धन्य) स्पर्श की पूर्व-स्थिति में आता है, जहाँ कोई अन्य नासिक्य व्यंजन नहीं आता, इसलिए इसे पूरक बंटन (Complementary Distribution) तथा ध्वन्यात्मक साम्य (phonetic Similarity) के आधारों पर ।n।, [n] और [ŋ] में से किसी के भी साथ जोड़ा जा सकता है । अन्य स्थितियों की अपेक्षा, हो के नासिक्य व्यंजन, शब्दान्त की स्थिति में अधिक दीर्घ होकर आते हैं । हो के ये सब नासिक्य सघोष हैं ।

।m।—द्वयोष्ठ्य, जैसे ।meṭ। 'आँख'; ।rimil। 'आकाश'; ।i:m। 'तिल्ली'
।n। – [n] दन्त्य (दन्त्य स्पर्शों के पूर्व), जैसे ।hende। 'काला'
[ṇ] मूर्धन्य (पश्च बर्त्स्य; मूर्धन्य व्यंजनों के पूर्व), जैसे ।meṭkarḍom। 'भौं'
[n] बर्त्स्य (शेष स्थितियों में), जैसे ।nir। 'दौड़ना';
।bansi। 'मछली पकड़ने का काँटा';
।sen। 'टहलना'
[n̑]—तालव्य, जैसे ।bin̑। 'साँप'; ।muku n̑। 'धरू (homesick')
।ŋ।—कोमलतालव्य जैसे ।tiŋgu। 'समझना'; ।soŋ। 'नापना'

२.२.५. ।l। एक बर्त्स्य पार्श्विक स्वनिम है, जिसका मुख्य संस्वन [l] है जो ।u। और ।o। के बाद की, तथा शब्दान्त की स्थितियों को छोड़कर शेष स्थितियों में आता है; और उक्त स्थितियों में एक दूसरा संस्वन [ɫ] (कोमलतालव्यित) [l] मिलता है । शब्दान्त की स्थिति में आनेवाला [ɫ] अपेक्षाकृत अधिक दीर्घ होता है । उदाहरण हैं:—

।lutur। 'कान'; ।dudulum। 'पंडाकता'; ।rimil। 'आकाश'

२.२.६. ।r। के हो में दो संस्वन हैं—[r] 'बर्त्स्य लुंठित' और [ɹ] 'बर्त्स्य' संघर्षी' । ये दोनों मुक्त विभेद में हैं । ये दोनों संस्वन शब्दान्त की स्थिति में अपेक्षाकृत अधिक दीर्घ हो जाते हैं तथा उनका उत्तरार्ध कुछ अघोषित हो जाता है । उदाहरण हैं:

।rimil। 'आकाश'; ।buru। 'पर्वत'; ।sir। 'नस'

२.२.७. ।ṛ। हो में ।ḍ। से पृथक् एक स्वतंत्र स्वनिम है। इन दोनों का व्यतिरेक इस उदाहरण में देखिए—[gʌṛa:] 'सूखी भूमि' : [kʌḍɔ:] 'बत्तख' । इस स्वनिम का, मुख्य संस्वन [ṛ] से भिन्न, एक और संस्वन है [r̃] (मूर्धन्य नासिक्य उत्क्षिप्त, जो [n] के विरोध में होने के कारण ।n। में नहीं मिलाया जा सकता।), जो केवल ṽ — ṽ (दो सानुनासिक स्वरों के बीच की स्थिति) में आता है । इसे ।ṛ। बर्स्व्य उत्क्षिप्त) को सौंप कर हम एक नए स्वनिम की बचत कर लेते हैं । स्वनिम ।ṛ। शब्दारंभ और शब्दान्त में नहीं आता । उदाहरण हे :

।ha:ṛi। 'बहना'; ।l̃ ẽ ṛ ĩ ।[l̃ ẽ ṛ̃ ĩ :] 'विष्टा'

२.२.८. [W] और [Y] दो भिन्न व्यंजन स्वनिम माने जा सकते हैं, क्योंकि ये दोनों आपस में भी व्यतिरेक प्रदर्शित करते हैं (जैसे [jowa:] 'गाल': [doya:] 'पीठ' में), और हो भाषा के अन्य व्यंजन स्वनिमों से भी, द्विस्वरांतर्गत स्थिति मे, इनका विरोध मिलता है । लेकिन दूसरी ओर, चूँकि ये केवल V-V में आते हैं, जहाँ ।u। ।o। तथा ।i। ।e। नहीं आते, इसलिए [w] और [y] को क्रमशः ।u। या ।o। और ।i। या ।e। संस्वन रूप में सौंपा जा सकता है, जिसके लिए कसौटी होगी ध्वन्यात्मक साम्य, पूरक बंटन और स्वनिमों को बचत (Economy of phonemes) की । यदि हम ऐसा करते हैं, तो दो स्वरों के बीच में ।u। (या ।o।) का ध्वन्यात्मक मूल्य होगा [w], और ।i। (या ।e।) का ध्वन्यात्मक मूल्य होगा [y] । द्विस्वरांतर्गत स्थिति में ये स्वर-स्वनिम 'व्यंजनात्मक स्वर' कहे जाएँगे । उदाहरण:

[jowa:] ।joua। या ।jooa। 'गाल'; [sowan·] ।souan। या ।sooan। 'सूँघना' [ki:yx] ।ki:ia। या ।ki:ea। 'ओठ'; [doyx:] ।doia। या ।doea। 'पीठ' ऊपर २.१. की स्वनिम्-सूची में अर्ध-स्वरों को कोष्ठकों में रखा गया है, जिसका कारण यही है कि उन्हें स्वानिमिक रूप में स्वर भी माना जा सकता है ।

२.२.९. हो में व्यंजन-गुच्छ बहुत कम मिलते हैं । अधिकांश शब्दों में खंडीय स्वनिम व्यंजन और स्वर 'एक के बाद एक' रूप में आते हैं, अर्थात् वे शब्दों के रूप इस प्रकार बनाते हैं—vc, cv, vcv, cvc, vcvc, cvcv, cvcvc इत्यादि । वर्ण और शब्द स्वर या व्यंजन से आरंभ या समाप्त हो सकते हैं । एकत्र सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हो भाषा में कोई दो स्पर्श-व्यंजन साथ-साथ नहीं आते । मेरे पास इकट्ठी सामग्री, अर्थात् तीन सौ पचास शब्दों में केवल निम्नलिखित सात व्यंजन-गुच्छ हैं:

ns　　nḍ　　ṛg

lp　　lk

rm rs

इन गुच्छों में वर्ण-सीमा सदा व्यंजनों के बीच में पड़ती है ।

२.३. हो भाषा के स्वर स्वनिमों का हवाला उनके संस्वनों के साथ संक्षेप में इस प्रकार दिया जा सकता है—

।i। = [I] अग्र अगोलीकृत अर्ध संवृत से कुछ ऊँचा, उदाहरणार्थ
।sim। [sim·] 'मुर्गी'

[i] अग्र अगोलीकृत संवृत से कुछ नीचा, उदाहरणार्थ
।i:m। [i:m·] 'तिल्ली'। यह संस्वन केवल तब आता है, जब दीर्घता का स्वनिम इसके साथ हो।

।u। = [U] पश्च गोलीकृत अर्ध संवृत से कुछ ऊँचा, उदाहरणार्थ
।buꝛ। [bUꝛ] 'दरार'

[u] पश्च गोलीकृत संवृत से कुछ नीचा, उदाहरणार्थ
।pu:ꝛ। [pu:ꝛ] 'पत्तों से बना हुआ दोना'। यह संस्वन भी केवल तब आता है जब दीर्घता इसके साथ हो।

।e। = [e] अग्र अगोलीकृत अर्ध संवृत, केवल [y] [w] के पहले उदाहरणार्थ
।keya। [keyæ:] 'पुकारना'

[E] अग्र अगोलीकृत अर्ध संवृत और अर्ध विवृत के बीच के ऊँचाई का, शेष स्थितियों में, उदाहरणार्थ ।meṭ।[mEḍ̥'] 'आँख'

[ɛ] अग्र अगोलीकृत अर्ध विवृत, जब दीर्घता का स्वनिम इसके साथ हो, उदाहरणार्थ ।me:ṭ। mɛ:ḍ̥'] 'लोहा'

।o। = [o] पश्च गोलीकृत अर्ध संवृत, केवल [y] [w) के पहले, उदाहरणार्थ
।doya [doyæ:] 'पीठ'

[ɲ] पश्च गोलीकृत अर्ध संवृत और अर्ध विवृत के बीच की ऊँचाई का, शेष स्थितियों में, उदाहरणार्थ ।coke।
[cɲk·ɛ:] 'मेंढक'

[ɔ] पश्च गोलीकृत अर्ध विवृत, जब दीर्घता इसके साथ हो, उदाहरणार्थ
।bo:ꝛ। [bɔ:ꝛ] 'सिर'

[x] अग्र अगोलीकृत विवृत से कुछ ऊँचा, केवल [y] के बाद, उदाहरणार्थ
।ki:ya। (या ।ki:ia।, या ।ki:ea।) [ki:yx:]
'ओठ'

।a। = [a] शेष स्थितियों में आने वाला मध्य अगोलीकृत विवृत से कुछ ऊँचा, उराहरणार्थ ।jan। [jan·] 'सम्पर्क'। ।a। का एक

अन्य संस्वन जब दीर्घता के साथ आता है, तब बहुत सूक्ष्म रूप से अलक्षित सा विवृत की ओर झुक जाता है। यहाँ उसे पृथक् चिह्न देना आवश्यक नहीं है। उसका उदाहरण है—।ja:n। [ja:n·] 'कोई'

२.३.१. ऊपर २.१. में लिखा जा चुका है कि शब्दान्त की स्थिति में दीर्घ स्वर और ह्रस्व स्वर के मध्य का विरोध लुप्त हो जाता है। उस स्थिति में ध्वन्यात्मक रूप से तो स्वर दीर्घ ही होता है, किन्तु वहाँ की दीर्घता को मैंने स्वानिमिक न मानकर, स्थित्यनुकूलित माना है।

२.४. दीर्घ स्वर तथा ह्रस्व स्वर के मध्य व्यतिरेक केवल (c)vc में पाया जाता है, अर्थात् हमें (c)v̄c तथा (c) ᵛc दोनों ही हो भाषा में प्राप्त होते हैं, जैसे

।u:r। 'खाल': ।ur। 'खोदना'

।go:ƨ। 'गर्भवती': ।goƨ। 'कंधों पर भार-वहन करना'

दीर्घ स्वर अपने ध्वन्यात्मक रूप में सबसे लंबे तब होते हैं, जब वे cv या vc में आते हैं।

२.५. [r ĩ :] 'उधार लेना': [bi:] 'खूब छक कर खाना', तथा [h ã :] 'खुर' : [ba:] 'पुष्प' जैसे शब्द-युग्म इस बात को बल देते हैं कि हो में अनुनासिकता का एक स्वतंत्र स्वनिम स्थापित किया जाना चाहिये। स्वर का यह अनुनासीकरण किसी नासिक्य व्यंजन को (उसका कोई संस्वन बनाकर) नहीं सौंपा जा सकता, क्योंकि यह उससे व्यतिरेक प्रदर्शित करता है, उदाहरणार्थ ।s õ। [s ɔ̃:] 'फुफकारना': ।soŋ। [sɔŋ·] 'नापना'। अनुमेय अनुनासिकता (predictable nasalization) (देखिए २.१.) के लिए उदाहरण है—।nu। [n ũ:] 'पीना'।

अगरचन्द नाहटा

कवि लक्ष्मीचन्द रचित आगरा गजल

भारतीय ग्राम-नगरों का इतिहास अभी तक बहुत ही कम लिखा गया है। यद्यपि उसके लिए साधन सामग्री व्यवस्थित रूप में तो नहीं मिलती फिर भी शिला-लेखों, ग्रन्थ—-प्रशस्तियों, लेखन-पुष्पिकाओं तथा ऐतिहासिक ग्रन्थों आदि में काफी सामग्री मिल जाती है। उस बिखरी हुई सामग्री को इकट्ठी करने से बहुत से तथ्य प्रकाश में आ सकते हैं। प्राचीन ग्रन्थों में जिन ग्राम नगरों और वहां के चैत्य, उद्यानों आदि के उल्लेख मिलते हैं उनमें से बहुत से नाम पीछे से परिवर्तित हो गये, बहुत से ग्राम-नगर उजड़ गये, युद्ध में नष्ट कर दियें गये। उन स्थानों पर नये बसाये गये। इन सब कारणों से प्राचीन स्थानों का पता लगाना, निर्णय करना अब बहुत कठिन हो जाता है फिर भी खोज करने पर बहुत सी बातें स्पष्ट हो जाती हैं। आवश्यकता है बिखरी हुई सामग्री को एकत्रित करके गम्भीर अध्ययन, विवेचन, सूझ-बूझ और विवेक के साथ तथ्य को उद्घाटित करने की। जनश्रुतियों का भी उपयोग किया जा सकता है। पर उसमें अधिक सावधानी रखने की आवश्यकता होती है।

जैन-साहित्य में ग्राम-नगरों के इतिहास की सामग्री, अपेक्षाकृत अधिक, महत्वपूर्ण और विश्वसनीय मिलती है क्योंकि जैन मुनियों का प्रारम्भ से ही 'पैदल-विहार' एक आचार-विशेष रहा है। धर्म प्रचार और तीर्थ यात्रादि के लिए जैन साधु-साध्वी निरन्तर घूमते रहते हैं। केवल चातुर्मास में वर्षा और जीवोत्पति की अधिकता के कारण एक जगह पर चार मास तक रहने का विधान है, अन्य आठ महीनों में उन्हें पैदल विहार करते रहना ही चाहियें। चूंकि जैन तीर्थ स्थान और श्रावकों का निवास भारत के प्राय: सभी प्रान्तों में रहा, इसलिए जहां जहाँ जैनों के घर थे—जैन साधु-साध्वी पहुंचते और वहां धर्मोपदेश के अतिरिक्त ग्रन्थों का निर्माण और लेखन भी समय समय पर करते तथा मंदिरों व मूर्तियों की प्रतिष्ठा होती थी। गच्छ नायक आचार्य अपने आज्ञावर्ती साधु-साध्वियों को कहां कहां चातुर्मास करना है, इसके लिए 'आदेश पत्र' भेजते और अपने पास एक पट्टक में किस किस प्रदेश के किस ग्राम में कौन मुख्य साधु व साध्वी कितने शिष्य आदि के साथ चातुर्मास करने भेजे गये हैं इसका विवरण लिखके रखते। जब आचार्य स्वयं 'देश वंदाने' को—अर्थात एक प्रांत के अनेक ग्रामादि स्थानों के श्रावकों का वंदन

स्वीकार करने के लिए जाते तो अपनी दफ्तर-बही में कौन से गांव में कौन कौन से मुख्य श्रावक हैं और उन्होंने क्या भक्ति की, इसका विवरण लिखा के रखते थे। इसी तरह श्रावकों की वंशावलियां लिखने वाले कुलगुरु, महात्मा व भाट लोग, उनको मानने वाले वंश के लोगों की वंशावलियां लिखते थे। उसमें किस वंश का कौन सा परिवार कहां जा के बसा, उस स्थान का भी नाम लिखा जाता था। उपरोक्त ऐतिहासिक साधनों में भारत के हजारों ग्राम-नगरों के उल्लेख सुरक्षित हैं। उतने स्थानों का पता लगाना भी हमारे लिए कठिन समस्या हो गई है। प्राचीन जैन आगमों से लेकर अब तक के जैन-साहित्य में भारत की बहुत ही मूल्यवान भौगोलिक सामग्री सुरक्षित है। तीर्थों के लिए पैदल संघ (साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका) चलते, उसमें भी कहां से संघ रवाना होकर कहां कहां होता हुआ किस तीर्थ को गया और मार्ग के स्थानों में कितने और कौन से तीर्थंकरो की मूर्तियों के दर्शन किये, ऐसे संघ-यात्रा के भी अनेक विवरण लिखे गये हैं। तीर्थ मालाएं एवं चैत्य परिपाटियाँ तथा पट्टावलियों, गुणावलियों आदि विविध प्रकार की रचनाएं प्राप्त होती हैं। इनमें से कुछ प्रकाशित भी हो चुकी हैं। इस संबंध में 'जैन साहित्य का भौगोलिक महत्व' शीर्षक मेरा लेख प्रेमी अभिनंदन ग्रन्थ' में प्रकाशित हो चुका है।

उपरोक्त साधनों के अतिरिक्त १७वीं शताब्दी से तो नगरों के वर्णन वाली गजलें भी बहुत सी जैन-कवियों ने बनाई है। प्राप्त नगर-वर्णनात्मक गजलों में कवि जटमल नाहर की लाहोर गजल सबसे पुरानी है। जिसकी रचना संवत् १६७५ के लगभग हुई है। उसके पश्चात् तो अनेक नगरों और कई देशों के संबंध में गजलें एवं छन्द रचे गये, जिनकी संख्या ५० से भी अधिक है। उनका कुछ विवरण मैंने अपने "राजस्थान में हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज" के दूसरे भाग में प्रकाशित किया है। और कुछ रचनाएं भी मरु भारती में प्रकाशित की जा चुकी हैं। जब मैंने ऐसी नगर वर्णनात्मक गजलों का संग्रह करना प्रारंभ किया तो मुनि कांतिसागर जी ने उनको प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की। कुछ गजलों की प्रतियां तो उनके संग्रह में होंगी पर जब मुझे मेरी संग्रहीत सामग्री को भी दे देने को कहा तो मैंने उन्हें सब सामग्री भेज दी। उनमें से जब वे कलकते थे (सन् १९४८ में) लाहौर, चित्तौड़, उदयपुर, गरोठ, बीकानेर, आगरा, बंगाल, गिरनार और नागौर इन नव स्थानों की गजलें 'श्री नगर वर्णनात्मक हिन्दी पद्य सग्रंह' नामक ग्रन्थ में प्रकाशित की थी। इस ग्रन्थ के दूसरे भाग में सु-विस्तृत प्रकाश डाले जाने की सूचना दी गई थी—पर वह दूसरा भाग अब तक प्रकाशित नहीं हो पाया। बीच में जब कांतिसागर जी आगरे पधारे थे तब मुझे कहा था कि प्रकाशक तैयार कर लिया है अतः सब गजलों का एक बड़ा संग्रह निकाल रहा हूँ। पर पता नहीं वह संग्रह प्रकाशक के पास ही रह गया या मुनि जी के पास है। 'राष्ट्र भारती' में कांति सागर जी का इस संबंध में एक निबंध अवश्य छपा था।

नगर-वर्णनात्मक बहुत सी गजलों की छन्द, भाषा और शैली प्रायः एक ही प्रकार की है। भाषा हिन्दी है, पर गजलों के निर्माता बहुत से कवि राजस्थान के थे इसलिए राजस्थानी का प्रभाव भी इन गजलों में पाया जाता है। उपरोक्त 'हिन्दी पद्य संग्रह'

में हमारे संग्रह की प्रति के आधार से 'आगरा की गजल' भी छपी थी पर उस समय हमारे संग्रह में जो प्रति थी उसमें कई जगह उदेइ के खा जाने से पाठ त्रुटित रह गया था। अतः उपरोक्त ग्रन्थ में वे उसी रूप में छप गये हैं। उसके पश्चात् आगरा गजल की एक पूरी प्रति भी प्राप्त हो गई अतः दोनों प्रतियों के आधार से पाठ संशोधित करके यहां उसे पुनः प्रकाशित किया जा रहा है। इस गजल की रचना खरतर गच्छीय यति लक्ष्मी-चन्द ने संवत् १७८० के अषाढ़ सुदी १३ को की है। हमारे संग्रह की पहली प्रति संवत् १७८५ के द्वितीय वैसाख बदी १ को बीकानेर में कवि की स्वयं लिखी हुई है। इस गजल में आगरे के अनेक बाजारों और उल्लेखनीय प्रसिद्ध स्थानों का महत्त्वपूर्ण वर्णन है। कवि ने उसका-आँखों देखा वर्णन बड़ी सूक्ष्मता और सुन्दरता के साथ किया है। वे स्थान अब किस रूप में हैं ? इसका विवरण तो कोई स्थानीय जानकार व्यक्ति ही बतला सकता है। इसलिए आगरा के निवासी और बहुत घूमने फिरने वाले व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि इस गजल में वर्णित स्थानों के संबंध में विस्तार से प्रकाश डाले।

आगरे का कोई इतिहास प्रकाशित हुआ तो वह मेरे देखने में नहीं आया पर जैन शिलालेखों, प्रशस्तियों, तीर्थ मालाओं और ऐतिहासिक ग्रन्थों में आगरे के प्रचुर उल्लेख और कुछ विवरण प्राप्त होते हैं। १६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से गीतों, शिला-लेखों और प्रशस्तियों में आगरे के उल्लेख मिलने प्रारम्भ होते हैं। कई शिलालेखों में उसका संस्कृत नाम 'उग्रसेनपुर' और 'अर्गलापुर' भी पाया जाता है। प्रस्तुत गजल में 'अकबराबाद' का भी उल्लेख है जो सम्राट् अकबर के नाम से पड़ा है। वास्तव में सम्राट् अकबर की कुछ वर्षों तक यहां राजधानी रहने के कारण ही इसकी इतनी प्रसिद्धि और समृद्धि बढ़ी है। कविवर बनारसीदास ने अपनी आत्म-कथा में आगरे का उल्लेख किया ही है पर और भी बहुत से दिगम्बर-कवि और धर्म तथा साहित्य-प्रेमी व्यक्तियों ने आगरे का उल्लेख किया है। इसके संबंध में कुछ चर्चा मैं अपने अन्य लेखों में कर चुका हूँ। श्वेताम्बर समाज के भी सोनी गोत्रीय हीरानंद, कुंवरपाल और सोनपाल आदि बड़े प्रसिद्ध व्यक्ति हो गये हैं। कई जैन मुनियों ने यहां से तीर्थ यात्रा आरम्भ की जिसका विवरण उनकी तीर्थ मालाओं में पाया जाता है। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों समाज के यहां काफी घर और बहुत से मंदिर हैं। १७वीं शताब्दी के दिगम्बर कवि भगवतीदास ने आगरे के जैन मंदिरों का विवरण अपनी एक रचना में दिया है जो कि उनकी अन्य रचनाओं के साथ एक गुटके में लिखी हुई, अजमेर के दिगम्बर भट्टारकीय भंडार में सर्वप्रथम मेरे देखने में आई। मैंने वह गुटका उसकी नकल के लिए अलग रखवाया था तद्नंतर श्री परमानंदजी शास्त्री अजमेर पधारे तो उन्होंने उसकी नकल करली और 'जैन सन्देश' के शोधांक ५ में अपने 'जैन साहित्य में आगरा' नामक लेख में उसे प्रकाशित भी कर दिया है। वह रचना १७वीं शताब्दी के आगरे के जैन मंदिरों पर बहुत ही महत्वपूर्ण प्रकाश डालती है। पं० परमानंदजी के सूचनानुसार उसमें आगरे के ४८ जैन मंदिरों का विवरण है। प्रारम्भ में ही शाहजहां सुलतान का उल्लेख होने से उसी के राज्यकाल में वह रची गयी सिद्ध होती है। यद्यपि परमानंदजी ने उसे संवत् १६५१ में रचित बताया है पर वह सही प्रतीत नहीं होता, संवत् १६९१ सम्भव है।

जो भी हो आज तो उतने जैन मंदिर आगरे में नहीं हैं और जो हैं उनमें भी कई तो उस रचना के बाद के बने हुए हैं इसलिए उस समय के कई जैन मंदिर सम्भवतः औरंगजेब के जमाने में नष्ट हो गये उनका भी विवरण कवि भगवतीदास की 'अर्गलपुर जिन देवता' नामक रचना में सुरक्षित रह गया है यह भी बहुत महत्व की बात है। श्वेताम्बर मंदिरों का कुछ अधिक विवरण प्रस्तुत 'आगरा गजल' में मिलता है। अभी मैंने श्री जवाहर लाल जी नाहटा से आगरे के श्वेताम्बर मंदिरों संबंधी पूछताछ की तो उन्होंने अभी आगरे में ९ श्वेताम्बर मंदिर और २ चैत्यालय विद्यमान होना बतलाया है। १ चिंतामणि पार्श्वनाथ मंदिर, हीरविजय सूरि प्रतिष्ठित, २ श्रीमंदिर स्वामी मंदिर चन्द्रपाल जी का, ३ शांतिनाथ जी का, भवानीदास लोढ़े का, ४ गोंड़ी पार्श्वनाथ, चन्द्रपाल जी का, ५ वासुपूज्यजी का मंदिर प्राचीन है, ६ केसरिया नाथ जी आदिश्वरजी का, रणधीर विजय प्रतिष्ठित, ७ सूर प्रभु जी, ८ सुपार्श्वनाथ जी, बेलनगंज में लक्ष्मीचंद बैद ने बनाया जो विजयेन्द्र सूरि प्रतिष्ठित है, ९ महावीर जी दादावाड़ी में, जिसे सेठ का बाग भी कहते हैं, १० नेमनाथ-जी, देरासर, हींगमंडी, ११ वीरचन्द जी नाहटे के घर का देरासर। इनमें से चिन्तामणि पार्श्वनाथ मंदिर और श्रीमंदिर का मंदिर रोशन मोहल्ला में है, सूर्यप्रभस्वामी, गौडी-पार्श्वनाथ जी, वासुपूज्यजी, केसरिया नाथ जी ये चार मंदिर मोतीकटरा में, श्री नेमिनाथ मंदिर हींगमंडी, शांतिनाथ मंदिर नमकमंडी में है। इनके तथा दादाबाड़ी (शाहगंज) के प्रतिमा-लेख स्वर्गीय पूरणचन्द जी नाहर के 'जैन लेख संग्रह' द्वितीय खंड में प्रकाशित हो चुके है। चिंतामणिजी मंदिर के शिलालेख में जिस भवानी विजय रचित सवैया कुंडलिया हैं उस कवि भवानीदास की रचनाओं के संबंध में मेरा एक लेख 'साहित्य सन्देश' में प्रकाशित हो चुका है। चिंतामणि जी मंदिर आदि के संबंध में सौभाग्य विजय रचित तीर्थ माला की पहली ढाल में इस प्रकार उल्लेख मिलता है। उन्होंने अपनी तीर्थ यात्रा संवत् १७४६ में आगरे से ही प्रारम्भ की थी।

> अधिक प्रताप **आगरे** सोहे, श्री **चिंतामणि** जग मन मोहे।
> संवत् सोलसें ओगणचालीसई, श्री गुरू हीर विजय सुजगीसई ॥
> कीधी प्रतिष्ठा पासजि सार, खरचे धन साह **मानसिंघ** उदार।
> ते **चिंतामणि** पासजि स्वामी वन्दया **आगरे** आणंद पामी ॥७॥
> चोमुख महीयल मांहि **प्रसिद्धो, चंद्रपाल** संघविये कीधो।
> श्री **श्रीमंधर** वन्दू पाया **हीरानन्द** मुकीम भराया ॥
> संकट भंजन **पास** विराजे, **लगा तणी बाजारे** छाजे।
> **मोती कटले** बन्दो पाया, **वासुपूज्य** जिनवर मन भाया ॥

सुप्रसिद्ध जैनाचार्य हीरविजय सूरि सम्राट अकबर से संवत् १६३९ में आगरे में मिले थे और उसके १० वर्ष बाद जिनचंद सूरि लाहोर में। संवत् १६६९ में सम्राट जहांगीर ने जैन मुनियों के निष्कासन की आज्ञा जारी की थी उस समय युग प्रधान जिनचंद सूरि ने आगरे आकर जहांगीर को समझाकर वह आज्ञा रद्द करवाई थी। इससे पहले सम्राट् सिकन्दर के समय जिनहंस सूरि आगरे पधारे थे और उनके प्रवेशोत्सव का ठाठ देखकर बादशाह चमत्कृत हुआ था जिसका विवरण हमारे 'ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह' में

प्रकाशित श्री जिनहंस सूरि गुरु गीतम् में मिलता है। यह घटना संवत् १५६० और १५८० के बीच की है। संवत् १६२५ में खरतर गच्छीय उपाध्याय साधु कीर्ति और तपागच्छीय बुद्धिसागर के साथ सम्राट् अकबर की सभा में आगरे में शास्त्रार्थ हुआ था उसका भी विवरण हमारे उपरोक्त 'ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह' में प्रकाशित 'जइतपद बेलि' और 'जयपताका गीत' में मिलता है। इसी तरह अनेक प्रसंगों का उल्लेख जैन साहित्य में प्राप्त है जिनके संग्रह से आगरे के इतिहास के कुछ सूत्र अच्छे रूप में मिल जाते हैं। मुसलमानी तवारीखों तथा अन्य अनेक ग्रन्थों में भी आगरे के संबंध में काफी सामग्री मिलेगी।

कुछ महीने पूर्व मैं हिन्दी विद्यापीठ, आगरा के हस्तलिखित ग्रन्थ संग्रहालय के कमरे में गया तो वहाँ पं० उदय शंकर शास्त्री ने आगरे का एक प्राचीन नक्शा मुझे दिवार पर लगा हुआ दिखाया उससे भी आगरे के बहुत से स्थानों के संबंध में महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है। सब सामग्री के आधार से आगरे का इतिहास शीघ्र तैयार करवाया जाय, यह हिन्दी विद्यापीठ के शोध संस्थान से अनुरोध किया जाता है।

अथ आगरा की गजल

सरसति मात सुभ वानीक, देहो दासकुं जानीक।
अकब्बराबाद की टुक आज, उत्पति कहतु है कविराज ॥१॥
अकबर साह जी गुणधाम, रमते नीकले इहठाम।
इहाँ एक देखिया पासाक, **अकबर** साह तमासाक ॥२॥
गीदर सेरकुं झालेक, ठाढ़े पातिसाह भालेक।
हजरत लोककुं ऐसीक, पूछे बात ए कैसीक ॥३॥
सुकनी लोक यूं बोलेक, जम्मी एह वर तोलेक।
इहां एक शहर वसाउंक, तो तुम सुजस अति पाउंक ॥४॥
अकबर साहजी घरनेह, **अकब्बराबाद** ए गुणगेह।
और न शहर को एसोक, वसायो साहने तेसोक ॥५॥
लोकन कहत हैं जैसेंक, उत्पत्ति शहर की ऐसेक।
अब कछु शहर का वर्नाव, सुनियो करत हुं धरि भाव ॥६॥

चालगजल

किल्ला खूब है वंकाक, जैसीं समुंद में लङ्काक।
सींगी बद्ध है सब काम, देखत लगत है अभिराम ॥७॥
मुशंवन श्याह बंगारीक, बुराजां तीन है सारीक।
तिनपें तोप है सिरदार, अटकादिक जानियो सुविचार ॥८॥
हथिया पोल 'है' आगेंक, घुलिहुं धानिया जागेंक।
किल्ला मांहि है '**महजीत, जुम्मा**' नाम की शुभरीत ॥९॥

पाईवाग है खासाक, देख्या होत उल्लासाक ।
मोती दर्वजे सब थोक, आगे पातिशाही चोक ॥१०॥
ता मधि लगतु है गुदरीक, चीजां है सर्व खुदरीक ।
ठाढ़े बोलते दल्लाल, लीजै साहिवा कुछ माल ॥११॥
हीरा लाल अरु चुनीक, तुमकुं देत हूँ दूनीक ।
कपरे वाल के दलाल, वेपन कहत है अतिभाल ॥१२॥
केई धोती रूमाल, बेचत फिरत है नर लाल ।
केइक रींछ भिर वावेंक, नउले सांप लखावेंक ॥१३॥
केइ चित्र के चित्रांम, ठाढ़े चेढिके सुभ नाम ।
केइक काढि के समशेर, बेचत ग्राहके तब हेरि ॥१४॥
कोऊ कहत हें रेजाक, पईसे काढ़ि के लेजाक ।
नकलां करत है कोउ भांड, बनीये तोलते केई खांड ॥१५॥
गुदरी लगत है **अैसीक**, वरनु कांहलु तैसीक ।
नवि संदें लिखत है ओलाक, आगे खास **तिरपोल्याक** ॥१६॥
सिंगी वद्ध है हाटाक, वेचत चीज नर थाटाक ।
छुरिया लेखिना खरियाक, डबा कुँपला धरियाक ॥१७॥
ता विच खड है **महजीत**, बेगम **राजि** की सुभरीत ।
ताका काम है सिरदार, वरनत वढ़त है विस्तार ॥१८॥
तिनके आगले सुविचार, वडां वसतु है बाजार ।
दशता काढ़ि कें हजार, करत हैं कागजी व्यापार ॥१९॥
पीला लाल अरू हरीयाक, अपनी हाट में धरीयाक ।
तिसके पास ही सुनियार, **पसारी-हट्ट** है वाजार ॥२०॥
दारू खूवसा देवेंक, पइसा मांगिके लेवेंक ।
सबही चीज तहाँ मिल्लेक, तांबो चाहिए पल्लेंक ॥२१॥
आगलि हाट है सारीक, चोहटा खूब किनारीक ।
तिसके आगलें वाईक, बैठे बोहत हलवाईक ॥२२॥
वेचें खूब से पकवान, ले ले जातु हैं नर जान ।
ता बिच खूब वसवाईकि, **गलि हलवाई** की पाईक ॥२३॥
आगे ताहुका छाजेक, **'महोला-रोसन'** का वाजेक ।
ता मधि खुब है चोसाल, **तप्पागच्छ** की पोसाल ॥२४॥
चारहु खंड है नीकाक, सोहत सहर सिर टीकाक ।
जहां नित होत है बखांन, श्रावक सुनत है गुणवान ॥२५॥
पासही देहरा राजैक, जिहाँ प्रभु **पास**की छाजैक ।
अकब्बर सांह कै वारेंक, **श्रीबीजै-हीर** पउधारेंक ॥२६॥
चिन्तामणि पासकी ज्यारेंक, प्रतिष्ठा कीनी है त्यारेंक ।
सदानन्द साहजी गुनगाह, कीना पासका उच्छाह ॥२७॥

चिन्तामणि बहोत खासाक, पूरे चित की **आसाक** ।
च्यार निकाय का देवाक, जाकि करत है **सेवाक** ॥२८॥
स्वामी **सीमंधर** राजेंक, मूरति खूबसी **छाजेंक** ।
साध जु साधवी गुनवान, श्रावक श्राविका **शुभजान** ॥२९॥
नित प्रति भावना भावेंक, अपना कर्म **खपावेंक** ।
गली हलवाई की आगेंक, **जूंहरी चोहटा** जागेंक ॥३०॥
आपन आपनी दुक्कान, बैठे हा पै सुजान ।
कोई मोतियां पोवेंक, हीरा चूनीयां जोवैंक ॥३१॥
केई चीजकुं तोलेक, केइक मोगणि **बोलैंक** ।
केई ग्राहक कु मोलेक, पइसा गांठि से खोलेक ॥३२॥
ठाढ़े बोहतमे दल्लाल, बेचत **फिरत है निजमाल** ।
आगै खूब से बिसतार, **सराफा हट्ट** है सिरदार ॥३३॥
मोहरां वहुत सा रूपियाक, बेचन वासते थपियाक ।
तिनुके बीचमें सुविशाल, खासा बसत है **टंकशाल** ॥३४॥
आगे **चबूतरा** छाजेंक, चौरां देखते **भाजेंक** ।
ठाढ़ा लालखां लकराक, चोर पकरि कै जकराक ॥३५॥
कुंहारा करवती परियांक, चोरा देखते डरियाक ।
मढ़ढी हींग की आगेंक, तहां तो हींगही **पागेंक** ॥३६॥
आगे वसत है सुविचार, थोरी दूर में **मनिहार** ।
तिनकै आगलै **सुनिसार, मुंगा** वसत है बाजार ॥३७॥
कटरा ताहुका जानोक, मुंगा चाहता **आनोक** ।
कटरा मोतियां का सार. सोई कहत है नरनार ॥३८॥
आगे वसत है सो अब धार, नूतन खास है अंबार ।
तिसके आगलै सुविशाल, ढ़ोली वहत है **जहां खाल** ॥३९॥
आवत जा दिनें नालाक, उतर नहुं सकें **पालाक** ।
तिसके पासही जानोक, **मढ़ढी नाईकी** मानोक ॥४०॥
जिहांका खुब है बाजार, सबही चीज है तैयार ।
ऊजड़ बीच है कुछ राह, आगलि खाम है **गंजस्याह** ॥४१॥
बाई **जोधका** तिहां बाग, ता मझि होत है सब साग ।
श्री **जिनकुशल** सूरि की विचार, थूंमके पास कही सिरदार ॥४२॥

दोहा

चबुतरा से लेयके, वरन्यो इहालुं एह ।
अब आगलि बाजारकी, गजल सुनो धर नेह ॥४३॥

चालगजल

जानहु **चबूतरा** आगेक, **कुसेरा-हट्टहूं** लागेक ।
केइ करतहुं जाल्यांक, कोउ घरत है **थाल्यांक** ॥४४॥

लोटया तासकां गड्डीक, जानो हाटसे मढ्ढीक ।
नहचे श्रागले सरचैक, गाहक जानिके खरचेक ॥४५॥
सादा रेशमी करियाक, सोने तारसें जरियाक ।
तिसके श्रांगले ताजीक, पैया करत है साजीक ॥४६॥
दुना मोल हुं लेवेंक, पीछे पैया देवेंक ।
श्रागे वैठीकैं मोचीक, वैचे जूतिया सोचीक ॥४७॥
जूती चाहिए जैसीक तहां ही मिलत है तैसीक ।
सुनिए **सेउका बाजार,** ताका बहुत है विस्तार ॥४८॥
तहां सब चीज को है साज, बहुला बसत है बजाज ।
श्रागे फलहटी राजेंक, सबही भाँति सै छोजेंक ॥४९॥
छारछू दरवाजा मोटाक, दोन्यु खास है कोटाक ।
बारे साहका बंगलाक, श्रोर चिहुँ श्रोट है जंगलाक ॥५०॥
तिनके श्रागले राजेक, ऊंचा महल श्रति छाजेक ।
राजा **भदोरीयाका** तेह, लोका कहत है धरि नेह ॥५१॥
श्रोर भी सहर है कितनाक, मैंने वरनव्या इतनाक ।
पयली तरफ का विस्तार, कछु इक कहतहुं सुविचार ॥५२॥

दोहा

श्रागै सोहत खूब सा, **छीपी पारा** नाम ।
जा मभि छीपै करत है, छीपा ही को काम ॥५३॥
छीपींपारा श्रागले, **हजरति-मढ़ि** जानि ।
ताके श्रागे वसतु है, **कुतलुपुर** शुभथानी ॥५४॥
साहीजांदी मढ्ढीबसै, सैहर वाहिर जाम ।
उहा पण लोकां रहतु है, जाके घर बहुदाम ॥५५॥
लुण तणी मंढ्ढी बसेंतिहां, श्राहि निसि लूण विकाय ।
चीड़ीमारटोला बसे, लोकन कुं सुखदाय ॥५६॥
नांलांकीमंढ़ी वसै, नाला ही के पास ।
तिहां सबही सुखिया सदा, सहुकोकरै विलास ॥५७॥
ताजगंज सोहे सदा, तामे वड बाजार ।
रोजा साहिजिहान का, ताका बड़ा विस्तार ॥५८॥
महाराजा **जसवन्त** को, **पुरो** वसे **जसवन्त** ।
लोकन है सुखिया सदा, ध्यावत श्री भगवन्त ॥५९॥
राजा श्री **जसवन्त** को, पूरो वसे सिरदार ।
ता मभि तिनुकाई रहै, हाकिम श्ररू हुजदार ॥६०॥

गजल

सहिर श्रागरा सब मोर, काहलुं वरनवुं सब ठोर ।
वरनत पार नहु पावेंक, कवि जन काहलुं गावेंक ॥६१॥

ता मझि वसत है सब लोक, नाठे जातु है दुख सोग ।
श्रावक लोक है गुणवान, ध्यावत अहिनिसै भगवान ॥६२॥
उर मझि आसता आनीक, नित प्रति सुनत जिनवानीक ।
ब्राह्मण वसतु है सुखसैक, वेदहु उच्चरै मुखसैक ॥६३॥
घर मझि मिलत है सबसूत, बहुला वसत हैं रजपूत ।
क्षत्रिय कायथां जानोक, गुजर जाट हुं मानोक ॥६४॥
खाति भीलरा भंगिक, घोरी मेरडा थंगाक ।
भोजग भाट है भारीक, आसीस देत है सारीक ॥६५॥
धोबी ढ़ेढ़ जु चम्मार, लोहेदार अरू सोनार ।
आपन आपना व्यापार, सवही करत है सुविचार ॥६६॥
ओपध जानवा सारीक, वेचत बोहतहै पंसारीक ।
कपडा काढ़िकै शिरताज, बैठे हाटपै बजाज ॥६७॥
झिल मिल मोमती तीनीक, खासा वाफता चीनीक ।
थिरमा डोरीया चीराक, मोल लेत हैं अम्मीरांक ॥६८॥
नवरंग जेबिया सालूक, मुखमल बोहत रस्सालूक ।
छींटा इलायची आसूक, सक्कर खीर है मासूक ॥६९॥
गांधी देत है गहराक, चोवा अरगजा सहराक ।
चोहटा खूब असंबोईक, लेवे लोक हरि कोइक ॥७०॥
नागरि बेलकि हरियाक, बीडा बांध कै धरियाक ।
बैठे बोहत तम्बोलिक, लेवे दाम भरी झोलीक ॥७१॥
वैदिक शास्त्र में जानेक, वेद सब रोग पहिचानेक ।
रोगी बहोत से आवेंक, चंगे सताब हुय जांवेंक ॥७२॥
धोबी नीरकु छानेक, कपडा धोय करी आनेक ।
जूती खास करी मोचीक, वेचत चितमां सोचीक ॥७३॥
सोना घरत है सोनार, पींपीं पीनते पीन्नार ।
डबगर ढाल रंगीलेक, खरचें गादका मीलेक ॥७४॥
तुनत खास तुन्नाराक, कटिया कप्पडा साराक ।
सिक्का बांधकै पानींक, पावै चोहटे आनींक ॥७५॥
वणकर वणत अति खासाक, कपड़ा बहोत सुविलासाक ।
चोकी घरत है सुतार, भाजन करत है कुंभार ॥७६॥
वेचत फिरत है वोहरीक, आला आरीया तोरीक ।
चिडुआ तुरतका ताजाक, सकर लाडुआ खाजाक ॥७७॥
मेवा सेव अरू केलाक, मोलत लोक होय भैलाक ।
वेचत कुंजडे झोलाक, इहविधि कहत है चीजाक ॥७८॥
मेथी तीइसी केलाक, बेचत कुंजडे झोलाक ।
इह विधि कहतहै चीजेंक, मौलत कौनहु खीजेंक ॥७९॥

किल्ला पास सुविलासीक, **यमुना** बहत है खासीक ।
मानुं एहहीं दरीयांक, उज्जवल नीरसे भरीयाक ॥८०॥
यमुना मात है ढ़ावेंक, लोकन बहोत न्हावेंक ।
बुरजहु स्यांह कै पांसेक, न्हावत लोक सुविलासेक ॥८१॥
कोई मोखके हैनेंक, कोई गोता खातु है तेतेंक ।
केई डील ही है काज, कोई मान के कुल लाज ॥८२॥
यमुना पार पुर छाजेंक, **पारंका आगरा** वाजेंक ।
पार ही तीन हैं शुभवाग, थोरा देखने का लाग ॥८३॥
मोतीवाग मे सुभचोज, सावन भादवा की भोज ।
अचानक बाग है ऐसीक, बरनव कीजिए केसीक ॥८४॥
जा...बाग है तीजाक, जैसा और नही वीजाक ।
में ए वरनवां जितनीक, वसती पार है इतनीक ॥८५॥
पारै पुहचीया चावेंक, नावै बैठिकै जावैंक ।
सुबा खूब है ताजाक, जिहां सवाईसा राजाक ॥८६॥
देवै जगत दुःख खोवाक, दीना जाहुकुं सुवाक ।
वाकी तरतसे सुविचार, काव-मलल है सिरदार ॥८७॥
जग जस जाहुको गावेक, जासै सुख सव पावेक ।
दुनिया रहत है कर जोड़, गंजन सकत ठग चोर ॥८८॥
सदर **वसत** है सिरदार, द्वादश कोस कै विस्तार ।
चोवा चोहटा मोटाक, लोकन नाहि है खोटाक ॥८९॥
सहर **आगरा** अपार, काहलुं वरनवै सुविचार ।
मै उर आंनिकै हितभाव, कुच्छ इक वरनव्यो वरनाय ॥९०॥
अकबरबाद है एसाक, लखिये इन्द्रपुर तैसाक ।
सबगुन शहर है भरपूर, देखत जात है दुख दूर ॥९१॥
जब लग गगन अरू इंदाक, पृथ्वी सूर गन चंदाक ।
सुवसो तब लगें पुर अेह, सहर **आगरा** गुनगेह ॥९२॥
संवत सतर से असीयाक, आसाढ़मास चित वसीयाक ।
सुदि परब तेरमी तारीक, कीनी **गजल** धुएवारीक ॥९३॥
अपनी बुद्धि के सारूक, कीनी गजल ए वारूक ।
लक्ष्मी करत है अरूदास, नितप्रति दिजीये सुविलास ॥९४॥

इति श्री **आगरा की गजल** सम्पूर्णमिजनि । सं १७८५ मिती द्वितीय वैशाख वदि १ दिने । लिखतं लखमी चंद वीकानेर मध्ये ।

श्रीः छः

हित-धरि पत्री प्रीति की तोकुं मूकी राज ।
जाणि निसाणी आप की, मो सजन हित काज ॥१॥
सज्जन सज्ज करि रहे, सज्जन दीसै नांहि ।
दुज्जन सुं फैटो भयो, कज्जन आवै मांहि ॥२॥

एक अन्य अपूर्ण प्रति में निम्नोक्त ९ पद्य और मिले हैं जिसमें खरतर गच्छ की पोशाल (पोषधशाला) का उल्लेख है। उस समय जिन भक्ति सूरि जी के आज्ञानुवर्ती यति अमर विजय उसमें थे। वे वैद्यक में भी पारंगत बतलाये गये हैं। अमर विजय जी १८वीं शताब्दी के अच्छे कवि थे। इनकी संवत् १७६१ से १८०६ तक की बहुत सी रचनाएँ मिलती हैं। आगरा गजल के रचयिता कवि लक्ष्मी चन्द्र उन्हीं के शिष्य थे। इनकी परम्परा बीकानेर में अब भी विद्यमान है।

अन्य प्रति के अतिरिक्त पद्य :—

लोग कहत है साराक्, उसका नाम है काछी पाराक ॥१॥
ता विच वसत है सब लोग, नाठे जात है दुख रोग।
खरतर गछ की पोसाल, दुस्मन दफै दुजह काल ॥२॥
जानत लोक ही सब कोई, भट्टारक गछहै इह सोई।
जिन भक्ति सूरि के राज, जती रहत है सिरताज ॥३॥
सोविक अमर विजय जैसाक्, खासा सेवग है ऐसाक।
वैदक वीच है तरकीब, मालजा करत है नित हीब ॥४॥
रोग निदान कुंजानैक्, ताकुं सब लोग ही मानैक।
हींदू लोग और वनियाक्, मुसलमान अरू धुनियाक ॥५॥
ऐं सब लोग मिल आवैक, श्री पूज रजत चढ़ावैक।
रोगी चंगा हुइ जावैक, फाइदा बंद ही पावैक ॥६॥
ऐसा हकीमी पीच है दरक, आरब फारसी विच गरक।
वैद हकीम लेत है ताजीम, आसीस देत है या अनाम ॥७॥
साध जु साध्वी गुनबांन, श्रावक श्राविका गुन जान।
नित उठ सुनत है वखान, अपनै धर्म में सावधान ॥८॥
नित प्रति भावना भावैक, अपनै कर्म खपावैक।
ऐसा श्रावक है गुनगाह, सुननि का होत है उछाह ॥९॥

श्री वी० वी० आर० शर्मा

तेलुगु के ऐतिहासिक नाटक

भारतीय साहित्य में नाटकों का एक विशिष्ट स्थान है। प्राचीन शिक्षार्थी साहित्य के अध्ययन के पश्चात् नाटकों की ओर ध्यान देते थे। इसीलिए "नाटकान्तम्हि साहित्यम्" की सूक्ति प्रचार में आई। इतना ही नहीं "नाटकान्तम् कवित्वम्" के अनुसार कवि लोग श्रव्यकाव्य में सफलता प्राप्त करने के पश्चात् ही नाटक लिखने में प्रवृत्त होते थे। साहित्य-क्षेत्र के अन्तर्गत रसास्वाद में हो अथवा एतत्सृष्टि में हो नाटक का ही श्रेष्ठ स्थान माना जाता है।

तेलुगु कवियों ने नाटक रचने की प्रेरणा अंग्रेजी साहित्य से प्राप्त की। इसलिए तेलुगु में १९वीं शताब्दी से ही नाटक-रचना का आरंभ मानना चाहिए। उत्तर-प्रदेश के लोगों ने दक्षिण में जाकर नाटक खेलकर वहाँ के निवासियों को प्रभावित किया। इस प्रेरणा के कारण दक्षिण प्रांत में बल्लारी, नेल्लूर, राजमहेन्द्रवरम, गुण्टूर आदि नगरों में नाटक-समाजों की स्थापना हुई। कवि लोग आवश्यक नाटक लिखकर नाटक समाज को आगे बढ़ाने में हाथ बटाने लगे। पर यह बताना कठिन है कि प्रथम नाटककार कौन था। इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। कोई वाविलाता को मानते हैं तो कोई वीरेशलिंगम जी को प्रथम नाटककार ठहराते हैं। श्री वाविलाल वासुदेव शास्त्री जी ने "सीज़र" तथा "उत्तर रामचरित" का अनुवाद किया। श्री वीरेशलिंगम् जी ने 'मर्चेण्ट ऑव वेनिस' और अभिज्ञानशाकुन्तलम् तथा मालविकाग्निमित्रम्, प्रबोध चन्द्रोदयम् नामक नाटकों के अनुवाद प्रस्तुत किये। इनके अनुकरण पर कई अनुवाद नाटक-क्षेत्र में आये। इस प्रकार नाटक-क्षेत्र उपवन के विभिन्न लता-कुसुमों के सौरभ की भाँति सामाजिक, ऐतिहासिक आदि दिशाओं में चारों ओर फैल गया।

विषाद सारंगधरा

श्री आन्ध्रनाटक पितामह धर्मवरपु कृष्णमाचार्य जी ने विषाद सारंगधरा नाटक लिखकर, नाटक-साहित्य की एक भारी कमी को पूरा किया। भाषा, शैली, कथा-प्रवाह, पात्रों के चित्रण में ही नहीं, विशेषकर भारतीय नाटक-परम्परा के विरुद्ध नाटक को दुखान्त किया। इसे ऐतिहासिक नाटक नहीं कहा जा सकता क्योंकि सारी घटनाएँ ऐतिहासिक कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं। फिर भी यह ऐतिहासिकता कुछ अंशों में यथार्थ के निकट

भी है। यह ११वीं शताब्दी के वेंगी-राज्य-शासक राज राजनरेन्द्र की कहानी है। राजराजनरेन्द्र पात्र के अतिरिक्त सारी घटनाएँ कल्पित हैं। राजराजनरेन्द्र में प्रथम आन्ध्रकवि नन्नय भट्टारक के पोषक हैं। मालूम नहीं क्यों, साधारण जनता में इस कहानी को लेकर विविध कल्पनाएँ प्रश्रय पाती रहीं।

इसका कथा-सारांश इस प्रकार है—

राजनरेन्द्र के सारंगधर नाम का पुत्र था। युवावस्था आने पर राजा ने इनका विवाह करना चाहा। कई देशों से राजकुमारियों के चित्र मंगाये गये। उसमें चित्रांगी की सुन्दरता को देख, मोहित हो, राजा ने स्वयं उससे विवाह किया और पुत्र का चन्द्रकला से।

चित्रांगी सारंगधर के रूप, गुण पर मोहित थी पर विवश होकर वृद्ध राजा राजनरेन्द्र से विवाह करने को तैयार हुई। विवाह के उपरान्त एक दिन राजा राजधानी से बाहर गये। उनकी अनुपस्थिति से लाभ उठाने तथा अपनी कामना की पूर्ति के लिए चित्रांगी ने सारगंधर को अंतःपुर में बुलवाया। इधर उधर की बातों के पश्चात् सारंगधर ने अपना प्रेम प्रकट किया, पर युवराज सारंगधर नई माँ चित्रांगी को इस नीच कृत्य से दूर रहने के लिए कई नीतियाँ प्रस्तुत की हैं। परंतु वह युवराज को अपनी ओर आकर्षित होते न देख क्रोधित हुई। राजा के आने पर उसने सारंगधर पर कई कल्पित आरोप लगाये। राजा क्रोध में अपने आपको भूल जाता है तथा सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म का विचार न कर निरपराध सारंगधर के हाथ-पैर कटवा देता है। इस प्रकार सारंगधर की मृत्यु हो जाती है। इसके विपरीत कुछ लोगों का कहना है कि एक सिद्ध ने पुनः सारंगधर को जीवन प्रदान किया। कुछ भी हो, कृष्णमाचार्य जी ने इस नाटक की समाप्ति विषाद में की। रंगमंच पर इतनी कुशलता के साथ प्रदर्शित किया गया नाटक और कोई देखने में नहीं आता। स्वयं नाटककार एक पात्र बनकर प्रेक्षकों को आनन्द-सागर में तैराता है। यह नाटक आन्ध्रवाणी के लिए एक अनुपम उपहार है।

नायकुरालु (नायिका):

महाभारत-गाथा की तरह तेलुगुप्रान्त में पलनाडु (पलनाति) इतिहास भी ऐतिहासिक प्रसिद्ध गाथा है। इसमें दो भाई आपसी मतभेदों के कारण युद्ध-भूमि में मर मिटते हैं। १२वीं शताब्दी में पलनाडुप्रान्त भाइयों के मतभेद के कारण दो भागों में बँट गया था। इस प्रकार गुरिजाल के नलगामु माचर्ला के मलिदेव राजा हुए। उनकी उपपत्नी गुणवती, धीरवती तथा राजनीति में चतुर नागम्मा नलगाम को कठपुतली बनाकर शासन कर रही थी। नलगाम के लिए नागम्मा की प्रत्येक बात वेदवाक्य के समान थी। क्या साहस कि कोई उसका विरोध करे। सद्गुण-सम्पन्न ब्रह्मनायक मलिदेव के पक्ष में था। माताएँ अलग-अलग थीं, पर नलगाम, मलिदेव के पिता एक ही थे। पर नलगाम नागम्मा के हाथों में कठपुतली बनकर भाइयों के प्रति उदासीन थे। इतना ही नहीं, भाई के राज्य को हड़पने में उन्होंने कोई संकोच नहीं किया। आन्ध्र देश में संक्रान्ति के त्यौहार पर मुर्गियों की बाजी लगाने की एक परिपाटी है। इस प्रसिद्ध त्यौहार के दिन राजाओं ने मुर्गियों की बाजी में राज्य छोड़ने की तथा सात वर्ष वनवास करने की प्रतिज्ञा की। नागम्मा के षड्यंत्र के कारण मलिदेव पराजित

हुए। वनवास के जीवन से मुक्त होकर ब्रह्मनाय (डु,) अलराजु को राजा नलगाम के पास राजदूत के रूप में भेजते हैं। पर यह सन्धि विफल होने के कारण युद्ध अनिवार्य हुआ। कार्यपूडी मैदान में घमासान लड़ाई हुई। युद्ध-क्षेत्र रक्त से लाल हो गया। विजयलक्ष्मी ब्रह्मनायक के हाथ लगी। पर पुत्र (बालचन्द्र) युद्ध-क्षेत्र में शत्रुओं का दमन करते-करते स्वर्ग पहुँच गया। ब्रह्मनायडु ने पराजित राजा नलगाम को ही राज्याधिकार सौंपा। इस सारी घटना का मूल युद्ध वनिता, कुशल चतुर नागम्मा ही थी।

वीर रसान्वित इतिहास का आधार लेकर लाला सोमयाजुलु जी ने यह नाटक लिखा। इनकी प्रतिभा का यह एक उदाहरण है। पद्य-रचना में और चरित्र-चित्रण में इनकी कुशलता अपार है। मुख्यत: नायिका नागम्मा तथा आंध्रभिमन्यु बालचन्द्र न कवि-हृदय को प्रभावित किया। फलत: उनकी लेखनी से ऐसी दुग्ध-मधुर ओजस्वी धारा बह निकली कि जनता के हृदय में एक ओर आनन्द तो दूसरी ओर उद्वेग की धारा लहरा उठी। यही कारण है कि आज भी आबालवृद्ध उपर्युक्त घटनाओं को अनेक बार दुहराते हैं।

३. बोब्बिली युद्ध

"बोब्बिली के नाम से आज किस आन्ध्र का हृदय वीर रस से नहीं भर उठता। कौन ऐसा निर्बल होगा जो उनकी गाथा सुनकर तलवार लेकर मैदान में न कूद पड़े। आज भी पंडित पायरोमे बोब्बिली घटनाओं में तल्लीन होने वालों की संख्या कम नहीं है। बेब्बुली (बाघ) शब्द ही बोब्बली में बदल गया। यह घटना १८वीं शताब्दी की है, उस समय बोब्बिली निजाम के नवाबों का एक सामन्त राज्य था। उन दिनों दक्षिण में फ्रांसीसियों का प्रभाव था। निज़ाम के नवाब इनका बहुत आदर करते थे। यही कारण है कि फ्रांसीसी सामन्त राज्य के व्यवहारों में हस्तक्षेप करते रहे। बोब्बिली तथा विजय नगर के राजाओं की पुरानी शत्रुता दिनोंदिन बढ़ती गई। एक दूसरे पर वार करने के लिए समय की प्रतीक्षा करने लगे। इस आपसी शत्रुता में देश की रक्षा करना ही भूल गये। "जलनी को वायु सहायक" की भाँति विजयरामराज (विजय नगर के राजा) बुरसी (फ्रेन्च सेनापति) से अनावश्यक कल्पित घटनाओं से युद्ध के लिए उत्साहित करते हैं। वीर बोब्बिली सेना फ्रांसीसी गोलियों की आहार बनी। विजयराम राज की ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य तथा क्रोधाग्नि में बोब्बिली महान नगर एक श्मशान वाटिका बन गया। युद्ध के समय बोब्बिली के वीर तान्ड्रपापयरायडू राजधानी से बाहर थे। वे इस युद्ध से क्रुद्ध होकर विजयगर्वोन्मत्त राजा विजयरामराज का दमन करने उनके शिविर में "बोब्बिली बोब्बिली" नंगी तलवार के साथ भयंकर नाद करते हुए पहुँचे, और उनका काम तमाम कर, आवेश में ये एक खड़ी करवाल की आहुति बने।

श्री पाद कृष्णमूर्त्ति शास्त्री जी ने पापराय चरित में अद्भुत कुशलता दिखायी। यही कारण है कि सोई हुई पापराय का वह "बोब्बिली बोब्बिली" का भयंकर नाद आज नगर-नगर ग्राम-ग्राम में गूंज रहा है। इनके इस नाटक ने सोई हुई जनता को

जगाया है। रात के भयानक अँधियारे को चीरती हुई आने वाली सूर्य-ज्योति की तरह इनका यह नाटक निद्रोन्मत्त आलसी जनता में आशा की एक ज्योति बनकर प्रस्फुटित हुआ है। इससे इनका नाटक रचना-कौशल तथा शब्दों की गूँज का परिचय मिलता है।

४. प्रतापरुद्रीयम्

१३, १४वीं शताब्दी के अन्तर में काकतीय वंश में प्रतापरुद्र नाम के एक प्रतापी राजा हुए हैं। वे एक बार असावधानी के कारण दिल्ली के सुलतान के हाथों पराजित होकर कैदी बने। दिल्ली के मार्ग में इनका देहान्त हुआ। पर कुछ इतिहासकारों का मत है कि ये वहाँ से भाग आये, और कुछ विद्वानों का मत है कि इनके मन्त्री युगन्धर ने बड़ी चतुरता के साथ सम्राट् प्रतापरुद्र की दिल्ली के सुलतानों से रक्षा की। इनकी चतुरता के सामने दिल्ली की सेना की कुछ न चली।

नाटक में हास्य का सुन्दर चित्रण हैं। युगन्धर के पागल के अभिनय से दर्शकों में अद्भुत आनन्द का उदय होता है। "दिल्ली सुलतान् पट्टुका पोतान्, मूडे नेक्ककु पट्टुका पोतान्, वोरूण्णी रागण्णी मन्नू चेयिस्तान्, गोति लो पाति गोरि कट्टिस्तान्" ये वाक्य सुनकर दर्शकगण भी युगन्धर की भांति ही पागल के बहाव में बह जाते हैं।

५. विषाद तिम्मरूसु

१६वीं शताब्दी के भारत के एकमात्र सम्राट् राजा कृष्णदेवराय के नाम से आज सारी हिन्दू जनता भलीभाँति परिचित है। विजयनगर को केन्द्र बनाकर म्लेच्छ मुसलमानों को खदेड़, उनकी उद्दण्ड क्रूरता से भारतीय संस्कृति, धर्म, कला की रक्षा करने वाले कृष्णराय के सचिव श्रेष्ठ तिम्मरुसु आन्ध्र के सौभाग्य से राजा के सहायक बने। इनकी रणयात्रा और विजय परम्परा प्रशंसनीय है। इनकी इस वीरता के सम्मुख आन्ध्र की जनता का मस्तक झुक जाता है। राय जी इन्हें अपने प्राणों के समान मानते थे। पर राय ने ईर्ष्यालु शत्रुओं के कहने में आकर वृद्ध तिम्मुरुसु को क़ैद कर आँखें निकलवा डालीं। इन पर यह आरोप लगाया गया था कि कृष्ण देवराय के पुत्र को इन्होंने मार डाला; पर यह कहाँ तक सत्य है, कहा नहीं जा सकता।

तिम्मरुसु के महान कार्यों, बुद्धि-निपुणता, तथा अन्त की उनकी हीन दशा का आधार लेकर दुभी राजशेखरुलु जी ने इस नाटक की रचना की। यह नाटक को पढ़ने वाले, सुनने, देखने वाले आँखों से आँसू बहाये बिना नहीं रह सकता। कवि ने तिम्मुरुसु को उदात्तचित्त, गाम्भीर्यगुण शोभित, सत्यवादी के रूप में चित्रित किया है। यह नाटक २५ अंकों में विभक्त है। यही कारण है कि इसे खेलने में कठिनाई होती है। यही एक त्रुटि हम इस नाटक में पाते हैं। इसके अतिरिक्त कोई और गलती या दोष इसमें दिखाई नहीं देता।

इस रायचरित के आधार पर कुछ कवियों ने कृष्णरायविजयमु, अन्नपूर्णा, तिम्मुरुसु, आदि रूपक लिखे हैं। इसमें अन्नपूर्णा नाटक प्रसिद्ध है।

१३वीं शताब्दी के नेल्लूर के शासक मनुमसिद्धि के सेनापति खड्गतिक्कना की गाथाओं का आधार लेकर कई रूपकों की रचना हुई। औरंगजेब, रोशनआरा, शिवाजी सिंहगडमु, मेवाडपतनमु अनुवाद आदि नाटक दर्शकों के प्रिय बने।

तल्लिकोटयुद्धम्

१५वीं शताब्दी में आरविडु वंश के राजा अलिय रामराजु विजयनगर के शासक थे। इनके शासनकाल में राक्षसीतागडी के पास यह युद्ध हुआ। १५६५ में बहमनी सुलतान एकत्र होकर रामरायलु के विरुद्ध लड़े। इनकी असावधानी के कारण हिन्दू साम्राज्य विजयनगर के मुसलमानों से पददलित हुआ। छह मास तक विजयनगर में तलवारें चलीं, लूटमार हुई, कई मंदिर चकनाचूर हो गये। इस प्रकार यह हरा भरा राज्य शिशिर ऋतु के शोभाहीन वन की भांति श्मशान वाटिका बन गया। हनूसाम्राज्य का सूर्य सदा के लिए अस्ताचल में विश्राम करने लगा।

इन भयंकर विषादपूर्ण घटनाओं को एकत्रित कर कोलाचलमु श्रीनिवासरावु जी ने इस नाटक की रचना की। ऐसा जान पड़ता है कि विशिष्ट पात्रोन्मीलन गम्भीर-भाव, भाषा, शैली इन्हीं की सम्पत्ति थी।

अब नाटक से नाटिका (एकांकी) की ओर चलें। आजकल एकाकी नाटकों पर तेलगु कवि विशेष ध्यान दे रहे हैं। इनमें नोरी नरसिंहशास्त्री अब्बूरी, रामकृष्णशास्त्री, भमिडिपाति, इन्द्रगन्ति, चलम आदि श्रेष्ठ लेखक हैं।

"रजनी" के कई ऐतिहासिक गेयनाटक निकले हैं। विशेषकर मल्लम्पल्ली सोमशेखर शर्मा, भावरायवेंकटकृष्णराव मारेबण्ड रामाराव, के एकांकी नाटक उल्लेखनीय हैं। प्राचीन शिलाखण्डों में सोई हुई भारतीय संस्कृति, धर्म के खण्डों को एकत्रित कर संसार के विशेषकर आन्ध्र साहित्य की लेखनी में जादू भरने वाले मल्लम् पल्ली सोमशेखर शर्मा के हम विशेष आभारी हैं।

श्री गुरुनाथ जोशी

कन्नड़ के ऐतिहासिक नाटक

भारतवर्ष का सबसे प्राचीन भाग दक्षिण का पठार है। इस पठार के उत्तर में विंध्याचल और उसकी शाखाएँ हैं तथा पूरब में पूरबी और पश्चिम में पश्चिमी घाट हैं। इस पठार का ढाल पूरब की ओर है। सभी नदियाँ पश्चिमी घाट से निकल कर पूरबी घाट को लाँघकर बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। इन नदियों में कृष्णा, गोदावरी, कावेरी, तुंगभद्रा आदि नदियाँ जिस प्रदेश को अत्यंत उर्वर बना देती हैं, जिस प्रदेश के कड़पा जिले में पाषाण युग के लोगों के हथियार मिलते हैं और बल्लारी जिले में आस्ट्रेलिया निकोबार की ओर से आयी हुई जाति के लोगों ने अपने आयुध के लिए जिस पत्थर का प्रयोग किया वह मिलता है, प्राच्य वस्तु संशोधकों में ख्यातिप्राप्त रेवरंड फ़ादर हेरास के मतानुसार जिस प्रदेश के लोगों ने अपनी सभ्यता हरप्पा-मोहेंजोदड़ो तक पहुँचा दी थी, जिस प्रदेश के हनुमान ने सीताजी को श्रीरामचन्द्रजी के पास सुरक्षित पहुँचाया था रावण के चंगुल से छुड़ाकर, जिस प्रदेश में मौर्यवंश के चंद्रगुप्त तथा अशोक का साम्राज्य फैला हुआ था और अशोक के उपरान्त आंध्र के सातवाहनों का साम्राज्य था, तथा कदंबकुल के मयूरवर्मा, चालुक्य, राष्ट्रकूट, पल्लव, गंग, यादव कुलों के नरेशों ने और विजयनगर के राजाओं ने, उनके उपरान्त मुसलिम नवाबों और सुलतानों ने राज किया था, जिस प्रदेश के राजाओं की ११-१२वीं सदी में सारे भारत में तूती बोलती थी, और राजा हर्षवर्द्धन के दरबार में जिस प्रदेश के चालुक्य राजा वीर पुलिकेशी के दरबार के चाल-ढाल की नकल की जाती थी, जिस प्रदेश के आचार्यों ने हिन्दू धर्म को सारे भारत में जीवित रखा, जिस प्रदेश की वीरांगनाओं ने अपनी तलवार की चमक दिखाई थी, जिस प्रदेश के कवियों ने अपनी श्रेष्ठ रचनाओं से कन्नड़-साहित्य-देवी का मन्दिर सजाया है, वह कर्नाटक कहलाता है और उसका साहित्य है कन्नड़ साहित्य। इतनी उज्वल परंपरा के होते हुए भी कन्नड़ साहित्य में ऐतिहासिक नाटकों की रचना २०वीं सदी तक क्यों न हो सकी? यह प्रश्न हमें अवाक् कर देता है। यह भी सोचने पर लगता है कि कर्नाटक में जो राजनैतिक उथल-पुथल हो रहे थे उनके कारण कन्नड़ के नाटक और वस्तुओं की भाँति काल के गर्भ में शायद दबकर नष्ट हुए होंगे। यह हम इसलिए

कह रहे हैं कि हमें इस प्रकार के उल्लेख मिलते हैं जिनसे विदित होता है कि कन्नड़ में नाटकों की रचना जरूर हुई थी। उनका भी यहाँ संक्षेप में जिक्र करना अनुचित नहीं होगा।

दक्षिण भारत की सबसे प्राचीन भाषा तमिल है, जिसके साहित्य का एक उपलब्ध ग्रंथ 'शिलप्पधिकारं' है जो कि ईसवी की प्रथम सदी का है। उसमें कन्नड़ नटियों तथा नर्तकियों की वेशभूषा तथा नृत्य-गान आदि का वर्णन मिलता है। कर्नाटक के एक प्रसिद्ध स्थान 'पट्टदकल्लु' में प्राप्त एक शिलालेख में **'नटसेव्य'** नामक एक प्रसिद्ध अभिनयकार का उल्लेख मिलता है जो सन् ८वीं सदी में था। कन्नड़ के अभिनव पंप कवि ने कहा है—'विद्या नटि-नाटकं नलिगे मत्काव्यस्थली रंगदोल"; रत्नाकर-वर्णी ने अपने 'भरतेशवैभव' नामक ग्रंथ मे पूर्वनाटक तथा उत्तर नाटक संधियों में अपने समय के नृत्य और नाटकों का सुन्दर वर्णन किया है; १७वीं सदी में भट्टकलंक नामक व्याकरण-शास्त्री ने लिखा है कि कन्नड़ मे नाटकादि विषयों पर लिखित अनेक ग्रंथ हैं; 'केलदिनृप विजय' नामक ग्रंथ में इस बात का उल्लेख मिलता है कि केलदी के नरेश अपने प्रासादों में नाटक शालाएँ बनवाकर नाटकों का अभिनय कराते रहे; विजयनगर साम्राज्य के सर्वश्रेष्ठ नरेश कृष्णदेवराय के एक शिलालेख में यह उल्लेख मिलता है '**तायिकुंद नाटक**' के चेगय्य के पुत्र नट नागय्य और तिम्मय्य की पुत्री नटी को···भूमिदान किया जाता है।' अलावा इसके कन्नड़ साहित्य मे 'पगरण' 'नाल्पगरण' नामक जानपदीय नाटकों का भी उल्लेख मिलता है और उनका अवशेष हम आजकल भी अनावृत रंगमंचीय नाटकों तथा यक्षगान के प्रसंगों में पाते है। इन बातों पर से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि कन्नड़ में नाटकों की रचना हुई होगी, पर वे आजकल हमें प्राप्त नहीं हैं। पर हाँ, कन्नड़ साहित्य में हमें अब तक उपलब्ध नाटकों में सिगरार्य से रचित **'मित्रगोविंदा गोविंद'** नाटक पहला नाटक है जो कि सत्रहवीं सदी का है; सो भी संस्कृत 'रत्नावली' नाटक का अनुवाद। यही संस्कृत नाटकों की अनुवाद-परंपरा १६वीं सदी के अंत में उदित हुई। अभिज्ञान शाकुंतल, वेणी संहार आदि के अनुवाद कन्नड़ में आये। इसके उपरान्त अंग्रेजी नाटकों की अनुवाद-परंपरा शुरू हुई। शेक्सपीयर, गोल्डस्मिथ आदि के नाटक कन्नड़ वाणी में अवतरित हुए। इसका प्रभाव पड़ोसी प्रांत महाराष्ट्र पर भी पड़ा। उन्नीसवीं सदी के अंतिम भाग मे धारवाड के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा भाषणकार स्वर्गीय मुदवीड़ु कृष्णराव ने 'भरत कलोत्तेजक समाज' की स्थापना करके स्वर्गीय तुरभरी से अनुवादित शाकुंतल नाटक का अभिनय कराया था; उस प्रयोग ने महाराष्ट्र में नाटक की एक परंपरा को जगाया था, या यों कहिये कि जन्म दिया था। इतना ही नहीं बल्कि मंगलोर जिले के कुछ कलाविद सांगली गये और यक्षगान की अपनी कला दिखाई तो सांगली के श्री भावे ने 'यक्षगान' की शैली में मराठी में नाटक लिखा और महाराष्ट्र में नाटक का श्री गणेश किया। कन्नड़ के कलाविदों ने संस्कृत के नाटकों के अनुकरण द्वारा पड़ोसी प्रांत महाराष्ट्र में एक अनुकरणीय कार्य करके दिखाया। यह कर्नाटक के लोगों की रक्तगत नाटकाभिरुचि और कलाभिरुचि का प्रमाण है।

इस प्रकार कन्नड़ का नाटक साहित्य आगे बढ़ता गया। सामाजिक, पौराणिक और ऐतिहासिक नाटक कन्नड़ में काफी संख्या में आये। इन सबका परिणाम यह हुआ कि नाटक-रसिकों की अनुभव-संपत्ति में वृद्धि हुई। नाटकों के कई प्रकार भी आये। जो हो, पर इस प्रबंध की सीमा में हमें केवल कन्नड़ के ऐतिहासिक नाटकों का विचार करना है। अतः अब हम यह देखें कि कन्नड़ में ऐतिहासिक नाटकों का विकास किस प्रकार हुआ है।

कन्नड़ साहित्य में प्रथम ऐतिहासिक नाटक कौनसा है ? इसका समाधानकारक उत्तर इस प्रबंध के लेखक को नहीं मिला। लेखक ने कतिपय लेखकों से लिखा-पढ़ी की, साहित्यकारों से परामर्श किया, साहित्य का अध्ययन किया, तब भी समाधान पा न सका। लेखक ने एक प्रकार से इस दिशा में संशोधन ही किया, समझिये। कुछ विद्वानों ने कहा कि 'मुद्राराक्षस' कन्नड़ का प्रथम ऐतिहासिक नाटक है। पर इसका पता नहीं लगा कि वह अनुवादित है या मौलिक और उसकी रचना कब हुई तथा उसे किसने लिखा है। पर, लेखक को जो साहित्य-सामग्री उपलब्ध हुई है उसके आधार पर, कन्नड़ के नाटक-साहित्य के अध्ययन के बल पर यही कहने का साहस करता है कि कन्नड़ का प्रथम ऐतिहासिक नाटक ई० १६१४ में श्री हुयिलगोल नारायणराव से लिखित और अभिनीत **'मोहलहरी'** है। इस नाटक की कथावस्तु इसके लेखक के ही शब्दों में इस प्रकार है—"विजयनगर के प्रथम देवराय से संबंधित नाटक है यह। विजयनगर साम्राज्य के एक गाँव में एक सुनार की लड़की थी जो अत्यंत रूपवती थी और उसका नाम था 'प्रीतला'। उसके सौंदर्य का वर्णन एक ब्राह्मण ने देवराय को सुनाया। इसका परिणाम यह हुआ कि देवराय उस पर मोहित हुआ और उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। ब्राह्मण ने यह बात उस लड़की के माता-पिता को सुनाई; पिता ने अपनी स्वीकृति दी, पर लड़की ने साफ़ इनकार कर दिया और कहा 'मैं अंतःपुर में कैदी की तरह रहने के लिए तैयार नहीं हूँ।' तदुपरांत यह समझ कर कि राजा हमको तंग करेगा, लड़की के माता-पिता अपनी पुत्री को साथ में लेकर बहमनी राजाओं के अधीन में रहे हुए मुदगल्ल नामक गाँव भाग गये। वहाँ भी देवराय अपनी सेना समेत पहुँचा और उस लड़की को लाने का प्रयत्न किया। बहमनी राजा और देवराय के बीच में लड़ाई भी हुई और उसमें देवराय को पीछे हटना पड़ा। तदुपरांत यद्यपि दोनों राजाओं के बीच में समझौता हुआ तथापि प्रीतला देवराय को नहीं मिली। उसी लड़की के मोह में देवराय का पर्यवसान हुआ। यह नाटक सन् १६१४ में लिखा गया और तभी अभिनीत हुआ। 'मोहलहरी' संगीतयुक्त नाटक है। (इसी कथा वस्तु को लेकर डा० रंगनाथ मुगली ने भी 'सेवाप्रदीप' नामक नाटक लिखा है)।"

इस नाटक के लेखक कन्नड़ के एक बुजुर्ग साहित्यकार हैं जिनमें राष्ट्र-भक्ति, मातृ-भाषा प्रेम आदि सद्गुण कूटकूटकर भरे हैं। अपने हाईस्कूल और कालेज के समय से ही ये नाटक में अभिरुचि रखते थे। शेक्सपीयर के और संस्कृत तथा मराठी के नामी नाटककारों के नाटकों का गहरा अध्ययन किया। कन्नड़ रंगमंच तथा मराठी रंगमंच का सूक्ष्म अध्ययन, तुलनात्मक अध्ययन किया। कन्नड़ रंगमंच पर आने वाले नाटकों की

दुरवस्था देखकर, शांत कवि से प्रेरणा पाकर एक से एक बढ़कर कुल १३ नाटक आपने लिखे जिनमें पाँच ऐतिहासिक नाटक हैं—(१) मोहलहरी (१९१४), (२) अज्ञातवास (१९१५): (३) प्रेम विजय (१९१६); (४) रामकुमार (१९१७); (५) विद्यारण्य (१९२०-२१)। ये पाँचों नाटक विजयनगर साम्राज्य से संबंधित हैं और संगीत से युक्त हैं। दूसरा और तीसरा नाटक कृष्णदेवराय से संबंधित हैं। चौथा नाटक विजयनगर के पतन के बाद कुम्मटनगर के कंपिल राजा तथा रामदुर्ग के राजा के पुत्र राम से संबंधित है। पाँचवें नाटक की कथावस्तु विजयनगर साम्राज्य की स्थापना की है जो बहुत प्रसिद्ध है। ये पाँचों नाटक नाट्यशास्त्र, रंगमंच, कथोपकथन, पात्रपोषण, तथा ऐतिहासिकता की दृष्टि से सफल नाटक हैं। जिन्होंने इन नाटकों को रंगमंच पर देखा है, उन सबने इनकी प्रशंसा की है। पर, खेद का विषय यह है कि ये अभी तक अप्रकाशित ही हैं। परंतु इन नाटकों के अभिनय से जो अर्थ-प्राप्ति हुई है उससे गदग में एक विद्यादान समिति स्थापित हुई जो आजकल एक हाईस्कूल चलाती है। नाटककार भी गदग में ही रहते हैं और वकालत करते हैं और उनकी आयु ७५ वर्ष की है। जब तक कन्नड़ साहित्य के विद्वान एक राय से यह निर्णय नहीं करते कि प्रथम ऐतिहासिक नाटक कन्नड़ में कौनसा है और उसके लेखक कौन हैं, तब तक 'मोहलहरी' कन्नड़ के प्रथम ऐतिहासिक नाटक के रूप में और श्री हुयिलगोल नारायणरायजी कन्नड़ के प्रथम ऐतिहासिक नाटककार के रूप में कन्नड़ साहित्य में चमकते रहेंगे, यदि यों यह लेखक कहे तो आशा की जाती है कि कन्नड़ के साहित्यकार उसके बारे में गलत धारणा नहीं करेंगे।

ऐतिहासिक नाटक के भेद

कर्नाटक के प्रसिद्ध नाटककार 'श्रीरंग' जी कहते हैं—"नाटकों में ऐतिहासिक, सामाजिक, पौराणिक आदि भेद करना उचित नहीं प्रतीत होता। नाटक तो एक विशिष्ट कला है; चाहे ऐतिहासिक हो, चाहे सामाजिक, चाहे पौराणिक, नाटक का स्वरूप तो एक ही है। उसके अंदर की वस्तु की दृष्टि से, बातों की शैली से, अंक-दृश्यों की रचना से, बाहरी बंध-जिल्द से भेदों की कल्पना यदि करनी हो संगीत-गद्य-पद्य-विनोद-विषाद (अंत को) डेमी-क्राउन आदि अनंत भेदों को मानना पड़ेगा। अगर कोई पूछें कि आजकल इस प्रकार भेद किये जाते हैं न, तो कहना होगा कि आगे भी ऐसे भेदों की कल्पना करनी चाहिये, ऐसा कोई नियम नहीं है, जरूरत भी नहीं। नाटक क्या है? नाटक तो नाटककार के हृदय में उठने वाली भावतरंगें हैं, तरंगें जल में होने पर भी उनको ऊपर तरंगित दिखाने के लिए एक निमित्त चाहिये। उसी प्रकार भावना यद्यपि हृदय में प्रवाहित होती रहती है तथापि उसे बाहर अभिव्यक्त करने के लिए एक निमित्त की आवश्यकता है। वह निमित्त तो ऐतिहासिक घटना भी हो सकता है, पौराणिक कथा भी हो सकता है, प्रतिदिन के व्यवहार में प्राप्त एक तुच्छ अनुभव भी हो सकता है। तो जो निमित्त होता है, उसे सत्यस्वरूप न माना जाय, यही हमारा कहना है। भूख लगने पर अन्न का स्वरूप यद्यपि मालूम होता है तथापि अन्न का स्वरूप भूख नहीं।" आगे चलकर वह फिर कहते हैं—"नाटक में ऐसे भेदों की कल्पना करने से आज सामान्य मनुष्य में ज्ञान विपर्यास हो गया है। सामाजिक नाटक

कहते ही केवल समाज का प्रतिबिंब, पौराणिक कहते ही केवल पौराणिक कथाश्रवण, ऐतिहासिक कहते ही केवल इतिहास में दिखाया हुआ वस्तुपाठ, समझ बैठने की प्रवृत्ति आजकल लोगों में दीख पड़ती है। समाज का प्रतिबिंब ही सामाजिक नाटक जब हो तो समाज क्या है ?—समाज किस तरह का ? आदि प्रश्नों का समाधानकारक उत्तर तो चाहिये न ? प्रतिबिंब का बिंबरूपी समाज ऐसा है, इस प्रकार का ज्ञान या एकाभिप्राय कहीं है ? यदि वैसा नहीं है तो क्या यह आग्रह किया जा सकता है कि नाटककार का समाज ऐसा ही हो ? उसी प्रकार 'यह इतिहास है' इस प्रकार निर्णय क्या इतिहासकार दे सकते हैं ? जब इतिहासकारों में ही आपस में भिन्नाभिप्राय है तो नाटककार किस इतिहास का अनुसरण करे ? परंतु ऐसे तर्क-वितर्कों में, मालूम होता है कि लोग यह भूल जाते हैं कि नाटककार का भी हृदय है, उसमें बुद्धि है, कल्पना-शक्ति है, कौतूहल प्रवृत्ति है। "मेरी समझ के अनुसार समाज ऐसा है, मेरे शब्दों में पुराण की कथा यों है, मेरी दृष्टि में यह ऐतिहासिक घटना इस तरह है, यह मेरा अनुभव है इस प्रकार कहने वाले नाटककार को हम किस दृष्टि से जाँच करें ?······मेरा कहना तो यह है कि नाटक का परीक्षण उसकी कला की कसौटी पर कसके करना चाहिये न कि असंबद्ध मानों से।"* यहाँ और एक प्रसिद्ध नाटककार श्री शिवराम कारंत जी की बातें भी देना उचित विदित होता है। ऐतिहासिक नाटकों की सीमा के संबंध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। श्रीरंगजी का दृष्टिकोण आपने जान लिया, अब श्री कारंतजी की बातें सुनिये—'किसा गोतमी, बुद्धोदय नामक नाटक यद्यपि पुराणों की तरह हैं तथापि वे सत्य इतिहास हैं।' जब ऐसी हालत है तो हम किसे ऐतिहासिक नाटक मानें और उनके भेद बताएँ ? जो हो, कन्नड़ के ऐतिहासिक नाटकों में नीचे लिखे अनुसार भेद किये जा सकते हैं—

१. संगीत नाटक—इस प्रकार के नाटकों मे गद्य ही अधिक होता है, बातचीत गद्य में ही होती है : पर बीच-बीच में शोक, करुणा, आनंद, रौद्र आदि के उद्दीपन के लिए गीत भी होते हैं प्रसंगानुसार। ये गीत कर्नाटकी और हिन्दुस्तानी संगीत-पद्धति के होते हैं। जैसे आजकल हम सिनेमा में देखते हैं और सुनते हैं वैसा ही समझिये। अतः इन्हें संगीत नाटक कहने की अपेक्षा संगीत युक्त नाटक कहें तो ठीक होगा। इस प्रकार के नाटकों का प्रचलन आजकल अधिक है। इसका कारण सिनेमा नहीं है, परंतु कर्नाटक की जानपदीय नाटक परंपरा है। कर्नाटक में यक्षगान, दोड्डाट, बयलाट, मूडलपायदाट आदि मनोरंजन के दृश्यकाव्य स्वरूप हैं जिनमें कथाकार कथा गाता जाता है, पात्र अपनी बात गद्य में सुनाते जाते हैं और नृत्य भी प्रसंगानुसार होता है : इसके अलावा पड़ोसी प्रांत महाराष्ट्र में संगीत प्रधान या युक्त नाटक अधिक लोकप्रिय होने लगे थे, उनका अनुकरण भी किया गया। ऐतिहासिक संगीत नाटकों में श्री हुयिलगोल नारायणराय जी के नाटक जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है वे आते हैं : इनके अलावा सर्व श्री गरुड़ सदाशिव राव, संस, श्यामराव रोहिडेकर, कंदगल्ल हणमंतराव, विष्णुपंत आनेखिडी, आर० जी० कुलकर्णी, मुदवीड़ कृष्णराव, सवणूर वामनराव, बी० पुट्टस्वामय्य, डी० वी० जी०, बी० कल्याण शर्म आदि के नाटक इसी प्रकार में समाविष्ट होते हैं। श्री द्विजेन्द्र लाल राय के जो नाटक कन्नड़ में

---

*परमेश्वर पुलकेशी नाटक की भूमिका।

अनुवादित होते आये हैं, वे इसी में आते हैं। बंगला तथा हिन्दी में संगीतयुक्त नाटक जिस तरह के होते हैं उसी तरह के नाटक ये हैं, यदि कहा जाय तो इस प्रकार के नाटकों की कल्पना शीघ्र आएगी। इन सब के नाटक कन्नड़ रंगमंच पर आकर सफल हुए हैं और उनकी सूची परिशिष्ट में दी गई है। ये नाटक कम से कम तीन अंकों के और ज्यादा से ज्यादा पांच अंकों के हैं।

२. **गद्य नाटक**—ऐतिहासिक नाटक जो केवल गद्य में हैं उनकी संख्या बिलकुल कम है। ऐसे नाटक लिखने वालों में हम सर्वश्री मास्ति व्यंकटेश अय्यंगार और श्रीरंगजी के नाम ले सकते हैं। श्री मास्तिजी के नाटकों में **ताली कोटे** अत्यंत हृदय-स्पर्शी ऐतिहासिक नाटक है जो गद्य में है। इसके संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए डा० मुगली ने लिखा है—"यह अत्यंत मर्मस्पर्शी नाटक है और इसने नाटककार की क्वचित् दुरंत-नाटक दृष्टि को बाहर निकाली है। अंत में सुखांत साधने का जो प्रयत्न किया गया है उसे छोड़ दिया जाय तो इस नाटक की वस्तु रचना, पात्र-पोषण बहुत सफल हुए हैं। रूढ़ि के ऐतिहासिक नाटकों में पाये जाने वाले चमत्कारिक सन्निवेश, उद्रेकित शैली आदि की आशा यदि न करें तो अंतर्मुखी या स्वभाव प्रधान ऐतिहासिक नाटक के रूपमें 'ताली कोटे' अधिक आदरणीय होगा।' इसी प्रकार का और एक नाटक आपका है **'शिव छत्रपति'** ये दोनों नाटक रंगमंच पर आये हैं; पर पठ्य नाटक की दृष्टि से ये उत्तम नाटक हैं, यों माना जाता है।

श्रीरंगजी कर्नाटक के प्रसिद्ध नाटककार हैं और आपके कई नाटक रंगमंच पर आये हैं। आपका ऐतिहासिक गद्य नाटक **परमेश्वर पुलकेशी** है। इस नाटक की विशेषता यह है कि ऐतिहासिक घटनाएँ रंगमंच पर नहीं दिखाई गई हैं। नाटक एक व्यक्ति से संबंधित है जो कि शीर्षक से ही सूचित है। एक असामान्य व्यक्ति की गहराई—अंतःकरण की भावनाएँ उस व्यक्ति के काल मान से, कार्य मान से जानने का प्रयत्न किया गया है। चालुक्य पुलकेशी की न रानी का नाम, न उसके मंत्री का नाम इतिहास में नहीं मिलता। इसका यह अर्थ नहीं होता कि पुलकेशी की स्त्री थी ही नहीं। अतः उसकी एक रानी की कल्पना की गई। कहीं-कहीं इतिहास की घटनाएं 'फुट्-नोट' में दी गई हैं। पर नाटककार की दृष्टि में यह ऐतिहासिक नाटक नहीं है—किंतु है चरित्रात्मक। इसलिए कि इसमें पुलकेशी के चरित्र को जानने की कोशिश की गई है। किंतु इस नाटक के पात्रों में पधान पात्र हैं–मंगलेश (चालुक्य नरेश, यह नाटक से संबंधित है, पर नाटक में नहीं आता), विक्रम (यही आगे चलकर द्वितीय पुलिकेशी कहलाता है), हर्षवर्द्धन, राज्यश्री, बाण आदि हैं। इतना होते हुए भी लेखक इसे ऐतिहासिक नाटक नहीं मानते, यही इस नाटक की विशेषता है। इसमें संगीत नहीं, नृत्य भी नहीं, पर है एक प्रार्थना-गीत जिसका समावेश नांदी गीत के रूप में प्रथम अंक में भी नहीं किया गया है। यह रंगमंच पर अभिनीत हो गया है।

३. प्रासरहित सरल-रगले (ब्लंक वर्स) के नाटक—नाटक का यह भेद जैसे सामाजिक और पौराणिक नाटकों में है वैसे ऐतिहासिक नाटकों में भी है। इस भेद का प्रयोग करने वालों में हम सर्वश्री के० वी० पुट्टप्प, मास्ति, एम्० आर० श्री० को नेता

मान सकते हैं। इस भेद की सीमा में कुवेंपु (के० वी० पुट्टप्प) की **रक्ताक्षि**, मास्ती की **यशोधरा** तथा एम्० आर० श्री० के **धर्मदुरंत**, नागरिक नाटक आते हैं।

४. **दृश्यावली नाटक**—परिस्फुट ऐक्य के बिना दृश्यावली के रूपमें मिलने वाला नाटक है 'विद्यारण्य विजय' जो श्री० डी० वी० गुंडप्पजी से विरचित है। स्वयं इसके लेखक कहते हैं 'यह एक केवल दृश्य चित्रों की परंपरा है, ऐसी विलक्षण रचनाएं कन्नड़ में जब आएँगी और जनादरणीय होंगी तब शास्त्रज्ञ इस तरह की रचनाओं को एक दूसरा ही नाम देंगे।...यह यद्यपि दृश्य काव्य की तरह दिखाई पड़ता है तथापि इसका रंगमंच पर प्रदर्शन कहाँ तक जनरंजक होगा, यह नाटक वृत्ति के अनुभवी ही कह सकेंगे। पर यह पठ्य दृश्य काव्य तो कम से कम होगा।

५. **एकांकी**—कन्नड़ में केवल गद्य में और केवल पद्य में ऐतिहासिक एकांकी नाटकों की रचना भी हुई है। गद्य में ऐतिहासिक एकांकी लिखने वालों में डा० एच० के० रंगनाथ, श्री० बी० अश्वत्थ नारायणराव आदि के नाम लिये जा सकते हैं। डा० रंगनाथ की '**विषकन्या**' श्री० बी० अ० नारायणराव के '**उत्सर्ग**' में संग्रहीत ऐतिहासिक एकांकी, ऐतिहासिक एकांकी के अच्छे नमूने हैं। पेजावर सदाशिवराव का '**सरपणि**' नामक ऐतिहासिक एकांकी भी यहाँ उल्लेखनीय है।

श्री कुवेंपुजीने भी रगल (Blank verse) में सुंदर एकांकियों की रचना की है और इसका अच्छा नमूना 'महारात्रि' है जिसमें सिद्धार्थ के गृहत्याग का सुंदर चित्रण है।

गद्य-पद्य मिश्रित एकांकी ऐतिहासिक नाटक भी कन्नड़ में आये हैं जिनमें श्री बगरी एन० डी० लिखित '**केलदिय चन्नम्म**', श्रीकृष्ण पाटील का '**२६ जनवरी**' उल्लेखनीय हैं।

एकांकी गीतरूपकों के रचनाकारों में श्री शिवराम कारंतजी सुप्रसिद्ध हैं। **किसा गोतमी और बुद्धोदय** आपकी प्रसिद्ध एकांकी गीत रूपक रचनाएँ हैं जिन्हें आप ऐतिहासिक मानते हैं। प्रथम एकांकी में मुलतानी, देसकार, होरी, कामोद, मांड, बिभास, भैरवी रागों का उपयोग किया गया है और द्वितीय एकांकी में शंकराभरण, हंसध्वनि, तिलक कामोद, भीमपलास, दुर्गा, तेलंग, हिंडोल, बिभास, कालिंगड़, सारंग, बिहाग, वसंत कल्याणी, मुलतानी, भूप, खंभावती रागों का प्रयोग किया गया है। ये सफल गीतरूपक सिद्ध हुए हैं।

६. **तरंग रूपक**—तरंग रूपकों को प्रसार नाटक भी कहा जाता है। तरंग रूपक तो ध्वनि चित्र हैं जिनमें पात्र वर्ग दिखाई नहीं पड़ता। आजकल आकाशवाणी केंद्रों से इनका प्रसार हो रहा है। इनमें कुछ केवल गद्य में हैं तो कुछ गद्य-पद्य मिश्रित, और कुछ केवल गीतों में। इनमें बड़े नाटक भी हैं और एकांकी भी। विशेषतः एकांकी ही अधिक हैं। कन्नड़ में ऐतिहासिक तरंग रूपक लिखने वालों में डा० एच्० के० रंगनाथ, श्री आनंदकंद, श्री नीलकंठ हणमंतराव शेड़बालकर के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके अलावा और भी हैं। डा० रंगनाथ के दुरंत और रक्तता एकांकी ऐतिहासिक रूपक, श्री आनंदकंद

के बेलवड़ी मल्लम्म और नवरात्रि एकांकी ऐतिहासिक तरंग रूपक, श्री शेड़बालकरजी का कित्तूर चेन्नम्म एकांकी ऐतिहासिक रूपक सफल तरंगरूपक हैं। यह क्षेत्र प्रगति-पथ पर है।

७. घटना प्रधान—ऐतिहासिक घटना-प्रधान नाटक लिखने वालों में श्री बी० भुजंगराव का नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपके 'उद्धार' और 'साहस' तथा 'प्रतीकार' नाटक इसके उत्तम नमूने हैं। ये नाटक पाँच-पाँच अंकों के हैं।

८. वचन शैली के रूपक—कन्नड़ साहित्य मे वचन साहित्य का एक विशिष्ट स्थान है। बारहवीं सदी मे शिव भक्ति धारा जब बहने लगी तब शिव-भक्तों ने वचनों की रचना की जो पठ्य भी हैं और गेय भी। इन्हें हम गद्य-गीत कह सकते हैं। ये हैं गीतांजलि के गीतों की तरह। इस शैली में 'अक्कमहादेवी' नामक नाटक लिखा गया जो कि 'मीराबाई' की तरह है। इसके रचनाकार हैं श्री बी० पुट्टस्वामय्य। वचनों से युक्त और भी ऐतिहासिक व्यक्ति प्रधान नाटक भी है जिनमें श्री एणगी बालप्प का 'जगज्योति बसवेश्वर'; 'शिवशरणी नंबेक्क' जो कि श्रीकंठ शास्त्री से विरचित है, उल्लेखनीय हैं।

ऐतिहासिक नाटकों की कथा-वस्तु—कन्नड़ में जो ऐतिहासिक नाटक, एकांकी लिखे गये हैं उनकी कथावस्तु बुद्ध के काल से लेकर आधुनिक काल की घटनाओं तक से चुन ली गई है, परन्तु विशेषत: कर्नाटक की ऐतिहासिक घटनाओं को लेकर ही ऐतिहासिक रूपकों की रचना की गई है और उसमें भी अधिकतर विजयनगर तथा मैसूर राजवंशों से संबंधित नाटक हैं।

श्री बी० पुट्टस्वामय्या के 'गौतमबुद्ध', श्री कुवेंपु के एकांकी 'महारात्रि', श्री मास्ति (श्रीनिवास) के 'यशोधरा' नामक नाटक तथा श्री शिवराम कारंत के 'किसा गोतमी', 'बुद्धोदय' नामक गीत नाटकों में बुद्ध के त्यागमय जीवन, उनके सिद्धांत, संसार दु:खमय है, उससे मुक्ति पाने का मार्ग मध्यम मार्ग है, मरे हुओं को कोई जिंदा नहीं कर सकता, जनता के कल्याण मार्ग का पथिक होना चाहिये, सभी को मुक्ति मार्ग का अधिकार है, स्त्रियों का कर्तव्य, स्त्रियों के त्यागमय जीवन का चित्रण आदि अभिव्यक्त हैं। इनसे बुद्धधर्म के प्रति सद्भावना पैदा होती है।

श्री श्रीरंगजी के 'परमेश्वर पुलकेशी' नामक नाटक में वातापिपुर के नरेशों की श्रेष्ठता, शूरता, परस्त्री की मानमर्यादा की रक्षा, पतिव्रता स्त्री का धर्म, पुलकेशी की हृदय-विशालता, धर्म-सत्य परिपालन निष्ठा, हर्षवर्द्धन को हार जाने पर भी राज्य लौटाने का त्याग, हर्षवर्द्धन के अहंकार का नाश, राज्यश्री की स्थिति, हर्ष और राज्यश्री का भाई-बहन-प्रेम, तत्कालीन स्थिति का सुन्दर चित्रण, प्रकृति वर्णन आदि सुन्दर रूप से अभिव्यक्त हैं और परमेश्वर पुलकेशी के महान् हृदय का चित्रण सुन्दर बन पड़ा है और उसकी दुष्ट दमन, शिष्ट-परिपालन की नीति, क्षत्रिय कुल की सच्ची रीति इस नाटक में प्रस्फुटित हुई है और पुलकेशी का महान् चरित्र अंकित है। इस नाटक के लिए ऐतिहासिक सामग्री हर्षचरित, बाणभट्ट की कादंबरी १८८२ की इंडियन

ऐंटिक्वेरी की पृष्ठ संख्या ६७, ११२ में उल्लिखित शिलालेख है। इस नाटक का प्रभाव यह हुआ कि लोगों ने अपने गत वैभव का स्मरण करके फिर नर्मदा तीर तक कर्नाटक राज्य स्थापित करने का स्वप्न देखना शुरू किया।

चंद्रगुप्त मौर्य के काल की कथावस्तु लेकर लिखित नाटकों में श्री पुट्टस्वामय्या 'प्रचंड चाणक्य', श्री मा० न० चौड़प्प का 'चंद्रगुप्त', डा० रंगनाथ की 'विषकन्या' नामक एकांकी प्रसिद्ध हैं। मौर्यकालीन संस्कृति तथा जीवन का सुन्दर चित्रण उनमें मिलता है। मौर्यकालीन इतिहास ही इन नाटकों का आधार है।

१२वीं सदी में कर्नाटक में एक ख़ास धार्मिक क्रांति हुई जिसके नेता थे बसवेश्वर जी। उन्होंने एक ऐसे समाज की नींव डाली जिसमें ऊँच-नीच, जात-पाँत, स्त्री-पुरुष का कोई भेद नहीं माना जाता था। एक ही शब्द में यदि कहना हो तो उनका समाज 'सर्वोदय' समाज का-सा था। सदाचार, भक्ति, कार्य पर उन्होंने ज़ोर दिया, शिव भक्ति की नींव डाली, जनता की भाषा को अपने धर्म का प्रचार-साधन माना। उनके कार्य से कर्नाटक में वीरशैव धर्म की स्थापना हुई जो कि एक महान ऐतिहासिक घटना है। इस समय के अनेक भक्तों की अर्थात् शिव भक्तों, भक्ताओं की जीवनी का चित्रण करने वाले अनेक नाटक लिखे गये जिनमें श्री एणगी बालप्पसे विरचित 'जगज्योति बसवेश्वर', बी० पुट्टस्वामय्या के 'अक्क महादेवी', 'प्रभुदेव', श्री० नलवड़ी श्री कंठशास्त्री के 'शिवशरणे नंबेक्क', 'सिद्धरामेश्वर', श्री० अ० न० कृष्णराव का 'जगज्योति बसवेश्वर' आदि उल्लेखनीय हैं। इन नाटकों में हम १२वीं १३वीं सदी के लोगों के जीवन तथा समाज का सुन्दर चित्रण पाते हैं और शिव भक्ति धारा का प्रभाव देखते हैं।

और एक नाटक है 'साहस' जो श्री बी० भुजंगराव से लिखित है। इसकी कथावस्तु कदंब वंश के मयूरवर्मा के समय की है। मयूरवर्मा ने राजनिष्ठ नायकों की सहायता से राजा बनकर कर्नाटक का उद्धार किया, व्यवस्थित साम्राज्य स्थापित किया और कपिध्वज को लहराया। राज्य में किसी क्रांति के बिना भेदोपायों से राज्य मयूर वर्मा को कैसे मिला, कपिध्वज को मान्यता कैसे मिली? यह घटना काल्पनिक है। इसमें ऐतिहासिक कथा तथा काल्पनिक कथा सुन्दर ढंग से मिली है। यह नाटक निष्काम कर्म, निष्कलंक प्रेम, तंत्र, अचल राजनिष्ठा, स्वार्थरहित सेवा का प्रभाव दिखाता है।

विजयनगर साम्राज्य का इतिहास कौन नहीं जानते? उस साम्राज्य को कर्नाटकी अपना साम्राज्य मानते हैं, उसके वैभव का स्मरण करके नई स्फूर्ति पाते हैं। अपने धर्म तथा राष्ट्र की रक्षा की कल्पना करते हैं और अपने जीवन को सुखी एवं समृद्ध बना लेने की बात सोचते हैं। विजयनगर साम्राज्य कर्नाटकियों की प्रेरणा एवं स्फूर्ति का केन्द्र है। अतः इससे संबंधित ऐतिहासिक नाटक कन्नड़ में अधिक संख्या में आये हैं। उनमें श्री हुयिलगोल नारायणरायजी के ५ नाटक श्री गरुड़ सदाशिव का 'एञ्चमनायक' श्री डी० वी० जी का 'विद्यारण्य विजय', डा० मुगली के 'सेवा प्रदीप'

और 'विजयनगर साम्राज्य' श्री मास्ति का 'ताली कोटे', श्री एम० आर० श्रीनिवास मूर्ति का 'नागरिक' आदि नाटक प्रधान हैं और वे विजयनगर कालीन संस्कृति तथा राजवैभव, राष्ट्रवैभव के सुन्दर चित्र रखते हमारे सामने और यह भी बताते हैं कि विलास और आपसी फूट विनाश और मृत्यु का दरवाजा खोलते हैं तथा स्त्री-व्यामोह व्यक्ति तथा राष्ट्र के लिए घातक है। इन नाटकों के अमर पात्र हैं—एच्चमनायक, विद्यारण्य, हरिहर, बुक्कदेवराय, रामराय, कृष्णदेवराय। यहाँ श्री रोहिडेकर श्यामराव से लिखित 'राजमुकुट' नाटक भी उल्लेखनीय है जिसमें रामराय के विजयनगर की रक्षा करने की घटना चित्रित है और हिन्दू-मुसलिम एकता के दृष्टिकोण से श्री आर० जी० कुलकर्णी जी से लिखित 'दिव्य-दर्शन' नामक नाटक भी उल्लेखनीय है।

'नागरिक' नाटक एक विचित्र अनोखा नाटक है। उसमें कथावस्तु इस प्रकार है—एक नवयुवक जो आजकल का है, विजयनगर साम्राज्य के खण्डहरों को देखने जाता है। वह एकेक भग्नावशेष देखते जाता है और उसके मन में अनेक भावनाएँ उठती हैं, अनेक समस्याएँ खड़ी होती हैं, वह पुजारी से बातें करता है, कल्पना जगत में विद्यारण्य से बातें करता है, देव मूर्तियों से तरह-तरह के प्रश्न पूछता है, इस प्रकार वह विजयनगर साम्राज्य का वैभव जानने का प्रयत्न करने जाता है तो उसके मन में पुनः पुनः अनेक प्रश्न उठते है, उन्हीं को इस नाटक में चित्रित किया गया है। विजयनगर काल से संबंधित नाटकों में अधिकांश नाटक ऐसे हैं जिनमें यत्र-तत्र प्रसंगानुसार गीत हैं। बहुतेरे नाटक संगीत नाटक ही हैं। इन नाटकों के लिए ऐतिहासिक आधार ग्रंथ ये हैं—Sewel's "forgotten Empire", Suryanarayan Rao's 'Never to be forgotten Empire', Ferista's 'History of Mohammadan Empire', नुनिज और पेज, निकितन और बारबोसा, निकोलो कांटी, अब्दुर्रज्ज़ाक के वर्णन, डा० सालेतोर की 'विजयनगर कालीन सामाजिक तथा राजनैतिक अवस्था' नामक पुस्तक, 'Aravidu Dynasty' by Father Herras, Sources of Vijayanagar History, published by Madras University.

मैसूर रियासत से संबंधित नाटकों में श्री 'संस' से लिखित नाटक ही अधिक हैं। उनमें 'बेट्टद अरसु', 'विगड़ विक्रमराय', 'सुगुण गंभीर' आदि प्रधान हैं। इनमें विशेषतः मैसूर राजप्रासाद से संबंधित है। 'बेट्टद अरसु' नाटक में मैसूर के तब के राज शासन में चलने वाले मकड़ी-मक्खी के खेल, पुराने बुजुर्गों की धाक, राजा की दुरवस्था, दरबार की अप्सराओं के आमोद-प्रमोद, बेट्टद अरसु की उज्वल स्वामिनिष्ठा, अधिकार-लालसा के चंगुल में फँसकर, वज्र से कठोर बनकर बढ़े हुए विगड़ विक्रमराय की कुटिलता, और उस सेनापति की मस्ती को दबाने वाले रणधीर कंठीरव कुमार के पराक्रम का वर्णन चित्रण एक छत्रछाया में किया गया है। 'विगड़ विक्रमराय' में सेनापति विगड़ विक्रमराय की षड्यंत्र का भंडाफोड़ करके उसे सदा के लिए इस संसार से बिदा किये जाने की घटना का सुन्दर चित्रण, जनता की मैसूर सिंहासन के प्रति निष्ठा की सुन्दर अभिव्यक्ति हम पाते हैं। इसी प्रकार 'सुगुण गंभीर' में मैसूर नरेशों के

संबंधी चित्रण हैं। कहा जाता है कि 'संस' में शेक्सपीयर के सभी नाटकीय गुण हैं। ये नाटक विशेषत: गद्य में हैं। श्री एम० आर० श्री का 'धर्मदुरंत' नाटक भी मैसूर इतिहास से संबंधित है और वह ब्लैंकवर्स में है। इसकी कथावस्तु यह है कि जब टीपू सुलतान ने बिदनूर किले को अपने कब्जे में कर लिया तब एक ब्राह्मण युवक टीपू का कैदी बनाया गया था जो कि आगे चलकर अपना धर्म तजकर, इस्लाम तत्व ज्ञान में निपुण बना था और टीपू का रिश्तेदार बना था। वह खान जहान खान बना था। वह अपना धर्म छोड़ने को बाध्य हुआ था। उसने एक मुसलिम युवती से विवाह कर लिया था, उसकी एक हिंदू स्त्री भी थी। उसने दोनों को संतुष्ट रखने का प्रयत्न किया। जब मैसूर राज्य तृतीय कृष्णराज ओड़ेयर के हाथ में आया तब उसने फिर ब्राह्मण धर्म में आने का विचार किया। पर उसकी इच्छा पूरी नहीं हो सकी। इसी कथावस्तु में थोड़ा अंतर करके यह नाटक लिखा गया है जो कि टीपू सुलतान के समय के मैसूर के जीवन पर प्रकाश डालता है। इस नाटक की आधार सामग्री ली गई है कर्नल विलकस के 'History of Mysore' से जो कि १८८९ में मुद्रित है।

अब हम मुगलकालीन इतिहास से संबंध रखने वाले नाटकों के बारे में भी थोड़ा विचार करें। श्री भुजंगराव से रचित 'उद्धार' नामक नाटक यहाँ उल्लेखनीय है। प्रतापगढ़, जोधपुर राज्य प्रसिद्ध हैं जो राजपूतों के अधिकार में थे। प्रतापगढ़ के साहसी विक्रमसिंह के शासन के समय में जोधपुर वाले सुखलोलुप, मुगलों के पक्षपाती रहे। पर वहाँ दुर्जयसिंह अपने भतीजे अजितसिंह की ओर से अधिकार चलाता था और वह मुगलों की ओर झुका हुआ था। यह अजितसिंह को कतई पसंद न रहा। वह विक्रमसिंह के यहाँ गया और उसके सेनापति जयसिंह की पुत्री से विवाह कर लिया और बड़े ओहदे पर रहा। यही बहाना पाकर दुर्जयसिंह ने प्रतापगढ़ पर आक्रमण किया। प्रतापगढ़ के समीप के शिविर में वह रहता था, तब के तीन दिनों में जो घटनाएँ हुईं उन्हीं का चित्रण इसमें है और अजित के अनुकूल दुर्जयसिंह हो जाता है।

इसी काल से संबंधित ऐतिहासिक नाटकों में श्री मास्ती का 'शिव छत्रपति', बी० भुजंगराव का 'प्रतीकार' तथा श्री विष्णुपंत ग्रानेल्लिडी का 'पंडित जी या निशारत्न, उल्लेखनीय हैं। शिवाजी के समय में मोरे चंद्रराव बड़ा साहसी था जिस की हत्या की गई। उसकी पुत्री 'तारा' इसका बदला लेती है, मोरे चंद्रराव के उपरांत जावली प्रांत शिवाजी के अधीन हो जाता है। यही कथावस्तु है 'प्रतीकार' में। 'निशारत्न' में कथावस्तु है—औरंगजेब ने जब विजापुर को घेर लिया था तब वहाँ के रुक्मिणी पंडित ने अद्भुत महत्कार्य किया और महामारी अष्टक स्तोत्र से एक गुली नामक रोग के प्रसार को रोका। इस अद्भुत घटना का चित्रण करने वाला नाटक है यह। इसके नाटककार ७८ वर्ष के बुजुर्ग हैं। आपने कुल २५-३० नाटक लिखे हैं, पर कोई आज तक प्रकाशित नहीं हुआ जो खेदजनक है।

सत्रहवीं सदी में बेलवड़ी नामक एक छोटा राज्य था जिसके अधिपति ईशप्रभु थे और उनकी रानी थी मल्लम्म। उस राज्य में एक बार शिवाजी के सैनिक जाकर लूटने लगे। इसे रोकने के लिए सैनिक भेजे गये। उनसे शिवाजी ने लड़ने को

अपनी सेना भेजी। लड़ाई हुई और उसमें ईशप्रभु मर गये। उनकी रानी मल्लम्म शस्त्र धारण करके आगे आई। यह समाचार शिवाजी को मिला और उसने लड़ाई रोक ली। शिवाजी महाराज को जब बीती सारी घटनाएँ विदित हुईं तो बड़ा कष्ट हुआ और अपना अपराध कबूल किया और मल्लम्म से आशीर्वाद माँगा। इस घटना का चित्रण श्री आनंदकंद ने अपने तरंग रूपक 'बेलवडी मल्लम्म' में सुन्दर ढंग से किया है। श्री बगरीजी का 'केलदिय चन्नम्म' एकांकी भी अच्छा है।

अब हम आधुनिक ऐतिहासिक नाटकों के बारे में विचार करें। बड़े ऐतिहासिक नाटक तो नहीं के बराबर हैं। जो हैं वे भी नाटक तंत्र की दृष्टि से उज्वल नहीं हैं। फिर भी एक दो नाटकों का उल्लेख करना उचित मालूम होता है। श्री बी० कल्याण शर्म से विरचित 'संगोल्ली रायण्ण' एक ऐतिहासिक संगीत रूपक है। कित्तूर को अंग्रेजों से बचाने का प्रयत्न करने वाली चेन्नम्मा राणी को सहायता देने वाले और कित्तूर में प्राण प्रतिष्ठा करने की इच्छा करने वाले वीर संगोल्ली रायण्ण के वीरमरण का चित्रण इसमें है और उसकी जीवनी भी संक्षेप में आई है। यह भी दिखाया गया है कि स्वार्थी किस प्रकार अपना स्वार्थ साधते हैं। विश्वासघात से वह पकड़ा जाता है और फांसी पर चढ़ाया जाता है।

'कित्तूर चेन्नम्म' एक रेडियो रूपक है जो श्री नीलकंठ हणभंत शेड़बालकर से लिखित है। इसमें यह कथावस्तु है—कित्तूर की रानी चेन्नम्मा ने अपने राज्य को, अपने अधिकार को बचाने के लिए अंग्रेजों से लड़ाई की और डेटिन्यू बनाकर अंग्रेजों से बैलहोंगल के किले में रखी गई और १८२४ दिसंबर २२ को कित्तूर की क्रांति बुझ गई। कित्तूर चेन्नम्मा झाँसी लक्ष्मीबाई की याद दिलाती है। तत्कालीन जनजीवन का चित्रण भी उक्त नाटकों में मिलता है।

संक्षेप में हमने कन्नड़ के ऐतिहासिक नाटकों की कथा वस्तुओं पर विचार किया और अब कन्नड़ रंगभूमि का भी संक्षेप में परिचय कर लें।

कन्नड़ रंगमंच

कन्नड़ रंगमंच का थोड़ा-सा इतिहास इसके पहले दिया जा चुका है। कर्नाटक में पहले पुतलियों का नाच दिखाया जाता था, यही नहीं, परंतु पौराणिक कथाएँ भी पुतलियों द्वारा दिखाई जाती थीं। पुतलियों को चलाने वाला ही बोलता और कहानी सुनाता था। यह नाटक की तरह ही लगता था। रंगमंच के लिए एक मंच होता, उसके पीछे एक काला परदा लटकाया जाता और एक मजबूत बांस आड़ा बाँधकर उसके आधार से खेल दिखाया जाता था।

किल्लीकेत का खेल दिखाया जाता था। इसमें यह प्रबंध होता था कि छः हाथ ऊँचा एक मंडप होता और सामने एक सफेद परदा, बाकी तीनों ओर काला परदा होता; एक टिमटिमाता दिया भी होता। इस प्रकार के रंगमंच पर रंगीन चमड़े की पुतलियाँ बनाकर और उन्हें राम-सीता नाम देकर उनका अभिनय दिखाया जाता और रंगमंच पर के लोग ही राम-सीता आदि की बातें सुनाते जाते। बीचबीच में

'किल्लीकेत' नामक एक अश्लील गुडिया लाते थे। जब वर्षा न हो तब यह खेल गाँवों में खेला जाता था।

यक्षगान का खेल भी होता है। एक बड़ा मंडप खड़ा किया जाता है और ऊँचा रंगमंच बनाया जाता है और उसमें कथाकार आख्यान का पद सुनाता है और पात्र अपनी बातें बोलते जाते हैं। विशेषत: पौराणिक कथाओं को लेकर यक्षगान प्रदर्शित किये जाते हैं।

इसी प्रकार दोड्डाट, बयलाट, मूड़लपायदाट है जो कि एक विशाल मैदान में मंडप खड़ा करके उसमें दिखाये जाते हैं। पौराणिक आख्यानक ही विशेषत: अभिनीत होते हैं जिनमें कथाकार कथा गाने जाता है और पात्र बोलते जाते हैं, इनमें भरतनाट्य भी दिखाया जाता है।

इसके बाद नाटकशालाओं में दिखाये जाने वाले नाटक आये। महाराष्ट्र में संगीत नाटक जब शुरू हुए तब कर्नाटक के उत्तरी भाग में उनका प्रचलन हुआ। इन नाटकों के लिए अच्छी रंगभूमि नहीं थी। ऐसी कोई अच्छी व्यवस्था नहीं होती थी जिससे नाटक परिणामकारी बनते। अत: सुशिक्षित लोगों ने इस ओर ध्यान देना शुरु किया। रंगमंच की सजावट, पात्रों की वेष-भूषा आदि की ओर ध्यान दिया जाने लगा। कभी-कभी रंगभूमि खाली रहती, इस ओर भी ध्यान दिया गया। श्री मुदवीड़ कृष्णराव ने धारवाड़ मे 'भरत कलोत्तेजक नाटक मंडली' की स्थापना करके कन्नड़ रंगमंच में सुधार किया। शिरहट्टी बेंकोबराव और वामनराव मास्तर की नाटक कंपनियाँ गरुड़ सदाशिवराव की दत्तात्रेय नाटक मंडली, कोण्णूर नाटक मंडली, वरदाचार नाटक कंपनी, गुब्बि वीरण्ण की नाटक कंपनी आदि अनेक कंपनिय नाटक-प्रदर्शन करती रही हैं। इनके अलावा वासुदेव नाट्य विनोदिनी सभा, रुक्मांगद मंडल, यंगमेन्स फुटबाल क्लब अमेचूर्स आदि अमेचूर नाटक मंडलियाँ भी इस दिशा में सराहनीय प्रयत्न कर रही हैं। आजकल नाटकों में नृत्य और गान न हो तो वे जनादर नहीं पाते। अत: करीब-करीब सभी नाटक संगीतयुक्त होते हैं। संगीत के बिना अभिनीत नाटकों में अधिकतर एकांकी हैं। परंतु गुब्बि वीरण की नाटक कंपनी आज भी अच्छी तरह जीवित है और अच्छी अवस्था में है। अन्य नाटक कंपनियाँ केवल जीव-धारण कर रही हैं जो कि देहातों में ही अपने नाटकों के प्रयोग करते हैं। सिनेमा ने नाटक-कला को एक प्रकार से कुंठित ही कर दिया है। बड़ी नाटक कंपनियों की अपेक्षा अमेचूर नाटक कंपनियों ने नये नये नाटकों का प्रयोग करके नई अभिरुचि विचार-क्रांति कर दी है। इन अमेचूर कंपनियों में उपरोक्त अमेचूर कंपनियों के अलावा बेंगलोर की ए० डी० ए०, धारवाड़ अमेचूर संघ, ज़मखंडी के नाट्य विलासी संघ आदि उल्लेखनीय हैं। नाटक कंपनियाँ धन के अभाव से प्रगति पथ पर अग्रसर नहीं हो सकीं हैं। अत: एक अखिल कर्नाटक नाट्य निलय के निर्माण की बात सोची जा रही है। कर्नाटक के विविध भागों में बोली जाने वाली कन्नड़ भाषा एवं संगीत पद्धति में एक-सूत्रता लाने का प्रयत्न किया जा रहा है ताकि नाटक समूचे-कर्नाटक की जनता के आदर-पात्र बन सकें।

सभी ऐतिहासिक नाटक रंगमंच पर अभिनय करने योग्य हैं, यों कैसे कहा जाय ? ऐतिहासिक नाटकों के लिए एक विशिष्ट प्रकार की रंगभूमि की आवश्यकता होती है जो कि आजकल कर्नाटक में नहीं है। उसके लिए ऐतिहासिक कथावस्तु के योग्य स्थानों और युद्धों को दरसाने के लिए योग्य परदों और आधुनिक उपकरणों की, अनुकूल बड़े नाट्यगृहों की जरूरत है । वेष-भूषा पुराने का थियेटर भी चाहिये। जो हो, अब हम यहीं विरमना चाहते हैं। लेख काफी बड़ा हुआ। फिर भी इसमें कुछ त्रुटियाँ रह गई हैं जिनसे लेखक परिचित है। लेखक यहाँ इतना ही कहना चाहता है कि यह लेख केवल परिचयात्मक है और त्रुटियों के लिए लेखक ही जिम्मेदार है। लेखक यहाँ यह भी कहना चाहता है कि इस लेख को जहाँ तक हो सके प्रामाणिक बनाने का प्रयत्न किया गया है। त्रुटियों के लिए वह पाठकों से प्रार्थना करता है— क्षमस्व !

कन्नड़ के ऐतिहासिक नाटकों की सूची

१. मोहलहरी	हुयिलगोल नारायण राव	(मौलिक)*
२. अज्ञातवास	,,	(,,)*
३. रण दुंदुभि	मुदवीड़ु कृष्णराव	(अनूदित)†
४. कर्नाटक साम्राज्य	,,	(मौलिक)†
५. प्रेम विजय	हुयिलगोल नारायणराव	(मौलिक)*
६. रामकुमार	,,	(,,)*
७. यदुराज विजय	एं० एस० राम स्वामी	(,,)
८. औरंगजेब	बी० गोपाल स्वामय्य	(?)
९. हेमरड्डी मल्लम्म	बल्लावे नरहरि शास्त्री	(मौलिक)
१०. भक्त तुकाराम	एं० एस० राम स्वामी	(?)
११. अशोक विजय नाटकं	परिमि पद्मनामय्य	(मौलिक)
१२. शाहजहान	बी० पुट्ट स्वामय्य	(?)
१३. विद्यारण्य विजय	डी० वी० जी०	(मौलिक)
१४. यच्चमनामक	गरुड़ सदाशिव राय	(,,)
१५. तालीकोटे	मास्ति व्यंकटेश अय्यंगार	(मौलिक)
१६. प्रताप सिंह नाटकं	सोसले अय्यशास्त्री	(,,)
१७. शिव छत्रपति	मास्ति अय्यशास्त्री	(,,)
१८. काकन कोटे	मास्ति अय्यशास्त्री	(,,)
१९. यशोधरा	मास्ति अय्यशास्त्री	(,,)
२०. संगोल्ली रायण्ण	बी० कल्याण शर्म	(,,)
२१. बिगड़ विक्रमराय	संस	(,,)
२२. सुगुण गंभीर	संस	(,,)
२३. नागरिक	ए० आर० श्री निवास मूर्ति	(,,)
२४. सेवा प्रदीप	डा० रं० श्री० मुगली	(,,)

२५. परमेश्वर पुलकेशी	श्रीरंग	(मौलिक)
२६. प्रतीकार	बी० भुजंगराव	(,,)
२७. जलंधर	रामस्वामय्यंगार	(,,)
२८. उद्धार	बी० भुजंगराव	(,,)
२९. मीराबाई	माधवार्य	(,,)
३०. वर प्रदान	कंदगल्ल	(,,)
३१. मयूर	देवुडु	(,,)
३२. पन्ना	महाबल भट्ट	(,,)
३३. राजमुकुट	रोहिड़ेकर श्यामराव	(,,)*
३४. पन्नादासी	अथणी मास्तर	(,,)*
३५. पंडितजी या निशारत्न	विष्णुपंत आने खिडी	(,,)*
३६. कित्तूर रुद्रम्मा	सावलगी मठ	(,,)
३७. मोग्गेय मारय्य	मांड्रे	(,,)
३८. कंठीरव विजय	एं० आर० श्री	(,,)
३९. धर्म दुरंत	,,	(,,)
४०. बेलवड़ी मल्लम्म	बेटदूर	(,,)०
४१. गौतमबुद्ध	बी० पुट्टस्वामय्य	(,,)०
४२. मेवाड़ पतन	गो० ल० हल्लेप्पनवर	(अनुवादित)
४३. विजयनगर साम्राज्य	डा० मुगली	(मौलिक)
४४. हेमरड्डी मल्लम्म	नलवडी श्री कंठ शास्त्री	(,,)०
४५. प्रभुदेव	बी० पुट्टस्वामय्य	(,,)
४६. प्रचंड चाणक्य	,,	(,,)
४७. साहस	बी० भुजंगराव	(,,)
४८. प्रतापसिंह	आर० व्यासराव	(अनुवादित)
४९. बेट्टदरसु	संस	(मौलिक)
५०. आर्यक	एस० जी० शास्त्री	(?)
५१. राजपूत लक्ष्मी	अ० न० कृष्णराव	(मौलिक)
५२. जगज्योति बसवेश्वर	,,	(,,)
५३. मागड़ी कंपे गौड़	,,	(,,)
५४. रक्ताक्षि	कुवेंपु	(,,)
५५. बिरुगालि	,,	(,,)
५६. शिवशरणे नंबेक्क	श्री कंठ शास्त्री	(,,)
५७. सिद्धरामेश्वर	,,	(,,)
५८. हेमरड्डी मल्लम्म	,,	(,,)
५९. रामराज	मां बाडी	(,,)
६०. दोरे सानी	कृष्णमूर्ति पुराणिक	(,,)
६१. राजवल्लभ	ह० पी० जोशी	(,,)

६२. सन्यासी	हु० पी० जोशी	(मौलिक)
६३. चन्द्रगुप्त	मा० ना० चौडप्प	(,,)
६४. कुम्मटवल्लभ	भूपाल वासुदेव	(,,)
६७. विषम विवाह	गरुड़ सदाशिवराय	(,,)
६८. कबीर दास	बेल्लावे नरहरि शास्त्री	(,,)
६९. कित्तूर केसरी	पुरि लक्ष्मणराव	(,,)
७०. चित्तूर पद्मिनि	कुलकर्णी बिदुमाधव	(,,)
७१. चन्द्रगुप्त	द्विजेन्द्रलाल राय	(अनुवादित)
७२. झांसी लक्ष्मीबाई	बेटदूर के० एस	(मौलिक)०
७४. तिष्य रक्षिता	बी० बी० ईश्वरराव	(अनुवाद)
७५. तेन्नाल रामकृष्ण	सी० के० वेंकट रामय्य	(मौलिक)
७६. तौलव स्वातंत्र्य	बेकल नायक	(,,)
७७. पृथ्वी संयुक्ते	गोविंद रेड्डी	(,,)
७८. साध्वी सखूबाई	सवणूर वामनराव	(?)
७९. बाजीराव पेशवा	,,	(?)
८०. कन्नड़ केसरी	बी० कल्याण शर्मा	(मौलिक)०
८१. सिंधूर लक्ष्मण	पुरि लक्ष्मणराव	(,,)
८२. कर्नाटक सिंहासन नाटक	हेगड़े नरसिंह	(,,)
८३. भद्राचल रामदास	शिवरामदास	(,,)
८४. पारसिकरू	बी० ए० श्री	(?)
८५. टीपू सुलतान	जी० एं० चिन्नप्प	(मौलिक)
८६. सिकंदर	उलवप्प हूगार	(?)
८७. नागानंद	श्री हरी	(?)
८८. बाहुबलि विजय	जी० पी० राजरत्नं	(मौलिक)
८९. कबीरदास	गरुड़ सदाशिवराय	(,,)
९०. दामाजीपंत	जी० एन० लक्ष्मण पै	(,,)
९१. दिव्यदर्शन	आर० जी० कुलकर्णी	(,,)
९२. बिरुदंतेंबर गंड	संस	(,,)
९३. मंत्रशक्ति	,,	(,,)
९४. भक्ति भंडारी	भूसनूर मठ	(,,)०
९५. लियो नार्ड	एस० जी० शास्त्री	(?)
९६. अक्कन हुंबल	श्री० सदाशिवय्य	(मौलिक)०
९७. कित्तूर चेन्नम्म	शेडबालकर	(,,)०
९८. दुर्गादास	पी० एस० राम	(?)
९९. जुलेखा	कैवार राजाराव	(मौलिक)०
१००. जगज्योति बसवेश्वर	एणगी बालप्प	(,,)
१०१. बेलवडी मल्लम्म	आनंदकंद	(,,) ×

१०२. प्रतिज्ञापालन	मनसबदार	(मौलिक)
१०३. २६ जनवरी	श्रीकृष्ण पाटील	(,,)
१०४. राक्षसन मुद्रिके	ती० नं० श्री	(,,)
१०५. केलदियचन्नम्म	बगरी एन० डी०	(,,)०
१०६. कल्याण ज्योति बसवेश्वर	रे० प्याटी मठ	(,,)०
१०७. तिष्यरक्षिता	वी० बी० ईश्वरराव (शि० वे० सु०)	(अनुवाद)०
१०८. आर्य चाणिक्य	पं० चे० कवली	(मौलिक)
१०९. महाराणी लक्ष्मी बाई	कुमठे सुब्बराव	(,,)०
११०. महाराणी	डा० रंगनाथ	(,,)०
१११. विषकन्या	,,	(,,)०
११२. राज्यश्री	,,	(,,)०
११३. दुरंत	,,	(,,)×
१५४. रक्षिता	,,	(,,)×
११५. राजसिंह	के० वें कप्प शेट्टी	(,,)
११६. यदुराय विजय	एं० एस० रामस्वामी	(,,)
११७. महारात्रि	कुवेंपु	(,,)०
११८. आर्यक	एस० जी० शास्त्री	(अनुवाद)
११९. शिल्पि चक्रर्वति	बादरायण मूर्ति	(मौलिक)
१२०. विरागिनी	कंठि सिद्धलिगप्प	(,,)
१२१. साविन समस्ये	वेंदार वेंकटाचार	(,,)
१२२. न्यायमंत्री	तिरूक	(,,)
१२३. बिज्ज महादेवी	लट्ठे म० शि	(,,)०
१२४. विद्यारण्य	हुइल गोल नारायणराव	(,,)
१२५. राज्य तृष्णे	श्रीकृष्ण पाटील	(,,)
१२६. सरपणी	पेजावर शदाशिव राव	(,,)०

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित ऐतिहासिक नाटक भी हैं जिनके लेखकों के बारे में प्रस्तुत लेखक को पता नहीं लग सका—

१. पृथ्वीवल्लभ
२. मेवाड़ केसरी
३. राजयोगी
४. स्वातंत्र्य संग्राम
५. अमर ज्योति
६. अलेक्जांडर

इस लेख के तैयार करने में मुझे कर्नाटक विश्वविद्यालय पुस्तकालय के कार्यकर्ता श्री श्रीनिवास हावनूर, मंगलोर एस० टी० कालेज के प्रिंसिपल श्री एस० आर० रोहिडेकर, बेलगांव एस० टी० कालेज के पुस्तकालय के श्री पी० के० पाटील,

प्रसिद्ध नाटककार श्री हुयिलगोल नारायण राव, धारवाड़ आकाश वाणी के डा० एच० के० रंगनाथ, धारवाड़ के प्रसिद्ध नाटककार, कथाकार, कवि बेटगेरी कृष्ण शर्मा, धारवाड़ और बेलगांव के पुस्तक व्यापारीगण तथा मेरे विद्यार्थी श्री बीड़कर ए० आर० आदि ने बहुत सहायता पहुँचाई है, अतः मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ और डा० रंगनाथ मुगली की 'साहित्योपासना' और हुयिलगोल नारायणराव', 'प्रबुद्ध कर्नाटक (त्रैमासिक) आदि से बहुत सहायता मिली। अतः इनका भी मैं कृतज्ञ हूँ।

* अप्रकाशित।

० एकांकी

× तरंग रूपक

श्री नटवरलाल अम्बालाल व्यास

गुजराती साहित्य में ऐतिहासिक नाटक

मध्यकालीन गुजराती साहित्य में नाटक की रचना नहीं होती थी। समर्थ महाकवि प्रेमानंद के नाम पर तीन नाटक मिलते हैं पर अब सभी ने स्वीकार कर ही लिया है कि इन नाटकों के लेखक महाकवि प्रेमानंद नहीं थे। सर्वप्रथम गुजराती नाटक "लक्ष्मी" (ई० स० १८५१ में) कविवर दलपतराम द्वारा लिखा गया। तदनंतर रणछोड़भाई उदयराम ने कई सामाजिक नाटक लिखे। गुजराती में नाट्यसाहित्य का निर्माण करने का श्रेय उन्हें ही मिलता है*। फिर भी गुजराती साहित्य में ऐतिहासिक नाटकों की कमी थी। गुजराती साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान् एवं Further milestones in Gujarati literature के रचयिता श्री कृष्णलाल झवेरी ने ठीक ही कहा है—"Of historical plays there is a paucity in Gujarati Literature."[1]।

सर्वप्रथम कवि गणपतराम ने 'प्रताप' नामक ऐतिहासिक नाटक लिखा। कला की दृष्टि से कई त्रुटियाँ होने पर भी यह एक अत्यंत लोकप्रिय नाटक रहा। इस नाटक में हमें 'प्रताप' का अत्यंत उच्च पात्रालेखन मिलता है। गुजरात के आदि विवेचक नवलराम पंड्या ने 'वीरमती' नामक ऐतिहासिक नाटक लिखा। इस नाटक में मालवा के परमार वंश के जगदेव और वीरमती के उच्च चारित्र्य, धैर्य एवं शौर्य को बताया गया है। यह नाटक अत्यंत सुन्दर संभाषण एवं गीतों से भरपूर है। श्री झवेरी के अभिमतानुसार यह नवलराम की सर्वोत्तम साहित्य-कृति नहीं है; फिर भी गुजरात के ऐतिहासिक नाटकों में 'वीरमती' का कम महत्व नहीं है। 'वीरमती' नाटक गंभीर है। फार्बस रचित 'रासमाला' के जगदेव परमार के अर्ध-ऐतिहासिक वृत्तांत से इस नाटक का 'वस्तु' लिया गया है। इस नाटक की रचना निर्बल होने पर भी कविता तथा तरह-तरह की प्रकृति वाले पात्रों के आलेखन में लेखक को अच्छी सफलता मिली है।[2]

---

*"The real credit, however, of creating dramatic literature in Gujarati belongs to Ranachhod bhai Udayram."
—Further Milestones in Gujarati Literature K. M. Jhaveri पृष्ठ १८६।

१. वही पृष्ठ १९२।

२. गुजराती साहित्यनी विकास रेखा—पृष्ठ ५०—डॉ० धीरुभाई ठाकर।

दोलतराम कृपाराम पंड्या ने अमरसत्र (प्रकाशन १६०२) नामक एक अर्ध-ऐतिहासिक नाटक लिखा है। 'अमरसत्र' की ऐतिहासिक कथावस्तु के साथ कई सामाजिक कथाएँ भी इसमें साथ-साथ चलती रहती हैं। इस नाटक में कथा-प्रवाह मन्द होने पर भी कई जगह रसियुक्त एवं आनन्द देने वाले प्रसंगों का चित्रण मिलता है।

तदनंतर बहुत समय तक सामाजिक उपदेश प्रधान नाटकों की गुजराती साहित्य में धूम रही। इसी समय में संस्कृत के महाकवि कालिदास और भवभूति के शकुन्तला, उत्तर रामचरित तथा अन्यान्य नाटकों का कई व्यक्तियों द्वारा अनुवाद किया गया। नरभेराम प्राणजीवन ने शेक्सपियर के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक 'जूलियस सीजर' का रूपांतर किया और नारायण हेमचंद्र ने ज्योतींद्र ठाकुर कृत बंगाली ऐतिहासिक करुणरस प्रधान 'अश्रुमती' नाटक का गुजराती में अनुवाद किया। इस नाटक में कविता का अनुवाद सुप्रसिद्ध कवि श्री नरसिंह राव दीवेटिआ ने किया था। नाटक के अनुवाद की सफलता का श्रेय श्री दीवेटिया को ही है। आज भी 'अश्रुमती' गुजराती साहित्य का एक सर्वोत्तम नाटक माना जाता है।[२] इस नाटक के फरीद और शाहज़ादा सलीम शेक्सपियर के प्रसिद्ध पात्र Iags एवं Othcllo की याद दिलाते हैं। 'अश्रुमती' की तरह ही 'पुरु विक्रम' भी बंगाली से अनुवादित ऐतिहासिक नाटक है।

अहमदाबाद के भीमराव भोलानाथ दीवेटिआ ने 'देवल देवी' (प्रकाशन इ० स० १८७५) नाम का मौलिक ऐतिहासिक नाटक लिखा है। मराठी भाषा से गुजराती में अनूदित होने वाले ऐतिहासिक नाटकों में 'माधवराव पेशवा' मुख्य है। इसी समय कवि सम्राट् न्हानालाल दलपतराम कवि ने 'जया-जयंत' और रमणभाई नीलकंठ ने 'राई नो पर्वत' नामक सुप्रसिद्ध नाटक लिखे। निर्व्याज मनोहर सामाजिक नाटकों के अतिरिक्त कवि न्हानालाल ने 'हर्षदेव', 'संघमित्रा', 'शाहानशाह अकबरशाह', 'जहाँगीर-नूरजहाँ' जैसे ऐतिहासिक नाटक लिखे हैं। कवि न्हानालाल के नाटक 'अपधागध' शैली में थे। उनके सभी नाटकों में अभिनयक्षमता का प्रमाण बहुत कम है। 'संघमित्रा' नाटक में सम्राट् अशोक की अहिंसा का आवेश व्यक्त करने वाली 'विश्वकथा' है। 'शाहानशाह अकबरशाह' एवं 'जहाँगीर-नूरजहाँ' इस्लाम को समझने-समझाने की एक हिन्दू की सच्चे दिल की चेष्टा है।[१] 'हर्षदेव' में कवि हमें भारतवर्ष के अतीत गौरव एवं 'हर्षदेव' की महत्ता का दिग्दर्शन कराता है। उनका प्रत्येक नाटक गौरवशाली है और यदि अभिनय-क्षमता के अतिरिक्त अन्य कसौटियों पर नाटकों को कसा जाय तो निःसंदेह वे प्रथम पंक्ति में आसन प्राप्त करने के योग्य ठहरते हैं। न्हानालाल कवि के नाटकों को भाव प्रधान नाटकों—Lyrical Dramas—कहना ही उचित होगा।

श्री कन्हैया लाल मुंशीजी ने भी 'ध्रुवस्वामिनी' (प्रकट ई० स० १६२६) नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक लिखा है। समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त भारत के प्रसिद्ध सम्राट्

1. Further Milestones in Gujarati. Literature. K. M. Jhaveri. पृष्ठ २०३।

२. गुजराती साहित्य नी विकासरेखा—खंडर—डॉ० धीरुभाई ठाकर, पृष्ठ १४१।

थे। पर इन दोनों के बीच के समय में समुद्रगुप्त के ज्येष्ठ पुत्र रामगुप्त ने गुप्तों का राज्यदंड थोड़े समय के लिए अपने हाथों में ले लिया था ऐसा नया अनुसंधान डॉ० सिल्वियन लेवी ने किया है। 'मुद्राराक्षस' के जगत प्रसिद्ध लेखक विशाखदत्त ने रामगुप्त के अधम एवं निन्द्य कृत्यों के विषय में एक 'देवी चंद्रगुप्तम्' नाटक संस्कृत में लिखा था। यह संस्कृत नाटक तो नहीं मिल सका, किन्तु इसी कथावस्तु के आधार पर श्री मुंशीजी ने 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक की रचना की है। स्वयं श्री मुंशी जी इस नाटक की भूमिका में लिखते हैं—

"यह ('देवी चंद्रगुप्तम्') नष्टप्राय नाटक की वस्तु में अन्य ऐतिहासिक एवं काल्पनिक घटनाएँ मिला कर नये स्वरूप में यह नाटक लिखने की मैंने चेष्टा की है।" रचना एवं अभिनय-क्षमता दोनों दृष्टिकोणों से—यह नाटक मुंशीजी की नाट्य सर्जन शक्ति को प्रकट करता है। चन्द्रगुप्त, राम गुप्त एवं ध्रुव देवी आदि पात्रों का आकर्षक आलेखन, चन्द्रगुप्त एवं ध्रुवदेवी के तीव्र मनोमंथनों का हृदयंगम निरूपण, चन्द्रगुप्त के पागलपन का अद्भुत प्रसंग और सारे नाटक के दृढ़ निबंधन से हमें प्रतीत होता है कि मुंशी जी नाट्यकार के स्वरूप में कितने कल्पना विहारी बन सकते हैं।* मुंशी जी के नाटक साहित्यतत्व एवं अभिनय—दोनों दृष्टियों से उच्च सिद्ध हुए हैं।

गुजरात के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री रमणलाल वसंतलाल देसाई ने भी 'संयुक्ता' नामक ऐतिहासिक नाटक लिखा है। 'संयुक्ता' अभिनय और कला की दृष्टि से एक उत्तम एवं सफल नाटक सिद्ध हो चुका है। इसमें संयुक्ता और पृथ्वीराज चौहान के स्नेह का चित्रण अत्यंत आकर्षक रीति से हुआ है। पात्रों के चरित्र-चित्रण में लेखक को पर्याप्त सफलता मिली है। श्री देसाई ने एक ही ऐतिहासिक नाटक लिखा। परन्तु, उसमें हमें कला के उच्च स्तर के एवं सरल, मधुर एवं भावमयी शैली के दर्शन होते हैं। श्री झवेरचंद्र मेघाणी ने बंगाली से, प्रसिद्ध नाट्यकार श्री द्विजेन्द्रलाल रॉय के 'शाहजहाँ' तथा "राणा प्रताप" ऐतिहासिक नाटकों का अनुवाद किया।

तदनंतर ऐतिहासिक नाटक लिखनेवाले अद्यतन लेखक हैं। प्रसिद्ध नट एवं नाट्यकार चंद्रवदन मेहता ने 'सोना वाटकडी' नामक ऐतिहासिक एवं 'धरागुर्जरी' नामक अर्ध-ऐतिहासिक नाटक लिखे हैं। दोनों अभिनय की दृष्टि से सर्वाङ्गपूर्ण हैं; क्योंकि लेखक स्वयं एक नट होने से अभिनय के तत्वों से सुपरिचित है। अपने प्रत्येक नाटक में अभिनय तत्व पर वे अधिक बल देते रहते हैं। श्री रसिकलाल परीख ने भी 'मेना गूर्जरी' नामक एक ऐतिहासिक नाटक लिखा है। इस नाटक का प्रधान विषयगूर्जरी नारी की वीरता, देहाती जीवन के आनंद और दिल्ली के सुलतान की अधमता है। ऐतिहासिक तथ्यों के साथ साथ ही लेखक ने लोक-साहित्य का भी पर्याप्त उपयोग किया है। श्री 'दर्शक' ने '१८५७' और 'जलियांवाला' नामक दो ऐतिहासिक नाटक लिखे हैं। '१८५७' में उस समय के ऐतिहासिक एवं सामाजिक जीवन से लेखक हमें परिचय कराता है। 'जलियांवाला' नाटक में अंग्रेजों की क्रूरता के साथ साथ उदयोन्मुख भारतीय संस्कृति का

---

*गुजराती साहित्यनी विकास रेखा खंड २ पृष्ठ २१२ डॉ० धीरूभाई ठाकर

लेखक ने वर्णन किया है। श्री० जशवन्त ठाकर के नाट्य संग्रह 'रजिया बेगम' में कई ऐतिहासिक एकांकी हैं। उपन्यास, नवलिका इत्यादि अन्य साहित्य-प्रकारों की तरह ऐतिहासिक नाटक में विशेष देन लेखकों द्वारा नहीं हुई है। आशा है, इस विषय की ओर गुजरात के समर्थ साहित्यिकों का ध्यान जाएगा और वे अत्यंत उच्च एवं कलामय, रस पूर्ण ऐतिहासिक नाटकों से गुर्जरी गिरा को विभूषित करेंगे।

डॉ० कृष्णचन्द्र शर्मा "चन्द्र"

मेरठ जनपद के लोकगीतों का अध्ययन

भारत में लोकसाहित्य-संबंधी शोध-कार्य को आरम्भ करने वाले कुछ विद्याव्यसनी पादरी लोग अथवा अंग्रेजी शासन के उच्च कर्मचारी थे। उन लोगों ने जो कुछ किया—यद्यपि वह एकांगी दृष्टि से ही किया गया था—उसके लिए वह हमारे साधुवाद के पात्र हैं। हिन्दी में इस कार्य में प्रथम अग्रसर होने वाले श्री रामनरेश त्रिपाठी हैं। इनके पश्चात् श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने अन्तर्प्रान्तीय भाषाओं के लोकगीत संग्रह का कार्य किया। ऐसे कुछ छुटपुट प्रयत्न और पहिले भी हो चुके थे, किन्तु उनका वैज्ञानिक रूप न था। वास्तव में हिन्दी में यह कार्य वैज्ञानिक ढंग पर "हिन्दी में जनपदीय आंदोलन' से आरम्भ हुआ है, जिसके प्रवर्तकों में श्री बनारसी दास चतुर्वेदी, डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, आचार्य पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी और श्री राहुल सांकृत्यायन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। किन्तु इधर जब से हिन्दी के विद्वानों का ध्यान गया है, तब से इस दिशा में पर्याप्त कार्य हो चुका है। मेरठ जनपद के लोकगीतों का यह अध्ययन भी उसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है।

मेरठ खड़ी बोली का क्षेत्र और शर्करा-प्रांत है। परन्तु यहाँ के लोगों की बोली में मिठास नहीं। हां, जिस तरह ऊख के कठिन छिलके के भीतर तरल मधुर रस भरा होता है, ऐसे ही मेरठ की इस 'उजड्ड-भाषा' (जनपदीय बोली) में भी मधुर कोमल भावनाओं की कमी नहीं है। मेरठ लोकगीतों के अध्ययन से यह स्पष्ट होगा। मेरठ के गीत अन्य प्रान्तों के गीतों से निराले नहीं हैं, और निराले भी हैं। इस विरोधाभास का तात्पर्य यह है कि जहाँ तक देश की सांस्कृतिक एकता का प्रश्न है, वहाँ सभी जातियों और सभी प्रान्तों के गीतों में एकता है, किन्तु स्थानीय प्रभाव और जातिगत विशेषताओं पर ध्यान दिया जाय तो यह भिन्नता में एकता और एकता में भिन्नता लोकसाहित्य का सौंदर्य है। इस दृष्टि से मेरठ के लोकगीत जहाँ दूसरे प्रान्तों के गीतों से साम्य रखते हैं, वहाँ उनकी कुछ निजी विशेषताएँ भी हैं जिनसे प्रभावित होकर ही एक बार मेरे मुख से उनकी प्रशस्ति में ये पंक्तियाँ निकल पड़ी थीं—

जन-बोली श्रुति-मधुर भाव सक्षम स्वर-सुन्दर।
अलंकार रस वृत्ति व्यंजना सरित मानसर ।।

लोक प्रिय अपार हार चौपार द्वार घर ।
नेग-टेहले उत्सव-मेले प्रात-रात-भर ।।
गूंजि रहे गृह कानन, पावस मधु ऋतु शीत में ।
सुधासार सरसी सरस सुरस ग्राम के गीत में ।।

यह वास्तविकता है कि लोकगीत का श्रचित्य 'स्वतः स्फूर्त' साहित्य बेजोड़ है । इसकी तुलना लोक कवियों की रचनाओं, गीति-काव्य एवं सिने-संगीत, किसी से भी नहीं की जा सकती । न उनमें यह माधुरी है न यह मिठास, न यह वेग है न अनुभूति । नियमों और बंधनों की दासता स्वीकार कर सायास सृजन किया गया यह साहित्य भला उन्मुक्त लोकगीत की समता कहाँ कर सकता है । लोकगीतों ने यद्यपि यह दावा कभी नहीं किया; किन्तु यह निर्भ्रान्त सत्य है कि उनका समाज, साहित्य और संस्कृति पर महत्तम प्रभाव पड़ा है । महाराज मनु के अनुसार—

'निषेकादिश्मशानान्तो······'

जन्म से अंत्येष्टि तक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र और प्रत्येक स्थिति में उनका अधिकार है । हिन्दू का जन्म-मरण दोनों ही गीत के साथ होते हैं । इस प्रकार लोकगीत समाज के शरीर से लगी छाया के समान हैं ।

आचार्यवर पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोकगीतों को आर्येतर सभ्यता के वेद (श्रुति) कहा है । इससे यह ध्वनि निकलती है कि वह लोकगीतों को मरण-धर्मा साहित्य की श्रेणी से पृथक् कर यह कहना चाहते हैं कि लोकगीत-साहित्य अमर और अनादि है । श्री० राल्फ वी० विलियम्स के मतानुसार भी लोकगीत कभी 'नया पुराना नहीं होता', न उसकी आयु का ही निर्णय किया जा सकता है । इससे यह परिणाम निकलता है कि लोकगीत अमर रचना हैं, और वह देश-काल की सीमाओं को स्वीकार नहीं करते । इसी कारण नए-पुराने और एक तथा दूसरे प्रान्त के गीत मिलजुलकर सदा चलते रहते हैं । भारत जैसे महादेश को एक विशाल सांस्कृतिक-सूत्र में बाँध रखने का श्रेय इन्हीं को है ।

मेरठ खड़ी बोली प्रान्त का हृदय है, जिसकी सीमाएँ एक ओर पंजाब के पैशाची प्राकृत-प्रदेश तथा दूसरी ओर शौरसेनी के मृदुभाषी ब्रज-जनपद से मिली हुई हैं । दिल्ली से निकटता के कारण यहाँ की बोली में अरबी-फ़ारसी तथा अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द भी बड़ी मात्रा में सम्मिलित हो गए हैं, जिनका प्रचलन यहाँ की जनता में खूब है । ज़िले में 'जाट' बहुसंख्यक जाति है और उनके रहन-सहन व स्वभाव का अन्य लोगों पर भी प्रभाव पड़ा है । इसीलिए यदि किसी को 'दो टुकड़े बात' कहने का अभ्यास करना है, तो यहाँ आकर दीक्षा ले । मेरठ की बोली में लक्षणा, व्यंजना की प्रधानता है, जो यहाँ के निवासियों के विनोदी-स्वभाव का परिचय देती है ।

उक्त परिचय से सहज ही जाना जा सकता है कि स्थानीय प्रभाव से युक्त इस प्रदेश के गीत कुछ अपनी विचित्रता अवश्य रखते हैं ।

रोदन और गायन में स्त्रियां निपुण होती हैं अतः पहिले इन्हीं के गीतों को लें। मेरठ जनपद के स्त्रियों के गीतों का वर्गीकरण इस भाँति किया जा सकता है—

१—नेग-टेहले और संस्कारों के गीत।

२—पंचदेवोपासना तथा स्त्रियों के अन्य धर्म-संबंधी गीत;

३—जीवन, व्यवहार-संबंधी स्त्रियों के गीत।

१—पौरोहित्य-संस्कारों के अतिरिक्त विशेष अवसरों पर स्त्रियों में और कुछ 'पूजा-मनसी' तथा अभिचार-अनुष्ठानादि चला करते हैं। इन गीतों का संबंध इन्हीं सबसे है। संस्कारों में जन्म, मरण, और विवाह विशेष हैं, और इनसे संबंधित गीतों की संख्या अपरिमित है। इनमें जन्म और विवाह के गीत विशेष हैं जो वर्ण्य-विषय और रचना-विधान दोनों ही दृष्टि से उत्तम कहे जा सकते हैं। जन्म-गीत 'बैठी-ढोलकी' पर धीरे-धीरे मंदलय में गाए जाते हैं। इनको 'बिहाई' कहते हैं। इसके अतिरिक्त जन्म से संबंधित अन्य अवसरों (जैसे छठी, जसूटन, कुआं-पूजन) के गीत भी हैं, जिनका विशाल वर्गीकरण किया जा सकता है; क्योंकि अकेले जन्म-संस्कार से संबंधित लगभग ग्यारह प्रकार के गीत गाए जाते हैं, यथा—

१—बिहाई २—दाई ३—पर्दा ४—खिचड़ी ५—जीरा ६—कठुला ७—पालना ८—नन्द-नन्दौयं ९—छठी १०—कुआँ-पूजन ११—जगमोहन।

इन गीतों मे बिहाई अथवा 'व्याही'-'बँ' के गीत सर्वाङ्ग-सुन्दर हैं। बिहाइयों में भी तीन प्रकार के गीत चलते हैं जिनमें कुछ गर्भ-स्थिति व गर्भ-लक्षणों के सूक्ष्म वर्णन हैं, कुछ में गर्भिणी की इच्छा, रुचि व घरेलू व्यवहार का चित्रण है, और शेष प्रसव-वेदना, और प्रसवा की मनुहारों तथा कल्पनाओं के विषय में हैं।

जन्म-गीतों के अध्ययन से ज्ञातव्य बातें यह हैं—

(१) इन गीतों में प्रतीकों का बहुतायत से प्रयोग हुआ है।

(२) यह घरेलू जीवन के अंग-विशेष (जिसमें नन्द-भौजाई, देवर, सास इत्यादि के व्यवहार सम्मिलित हैं) की सुन्दर झाँकी प्रस्तुत करते हैं।

(३) इन गीतों में मनोवैज्ञानिक अध्ययन के सुन्दर उदाहरण ह।

(४) यह हमारी परम्परागत संस्कृति के ज्ञान-कोष हैं।

(५) सार्वदेशिकता व सार्वजनीनता इन गीतों की आत्मा है।

यदि जन्म के अन्तर्प्रान्तीय गीतों का अध्ययन किया जाय तो उनमें सादृश्य और समानता अधिक तथा भिन्नता कम मिलेगी। यह गीत जिस प्रकार समाज के सभी ऊँच-नीच वर्ग में समान भाव से गाये जाते है, ऐसे ही विभिन्न स्थानों में एक भाँति से चालू रहते हैं। गीत किसी की बपौती नहीं, वे सार्वजनिक हैं। इसलिए उनका प्रभाव-क्षेत्र सीमित नहीं। संचरणशीलता उनका गुण है। यद्यपि दूसरी जगह पहुंचकर घुलमिल जाने और देश-काल के अनुरूप परिधान बदल लेने के बाद गीत पहचाने जाने भी कठिन होते हैं। फिर भी, स्थानीय प्रभाव (लोकल कलर) उन्हें भिन्न संज्ञा देता है। ये गीत बड़े पुराने हैं। डा० श्री वासुदेव शरण अग्रवाल ने लिखा है कि वाण भट्ट ने महाराज हर्ष के जन्म पर भी ऐसे गीतों (रासक-पदों) के गाए जाने का उल्लेख किया है। मेरठ के

नगर और ग्राम से संकलित दो भिन्न जन्म-गीतों के उदाहरण लीजिए—

१— एक तो मैं अंग की पतली, दूजे नाजक भई रे राजा
तीजे मेरी कमर में दरद, हमारी सुध कौन ले।
सास मेरी सोवे चौबारे, और ननद उसारे रे राजा
जी का प्यारा सोवे मलनिया के घर हमारी सुध कौन ले।⋯⋯

गीत में पुरुष की वासनात्मकवृत्ति, और पुत्र की जाया का वर्णन हुआ है। प्रसूता अपने पति के इस व्यवहार से खिन्न है, और अपने को अपमानित हुआ पाती है, जिस पर उसकी सास व्यवस्था देती है—

सुनियो जी मेरी सासू, श्रो सदा री सुहागन, श्रो बड़भागन री
तेरे बेटे ने दिया है जुवाब, कहो तो क्या कीजिए।
सुनिये री मेरी बहुअड़ सदा री सुहागन
तुमने जाए नंदलाल बुरा मत मानिए।

गीत की अन्तिम पंक्ति विदग्धता का अति उत्कृष्ट उदाहरण है। 'तुमने जाए नंदलाल' शब्दों की कैसी विचित्र ध्वनि और व्यंजना है। सास बहू को समझाती है कि—

१—यह सब केवल परिहास था—अन्यथा तेरा पति तुझे छोड़ेगा क्यों? उसने यह सब हर्षोल्लास में छेड़छाड़ की होगी।

२—पुरुषों की (पालीगैमस) वृत्ति ही ऐसी है, तथा तुम भी तो इस अवसर पर रति-व्यापार के अयोग्य थी अतः शिकायत भी क्या?

३—तुम कुलजात की माता हो—तुम्हारे मान को कोई ठेस नहीं पहुँचा सकता है। अर्थात् तुम्हारा तो आदर होगा ही। तुम इस नासमझी की बात पर ध्यान न दो।

२—गूंद कणी के लड्डू मेरी सास्सु ने चरोए जी।
सास्सु जी के साथ पकड़ के कोट्ठे भित्तर ल्याइयों जी
कोट्ठे भित्तर ना भान्नें दूकड़िया भित्तर, तिकड़िया भित्तर ल्याइयो जी
तिकड़िया भित्तर ना भान्ने, ल्हौरी ताल्ड़ा जड़वाइयो जी
जिब ताल्ड़े भित्तर ना भानें, किक्कड़ की लोध मंगाइयो जी
किक्कड़ की लोधां ना भान्नें तो सूंडासूंड मचाइयो जी।
गूंद कणी के लड्डू मेरी सास्सु ने भूत्रा ने चरोए जी⋯⋯

गीत में ग्रामीणा का संकुचित मनोविज्ञान दिया गया है। सास-बहू में प्रायः तनाव रहता ही है अतः उसने अनुकूल अवसर पाकर वैर-शोधन की युक्ति सोच ली। गीत गाते समय स्त्रियाँ सास ही नहीं, परिवार की अन्य बड़ी-बूढ़ी तथा नाते-रिश्ते की स्त्रियों के लिए भी यही सब कहती हैं। यह लोक-गीतों में व्याप्त समूह-भावना का परिणाम है, जो उक्त अवसर पर शुद्ध-परिहास के रूप में प्रगट हुई है। इस भाँति जन्म के अवसर पर गाए जाने वाले गीत लोक-व्यवहार का सम्यक्-ज्ञान कराने वाले तथा मनोरंजनकारी हैं।

विवाह के गीतों में लड़की के विवाह में गाए जाने वाले 'लाड़ी' अथवा 'लाड़ो

(मेरठ के देहात में 'ल्याड़ो' कहा जाता है) तथा विदा-गीत अतीव सुन्दर हैं। इनमें तुल्य-योग्यता वाले वर की याचना, कन्या का रूप-वर्णन, तथा प्रसुप्त अनादि-वासना को जगाने का यत्न किया गया है। एक उदाहरण लीजिए—

मेरे बाबा जी चतर
तुम एक जस लो।
ये लहट्वे का चोर पकड़
क्यों न दो।.........

विदागीत अतिशय करुण हैं और उनमें कितने ही करुणा के साथ अमर्ष का योग करने वाले भी। इनमें कन्या कहती है कि मेरे चले जाने पर यहाँ अमुक-अमुक काम नहीं होगा और उसके पारिवारिक मानो 'दुहिता दुहिता दूरेहिता' का पाठ पढ़कर उसे घर से बाहर करने पर तुले हैं। ऐसे गीतों में खीज भरी हुई है। कुछ गीतों में 'जागरण-गीत', 'बधावे', और 'भात' सुन्दर हैं, और भातों में हास्य और करुणा का अच्छा संकर हुआ है। यह गीत भाई-बहिन के उत्कृष्ट स्नेह के उदाहरण हैं। जागरण-गीतों के अन्तर्गत गाए जाने वाले मेहँदी, दिवला, तिलवा, दाँतुन नाम के गीत भावपूर्ण हैं, तथा विवाह के और गीतों की अपेक्षा लम्बे भी होते हैं। इस अवसर पर ढोला नाम के 'राही गीत' भी गाए जाते हैं—जिनमें वासना का विलास अत्यधिक होता है।

मृत्यु गंभीर अवसर है। इस समय का रोदन ही गान होता है। स्त्रियाँ इस अवसर पर जो विलाप करती हैं, वह बड़ा हृदय-विदारक होता है। बड़े-बूढ़ों की मृत्यु पर 'उलाहनो' नाम के गीत गाए जाते हैं। इनमें मृतक के भाग्य की सराहना एवं कोमल हास-व्यंग्य रहता है।

भारतीय स्त्रियों को धर्म व संस्कृति की रक्षिका कहा गया है। यह उनके धर्म-सम्बन्धी गीतों से प्रगट है। इस प्रकार के गीतों में पंच-देवोपासना (सूर्य, विष्णु, शिव, गणेश, देवी) के गीत हैं, किन्तु इनसे कहीं अधिक उत्साह से गाए जाने वाले ग्राम-देवताओं के गीत हैं, जिनकी अपार संख्या है। ऐसे गीतों में मातृ-पूजा के गीत विशेष हैं। इनके अतिरिक्त कुछ गीत 'उलग' नाम से गाए जाते हैं। इनकी संख्या सोलह है। स्त्रियाँ इनको विशेष अवसरों पर गाती हैं। विवाह में भी ये गीत गाए जाते हैं। स्त्रियों के अधिकांश पूजा-गीतों में प्राच्य-मानव की प्रकृति-पूजा के संस्कार मिलते हैं। 'उलग' शब्द कदाचित् 'उरग'—सर्प से निकला है। ग्रामों में सर्प को देवता कहते हैं और उसकी पूजा की जाती है। हो सकता है कि पहिले उलगों का सम्बन्ध इन्हीं की पूजा, अर्चा से हो और बाद में इनमें अन्य देवता-सम्बन्धी गीत 'सर्व देव नमस्कार : केशवं प्रति गच्छति' की भावनानुकूल जुड़ गए हों, क्योंकि आज-कल इनमें ऊत, सत्ती, पीर, हनुमान, वाराही बूढ़े-बाबू (ब्रह्मा ?) आदि के गीत भी सम्मिलित हैं। इन गीतों में प्राचीन अनार्य जाति की उपासना व तांत्रिक अभिचारों के संस्कार हैं। गीतों में आए हुए अनेक वस्तुओं के नाम उनका सम्बन्ध प्राचीन आर्य-संस्कृति से स्थापित करते हैं।

नेग-टेहले और पूजा-उपासना के गीतों से कहीं अधिक विशाल संख्या में स्त्रियों

के जीवन, व्यहार-संबंधी गीत हैं। इनमें ऋतुगान, दैनिक-चर्या, उत्सव-मेले तथा सामाजिक, राजनीतिक आंदोलनों का प्रभाव प्रगट करने वाले सामयिक गीत हैं।

ऋतुगान स्त्रियों की भावमयता के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। मेरठ जनपद के ग्रामों में सावन के गीतों को 'पंजाली के गीत'[1] कहा जाता है। इन गीतों में शृंगार का विशद् वर्णन हुआ है, यद्यपि विरह प्रधान है। इस प्रकार के गीतों में उद्दाम वासनाओं के चित्र कहीं-कहीं अश्लीलता तक पहुँच गए हैं; परन्तु स्मरण रहे कि लोक-साहित्य जीवन से उद्भूत है, और जीवन में जो कुछ है, वह अश्लील नही कहा जा सकता। संपूर्णता में अश्लीलता होती ही नहीं है। सावन के गीतों में भाँति-भाँति के चरित्रों का मनो विश्लेषण तथा उनकी भावनाओं का चित्रण हुआ है, जो किसी भी चित्रकार के प्राणमय चित्र से किसी भाँति कम नहीं है। वस्तुतःऐसे गीतों को देख-सुनकर ही कहा जा सकता है कि कविता[2] बोलता हुआ चित्र है। सावन के गीतों में नायिका-भेद के अनेक उदाहरण मिलेंगे। इनमें यदि केलि-कलामयी-कामनियों का हेला-हाव है, तो प्रोषित-पतिकाओं के आँसुओं और परित्यक्ताओं के गर्हि -निश्वास व ईर्ष्यालु सपत्नियों के विष-वमन की भी कमी नहीं है। इनमें कुनटाओं के चरित्र वर्तमान हैं और हिन्दू नारी के हिमालय जैसे उच्चादर्श का भी वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त घरेलू जीवन के अन्य अनेक चित्र इन गीतों में बड़ी मात्रा में मिलते हैं, जिनसे कहा जा सकता है कि ये सावनी गीत गृहस्थ जीवन की अनेक झांकियों के चित्राधार ही हैं। इनमें प्रकृति का आलम्बन और उद्दीपन-वत वर्णन है, किन्तु प्रधानता दूसरे प्रकार की ही रहती है। सावन के अनेक गीत अपने आकार और लयात्मकता[3] के लिये प्रसिद्ध हैं। खण्ड-काव्य जैसी इन लम्बी रचनाओं में नाटकीयता का पुट बड़े कौशल के साथ दिया गया है। कथोपकथन इनका प्राण है। सावन में गाये जाने वाले भाई-बहिन के गीत अत्यन्त कारुणिक हैं। इनमें प्रायः सास-ननद के दुर्व्यवहार की चर्चा हुई है। साथ ही, इन्हीं गीतों में हम वासना-रहित शुद्ध-स्नेह का आस्वादन कर सकते हैं।

मेरठ जनपद में गाए जाने वाले पंजाली के गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

इन्दर राजा बाग्गों झुक रए जी।
कात्तन तूवण हे री सास्सु हम गईं जी
राजी कोई सुणियाई नवी-नवी बात। इन्दर राजा·······

---

१. झूले में डाला हुआ लम्बा खटोला जिस पर कई स्त्रियाँ एक साथ बैठकर झूलती और गाती हैं तथा पुरुष झुलाते हैं।

२. दे० 'स्कंदगुप्त' : जयशंकर प्रसाद, पृ० १६।

३. सावनी गीतों में, जहाँ भी झूलने वाली स्त्रियों के समूह का वर्णन आया है, वहाँ 'सात सहेली के झूमके' शब्दों के द्वारा उनकी संख्या सदैव सात बतलाई गई है। मानों वह सात सहेलियाँ नहीं, अपितु स्वर-सप्तक के सातों स्वरों के साकार स्वरूप ही हैं, जिनके संयोग से संगीत स्वयं प्रगट हो जाता है। लोकगीतों की सामूहिक चेतना का इससे सुंदर उदाहरण और क्या हो सकता है।

काल, परों अक आज ही हे री
तेरा बेट्टा का दुजा ब्याह। इन्दर राजा........
क्या तो री सास्सु हम काल्डे कुंल्लाडे
क्या लाए थोड़ी संग दात्त। इन्दर राजा........
ना बऊ री तम काल्ली कुल्लांडी
ना संग लाई थोड़ी दात्त
(छवड़ों में आई थारी दात्त)। इन्दर राजा........
तमरी बहू तन सांवली जी
कोई मेरे बेट्टे कु गोरी धन का चाव। इन्दर राजा........

सावन के गीतों में बारहमासे, छः मासे और चौमासे के गीतों की गणना पृथक् की जानी जाहिये। ये गीत मानों महिलाओं की वर्ष-भर की डायरी अथवा ऋतु-ऋतु की मासिक रिपोर्ट हैं। इनमें मनुहारों का कथन बड़ी ललक के साथ हुआ है। बारहमासों की अपेक्षा छः मासे और चौमासे में वैयक्तिकता का पुट अधिक मालूम होता है।

भारत का ऋतु-चक्र बड़ा अनोखा है। यहाँ प्रत्येक ऋतु एक नूतन उल्लास लिए आती है, और फागुन का तो कहना ही क्या, जिसके लिये कहा जाता है—

'फागुन में जेठ कहै भाबी।'

फागुन का मस्त महीना मेरठ जनपद की प्रकृति के अनुकूल है। इस समय काश्तकार अपने श्रम का साकार रूप निहार कर निहाल हो जाता और खुशी से नाच उठता है। स्त्रियाँ और पुरुष रात-रात भर होली गाते रहते हैं। स्त्रियों के फागुन के गीत 'पटके' कहलाते हैं, जिनको वह मंडलाकार नृत्य करती हुई, एक-दूसरे की हथेली में हथेली मारकर, ताल उत्पन्न कर गाती हैं—

डांडे[४] म्हारे घर[५] के औ बाल्ले म्हारे घर के,
सिमाद्दे[६] लिल्ली[७]-बूंद यो सोमा थारे घर की।
बडाई[८] म्हारे घर की॥

ब्रज में रसिया की तरह 'होली' मेरठ जनपद का अपना गीत है। यहाँ पिछले २५० वर्ष में होलियों की अनेक रंगतें बदल चुकी हैं। 'होली' के गीत भी होली नाम से पुकारे जाते हैं। इनमें लौकिक, आध्यात्मिक, गार्हस्थ्य, सामाजिक व राजनीतिक— कोई विषय छूटा नहीं है। मेरठ की जनता सदैव सब विषयों में बड़ी सावधान और जागरूक रही है। होलियों में जाति-भेद तथा देश-भेद, नायिका-भेद के वर्णन भी

---

४. कान का आभूषण।
५. घर।
६. सिलवादे।
७. नीले रंग की छींट का कपड़ा।
८. प्रशंसा।

पाये जाते हैं, जो इन ग्रामीणों की गहन निरीक्षण-शक्ति और व्युत्पन्नमति के उदाहरण हैं।

स्त्रियों के चर्या-गीतों में श्रम का महत्त्व प्रतिपादित हुआ है जिसमें इस जनपद की आत्मा मुखर हो उठी है। चक्की-चूल्हे, झाड़ू-बुहारी तथा पनघट आदि के गीतों के साथ संपृक्त 'सिला बीनने' के गीत हमको इस बात की सूचना देते हैं कि कृषक-भार्या का जीवन घर की प्राचीरों में बंद होकर ही नहीं बीतता, अपितु वह बाहर के कामों में भी भाग लेती है। मेले, उत्सव तथा सामयिक गीतों से स्त्रियों की प्रवृत्ति का खूब परिचय मिलता है।

इस प्रकार के गीत 'राही गीत' कहलाते हैं, और इनको स्त्रियाँ यात्रा में गाती हैं। इन गीतों में उपालंभ, व्यंग्य और हृदय की दमित भावनाओं की अभिव्यक्ति, जिसका घरेलू-झंझटों से संबंध रहता है, अधिक होती है। कभी-कभी राम और कृष्ण की लीला तथा गंगा-महिमा, सगुन-निर्गुन तथा संसार और माया भी इन गीतों के विषय बनते हैं। किन्तु स्त्रियों में निर्गुन के गीतों का प्रचलन कम है, कदाचित् उनके इस मनोविज्ञान के कारण कि स्त्रियाँ बिना किसी आधार के रह ही नहीं सकतीं।

अंत में स्त्रियों के नाच-कूद के गीत, जिनको 'खेल के गीत' कहा जाता है—की चर्चा करना बड़ा आवश्यक है। ये गीत जीवन की समूची चित्रपटी पर बड़ी बारीक तूलिका और चटक रंगों की सहायता से खींचे गए ह। इनका प्राथमिक उद्देश्य मनोरंजन है, किन्तु कभी-कभी व्यंग्य के तीक्ष्ण शस्त्र से यह सामाजिक कुरीतियों और व्यक्ति की दुर्बलताओं पर भी कठिन आघात करते हैं। गाने में अन्य की अपेक्षा इनकी द्रुत-लय होती है, और ढोलकी के ठेके पर अंग-चालन की क्रिया में यह विचित्र स्फूर्ति भर देते हैं—

(गाँव में जाटनियों का नृत्य धम-भूमर ढंग का, जिसमें अधिक शारीरिक बल लगाना पड़ता है, किया जाता है)।

प्रकृति ने पुरुष को घर से बाहर के काम सँभालने के लिए जन्म दिया है। जीवन-निर्वाह के लिए उपयुक्त परिस्थिति उत्पन्न करना उसका काम है। अतः पुरुषों के गीतों का उनके विभिन्न व्यवसायों से संबंध है। मैंने उनके गीतों को अध्ययन की सुविधा के लिए दो श्रेणियों में बाँटा है—

(१) पुरुषों के श्रम, व्यवसाय एवं मनोरंजन के गीत।

(२) विशिष्ट समुदायों के गीत।

मेरठ जनपद में भी अन्य की तरह कृषि-कर्म से संबंधित गीत पर्याप्त मात्रा में हैं। इनमें कोल्हू पर गाए जाने वाले 'मल्हीरे' अतीव सुन्दर हैं। उपयोगिता की दृष्टि से तो ऐसे गीत महत्त्वपूर्ण हैं ही, साथ ही इनसे ग्राम-जनों का मनोरंजन और ज्ञान-वर्द्धन भी होता है तथा श्रम-क्लांति-निवारण की तो ये परमौषधि ही हैं। इन गीतों के अतिरिक्त कृषि-ज्ञान, ऋतु-विज्ञान एवं नीति-धर्म-संबंधी और बहुत सी रचनाएँ भी सुन पड़ती हैं, जो युग-युग से संचित अनुभव के फल हैं। इस ज्ञान का विस्तार करने

वाले रात्रि के समय गाँवों के 'अलाव' या चौपालों के जमघट मानों जीवन की अनेक चटशालाएँ हैं।

कृषकों के गीतों के अतिरिक्त कुछ अन्य समुदायों के गान इस जनपद में विशेष हैं—जैसे जोगियों के साखे, पँवाड़े तथा धोबियों के 'खंड' पद, भजनादि। जोगियों की रचनाएँ धार्मिक एवं वीर-पूजा के भावों से ओत-प्रोत हैं तथा इनमें प्राचीन प्रेतात्मा-संबंधी विश्वास की झलक भी मिलती है। इस प्रकार का 'गूंगे का सारवा' इनकी मार्मिक रचना है। धोबियों के खंड बड़े विस्तार वाली रचनाएँ हैं। इनमें अनेक पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सामयिक विषयों का सविस्तार वर्णन हुआ है। इस प्रकार की रचनाओं पर विशेष रूप से और यों मेरठ के सभी लोकगीतों पर नाथ व संतों तथा सूफियों का बड़ा प्रभाव देखा जाता है। मेरठ में शिवोपासना की प्रधानता है, किन्तु स्त्रियों के गीतों के राम और कृष्ण उत्तर-भारत में अत्यंत प्राचीन समय से लोक-जीवन का आदर्श रहे हैं तथा स्त्रियाँ भावुक अधिक होने के कारण संतों की पूजा-पद्धति की अपेक्षा इनसे अधिक प्रभावित हुई हैं। जोगियों के गीत शैव-साधुओं व नाथों से अधिक प्रभावित हैं, और धोबियों के खंड सूफियों से जिनमें हिन्दू-मुसलमानों को दोनों जातियों के धर्म व संस्कृति की सामान्य बातों के आधार पर परस्पर निकट लाने का यत्न किया गया जान पड़ता है। हिन्दू धोबियों के पद व भजन संतों के 'सुन्न महल' और 'अल्ला राम' की वाणी हैं। मेरठ के हिन्दू-मुसलमान दोनों जाति के धोबियों के पास इस प्रकार की रचनाएँ बड़ी मात्रा में हैं और इनके अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण सामयिक घटनाओं पर भी इन्होंने गीत जोड़े हैं। गीत का आधार लेकर इतिहास किस भाँति जीता है, यह इन गीतों से सहज जाना जा सकता है। इसी प्रकार स्त्रियों के गीतों में भी समय-समय पर घटित होने वाली घटनाओं, जन-आंदोलनों अथवा सार्वजनिक संकटों के उल्लेख भरे पड़े हैं। लोकगीत इस भाँति व्यक्ति की डायरी और समाज के रोजनामचे हैं।

इस प्रकार मेरठ के लोकगीतों के अध्ययन से जो निष्कर्ष प्राप्त होते हैं, वे संक्षेप में इस प्रकार हैं—

(१) लौकिक व आध्यात्मिक दोनों ही विचार-धाराओं के गीत यहाँ प्रचुर मात्रा में हैं, और धर्म-भावना से संबंधित गीतों में प्राच्य-मानव की प्रकृति-पूजा एवं मातृ-शक्ति-पूजा से लेकर स्मार्तों की पंचदेवोपासना तक के संस्कार वर्तमान हैं।

(२) मेरठ जनपद पर नाथ और संतों का बड़ा प्रभाव रहा है और शिवोपासना की प्रधानता है किन्तु शिव-संबंधी गीत अधिक मात्रा में नहीं हैं। स्त्रियों के पंचदेवोपासना संबंधी गीतों में राम व कृष्ण की लीला तथा उसमें भी कुछ मार्मिक प्रसंगों का वर्णन अधिक हुआ है।

उक्त दोनों बातें भारत की सामान्य संस्कृति के मेल में हैं तथा उत्तर भारत की मार्मिक विचार-धारा के क्रमिक विकास की ओर संकेत करती हैं।

(३) जीवन, व्यवहार-संबंधी स्त्री-पुरुषों के गीत श्रम के महत्त्व का प्रतिपादन रते हैं और इन गीतों में उद्दाम प्रेम व शृंगार के वर्णन होते हुए भी कोमल-संस्पर्शों का

प्रभाव है, जो इस जनपद के निवासियों के श्रमशील और परिश्रमी तथा भौतिकतावादी होने का परिणाम है।

(४) यहाँ के गीतों पर सामयिकता की छाप अतिशयता के साथ देखी जाती है क्योंकि इस जनपद के लोग परिवर्तनशील परिस्थितियों एवं समय-समय पर होने वाले विभिन्न प्रकार के आंदोलनों के लिए ताप-मापक-यंत्र (बैरो मीटर) की भाँति त्वरित प्रभाव ग्रहण करने वाले रहे हैं।

(५) इन गीतों के अध्ययन से मालूम होता है कि इनका साहित्यिक और भाषिक महत्त्व भी कम नहीं है। यहाँ की लक्षणा-व्यंजना-प्रधान भाषा में भाव-द्योतन की अद्‌भुत शक्ति वर्तमान है। ऐसे ही युग-युग की चिन्ता और अनुभूति की निधि के समान यहाँ की लोकोक्तियाँ, प्रयोग, प्रहेलिकाएँ एवं गीतों में विविध ढँग से व्यक्त अनेक अनूठे भाव-साहित्य की मूल्यवान उपलब्धि हो सकते हैं। हमारी जनभाषाएँ अभी संस्कृति व साहित्य के शृंगार के लिए बहुत कुछ प्रतिदान दे सकती हैं।

इस हेतु अब यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि हम लोकसाहित्य के रूप में युग-युग की संचित ज्ञान-निधि की रक्षा में तत्पर हों और इससे लाभ उठायें। मेरठ के लोकगीतों के अध्ययन के उपरांत मेरी यह धारणा है कि अभी बहुत-सा आवश्यक कार्य शेष है, जो उपयोगिता की दृष्टि से अविलंब किया जाना चाहिए। ऐसे कुछ कार्य का संकेत अधोलिखित पंक्तियों में दिया जाता है।

(१) लोक-साहित्य के अध्ययन के आधार पर इस जनपद के सांस्कृतिक-इतिहास का निर्माण।

(२) लोकगीतों के भाषिक अध्ययन के आधार पर खड़ी बोली के क्रमिक विकास का इतिहास।

(३) लोक-प्रचलित शब्दावली की अनेकार्थ माला एवं व्यावसायिक-कोष-संग्रह।

(४) लोक-कथा एवं लोकोक्ति संग्रह। इत्यादि.........

परन्तु यह कार्य किसी अकेले व्यक्ति का नहीं है और अधिक धन-जन के सहयोग की अपेक्षा रखता है। हमारी सरकार को चाहिए कि वह इस ओर ध्यान दे और उपयुक्त साधन जुटाने में सहायता करे। इस कार्य को अकेले सरकार भी नहीं कर सकती क्योंकि इसके लिए कुशल भाषाविदों, विद्वान् साहित्यिकों एवं साधनाशील तपस्वियों की विशाल-सेना की आवश्यकता है, जो हमारी शिक्षा एवं साहित्यिक संस्थाओं से ही निकल सकती है। सरकार को चाहिए कि वह इन लोगों का सहयोग प्राप्त कर, सुनिश्चित योजना के साथ, लोक-साहित्य के उद्धार का कार्य आरंभ करे। मेरी कामना है कि विदेशों की भाँति अपने यहाँ भी "नेशनल आरकाइव आव फोक-सांग्स" का निर्माण किया जाय जिससे यहाँ के लोग अपने साहित्य के द्वारा अपने सत्स्वरूप को पहिचानें और इस त्रिशंकु-युग में हमारी संस्कृति का पुनर्निमाण संभव हो सके।

श्री० उदयशङ्कर शास्त्री

मैना को सतु

[कवि 'साधन' के 'मैनासत' के आधार पर रचित खंडकाव्य]

मैनासत नाम से प्राप्त एक ग्रंथ जिसकी बहुत सी प्रतियाँ मिलती हैं, कहा जाता है कि वह साघन कवि की रचना है। उक्त मैनासत नामक रचना में स्थान स्थान पर 'साधन' के नाम की छाप के अतिरिक्त 'साधन' का और कोई अता पता नहीं मिलता। ये साधन कहाँ के निवासी थे, किस जाति अथवा धर्म से संबंधित थे, इत्यादि परिचयात्मक बातें अभी अंधकार में हैं। तो भी इनकी रचना की जो प्रतियाँ मिली हैं उनमें से बिहार के मनेर शरीफ़ खानकाह की जो प्रति है उसमें दो स्थानों पर सन् ९११ हि० लिखा होने से यह अनुमान होता है कि यह साधन कवि सन् ९११ हि० =सं० १५६१ से अवश्य ही पहले के हैं।

साधन की इस रचना के आधार पर ही खेमदास ने "मैना को सतु" के नाम से अपनी रचना की है। संक्षेप में इसका कथानक इस प्रकार है—एक स्थान में लोरक और मैनां नाम के पतिपत्नी रहते थे, संयोग से लोरक का परिचय चाँदा नाम की एक अन्य स्त्री से होगया, परिचय जब घनिष्ठता तक पहुँचा तो दोनों अपना अपना घर द्वार छोड़ कर भाग खड़े हुए। इधर मैनां अकेली रह कर किसी प्रकार अपने दिन काटती रही। इसी बीच सातन नगर के राजकुमार ने मैनां को कहीं देख पाया, देखते ही मैनां पर आशक्त होगया और मैनां को प्राप्त करने के बांधनू बाँधने लगा। उसने रतना नाम की मालिन को बुलाया जो एक कुटनी थी। राजकुमार ने मालिन से कहा—मालिन अगर मैनां मेरे वश में हो जाय तो तुझे मुहमांगा इनाम मिलेगा। मालिन ने कहा कि मैं थोड़े ही दिनों में मैनां को तुम्हारे पास ला उपस्थित करूंगी। यह कह कर मालिन वहाँ से चलकर मैनां के घर जा पहुँची।

मैनां ने उसे देखकर जब उसका परिचय पूंछा तो मालिन ने उत्तर दिया—तेरे पिता ने तेरे बचपन में मुझे दूध पिलाने के लिए रखा था, अब तू मुझे भूल गई। मैनां

ने उसे अपनी धाय समझकर बड़ा आदर सत्कार किया। प्रसंगवश मालिन ने मैनां से उसके सुख सोहाग की चर्चा की।

मैनां ने कहा—सोहाग की शोभा तो उसे सुहाती है जिसका सुहाग (पति) उसके पास हो। यहाँ तो महरि की बेटी चाँदा मेरा सुहाग ही लूट कर ले गई है।

मालिन ने उसके रूप और यौवन की प्रशंसा करते हुए कहा कि कोई बात नहीं अगर तेरा पति लोरक चला गया है तो जाने दे, तू यदि कहे तो मैं तुझे किसी अच्छे पुरुष से मिला दूं। मालिन के इस प्रस्ताव को सुनकर मैनां को आश्चर्य हुआ कि यह कैसी धाय है जो मुझे पाप की ओर खींचने आई है। उसने कहा कि तू जिस छैल को मेरे पास लाएगी, क्या वह कभी मरेगा नहीं? या उसका कभी नाश नहीं होगा? और अगर वह भी मर जायगा, उसका भी नाश हो जायगा, तब उसके लिए अपने चित्त को चलायमान करने से क्या लाभ है।

इस प्रकार मालिन प्रत्येक मास की प्राकृतिक शोभा का वर्णन करके मैनां को प्रलोभित करती रही और मैनां उसका प्रत्याख्यान करती रही, और अंत में मैनां को यह निश्चय हो गया कि यह अवश्य ही किसी की कुटनी है और मुझे बहकाने आई है। अतएव वह अपने सत पर दृढ़ रही। और कुटनी को बिरूप करके अपने यहाँ से निकलवा दिया।

इसी कथानक के आधार पर खेमदास ने 'मैनां को सतु' के नाम से अपनी रचना प्रस्तुत की है। कहा जाता है कि ये खेमदास रज्जब जी के शिष्य थे। और रज्जब जी दादू के प्रसिद्ध शिष्य थे। इसी लिए खेमदास ने अपने ग्रंथ में दादू की बंदना की है। इनके विषय में राघवदास नामक महात्मा ने अपने 'भक्तमाल में लिखा है—

महंत रज्जब के अज्जब शिष्य खेमदास
जाके नेम नित प्रति ब्रत निराकार को।
पंथ में प्रसिद्ध अति देखिए देदीप्यमान
बाणी को विनाणी अति मांझिन में भार को।
रामत मेवाड़ में मेवा सी मुख सोहे बात,
बोलत खरो सुहात बेतवा बिचार को।
'राघो' सारो रहणी को कहणी सुकृति अति,
चेतन चतुर मति भेदी सुख भार को।।

इन्होंने चार ग्रंथ रचे हैं। इन्होंने एक ग्रंथ में स्वयं रज्जब जी का नाम लिया है। परन्तु इस 'मैना को सत' ग्रंथ से इतना पता तो चलता है कि ये दादूपंथी थे, किंतु रज्जब से कोई संबंध था यह स्पष्ट नहीं होता। इससे तो विदित होता है कि वे मनोहरदास के शिष्य थे। और उनका निवास अवरोहा (अमरोहा) में था।

दूसर मैना को सतजानी, दास मनोहर गुर बुधि ठानी।
षेमदास दादू पथ जाको, है अवरोहे अस्थल ताको।
× × × , × × ×

१. राजस्थान का पिंगल साहित्य, पृष्ठ, १९४-५

संवत सत्रह सै नौवाणी, कातिक पून्यो वदि परवाणी ।
सुभ दिन लिष्यो ग्रंथ यहु सोई, सुनि है साध गुनी नी कोई ।

खेमदास ने अपनी इस रचना का समय १७०९ दिया है, जो मनेर खान काह की प्रति के १४८ वर्ष पीछे का है । श्री मोतीलाल मेनारिया ने अपनी राजस्थानी भाषा और साहित्य नामक पुस्तक में खेमदास का रचनाकाल सं० १७४० के आस पास माना है, और इनकी चार रचनाओं की चर्चा करते हुए एक छंद उद्धृत किया है—

ग्यानवन्त गंभीर सूर सावंत सुलच्छन ।[1]
पंच पचीसी मेलि भरम गुन इन्द्रिय भच्छन ।
दुरजन ह्वै दल मोड़ि मोह मद मच्छर पाया ।
खल खत्रीस सब पीस धरि ईस सजाया ।
मैमन्त मना गुर ज्ञान मैं खेम बुद्धि लै अरि हते ।
ध्यान अडिग धर धीर धुर जन रज्जब पूरे मते ।

जिसमें स्वयं खेमदास ने रज्जब जी का नाम लिया है । आगे चलकर श्री मेनारिया जी ने अपनी दूसरी पुस्तक "राजस्थान का पिंगल साहित्य" में खेमदास का रचनाकाल सं० १७०० माना है और खेमदास के रचे हुए १७ ग्रंथों की सूची भी दी है, १ शुक संवाद, २ भयानक चितावणी, ३ गोपीचन्द वैराग्य बोध, ४ धर्म संवाद, ५ ज्ञानचितावणी, ६ राविया किसरे का पद्धतिनामा, ७ नसीहत नामा, ८ ज्ञान जोग, ९ संदेह दवण, १० जुगति जोग भेद, ११ सिधसंकेत आत्मासाधन, १२ कसणी, १३ विप्रबोध, १४ गुण ज्ञान गंगा, १५ जोग संग्राम, १६ बिड़दावली, १७ बावनी, किन्तु इस सूची में मैनामतु का नाम नहीं है ।

विचारणीय यह है कि इस मैनासतु के रचयिता ने अपनी रचना का निर्माण काल सं० १७०९ दिया है, और स्पष्ट ही अपने गुरु मनोहर दास का भी नाम लिया है । जिनका निवास स्थान अवरोहा या अमरोहा में था । तब ऐसी स्थिति में यह मानना कि ये खेमदास रज्जब जी के शिष्य थे । उचित नहीं प्रतीत होता । यदि ये रज्जब जी के ही शिष्य रहे होते तो गुरु के स्थान पर उन्हीं का नाम लिखते न कि मनोहरदास का । खेमदास ने यह तो लिखा है कि वे दादू पंथी हैं पर रज्जब जी का कहीं उल्लेख नहीं किया । यदि यह मान भी लें कि इनका यह ग्रंथ अब तक नहीं मिला था इसलिए उसका समावेश उक्त सूची में नहीं हो सका, लेकिन गुरु परम्परा का यह भेद पर्याप्त महत्व रखता है । और खेमदास की इस रचना "मैना को सतु" की दृष्टि से बिचार करने पर विदित होता है कि—इन मनोहरदास से और रज्जब जी से कोई संबंध (गुरुशिष्य) था इसका कोई परिचय इस रचना से बिलकुल नहीं मिलता । और न इस बात की ही पुष्टि होती है कि ये खेमदास रज्जब जी की शिष्य परम्परा में थे । हो सकता है, राघवदास ने अपने 'भक्तमाल' में जिन खेमदास की चर्चा है वे इनसे भिन्न हों ।

---

१. राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृष्ठ २९८

खेमदास ने अपनी इस 'मैना को सतु' रचना में साधन के भावों की पूरी-पूरी रक्षा तो की ही है वरन् अपनी ओर से भी कथा को भरी-पूरी बनाने में कोई कोर कसर नहीं बाकी रखी है। उदाहरण के लिए साधन और खेमदास की कुछ पंक्तियाँ ली जा सकती हैं।

पानी ऐस बुदबुदा होय, जो आवा सो रहा न कोय। साधन
जल बुदबुदा निहारौ कोइ, कलि मैं प्राणी ऐसा होइ। खेमदास
इकछत राज नरिंदन कीन्हाँ, प्रिथिमी रहा न तिन कर चीन्हाँ। साधन
इकछत राज निरंजन केरो, सकल चलाहू दीसै भेरो। खेमदास
परब देवारी मानै सोइ, जेंहि सरीर मालिनि जिउ होइ।
जिअरा मोर चाँद लै धरा, बिनु जिउ धर मांटी महं परा। साधन
अब त्योहार दिन ताहि सुहाही, जाके तन मन चित्त बसाही।
मेरौ चित चोरयो उन भौरा, सूहे सम अलापत गौरा। खेमदास
मैना मालिनी नियर बोलाई, धरि झोंटा कूटिनि निहुराई।
मूंड़ मुड़ाइ कै सेंदुर दीन्ह, कार पियर दुइ टीका दीन्ह।
गदह आनि कै धाइ चढ़ाई, हाट बाट सब नगर फिराई।
जो जस करै सो पावै तैस, कुटनी लोग पुकारें ऐस। साधन
मैनां कह्यौ पकरि लै आऊ, या कुटणी को सजा लगाऊँ।
झोटे पकरि जकरि निहुराई, जेहि जस पूजि करी पहुनाई।
मूंड़ मुड़ायस दीन्हें पछनूं, चोटी सात सीस अस लछनू।
गादह पीठ चढ़ायस दारी, ग्वैंडे नगरी फेरी सारी। खेमदास

साधन के द्वारा प्रयुक्त शब्दावली, परब त्योहारों का सांगोपांग वर्णन जिस प्रकार से उसकी रचना 'मैनांसत' में पाया जाता है उसी प्रकार खेमदास की इस रचना में भी पाया जाता है। यद्यपि खेमदास ने इस घटना का चित्रण अपने ढंग से किया है परन्तु उसकी भीतरी रूप रेखा साधन की है। खेमदास ने कथा को और अधिक रोचक बनाने के लिए अन्य महात्माओं की वाणियों, सूक्तियों का भी सहारा लिया है। जैसे—

पांवन पुहुमी नापते दरिया करते फाल।
हाथों परबत तौलते ते धरि खाये काल।[1] कबीर

कबीर की इस साखी में बामन, हनुमान और रावण की चर्चा है। इसी भांति खेमदास ने भी—

धरती दरिया करते फाल, ते बलिबंड गरासे काल।
जिनके द्वादस जोजन छत्र, गिरजन षाये ते नरकत्र।
द्वादस षट षोहन [क्षोहिणि] दलराव, कौरौ पांडव कहां बताव।

अपनी इन पंक्तियों में बड़े-बड़े चक्रवर्तियों, बेणु, कौरव, पांडवों आदि की ओर इंगित किया है।

---

१. कबीर बीजक, साखी १९६।

खेमदास की भाषा राजस्थानी है। पर साधन के 'मैनासत' की भाषा अवधी है। उसकी मनेर शरीफ, जोधपुर, दरवेशपुर आदि स्थानों से प्राप्त प्रतियों में लिपि एवं स्थान भेद के कारण पाठ भेद तो अवश्य हैं, परन्तु उसकी आत्मा एक ही है अतः भाषा में कोई भारी हेर फेर नहीं है। लेकिन खेमदास की रचना में राजस्थानी तत्व बहुत अधिक है जिसका मूल कारण शायद यह हो कि यह रचना ही राजस्थानी कवि की है। उदाहरण के लिए ये शब्द देखे जा सकते हैं। नौवाणी, चालणहार, प्रीतरी, कपटणी, झबूक्यू, कसूभ, कूंवटा, मंडण, च्यंत, आदि। इन राजस्थानी शब्दों के अतिरिक्त अवधी के भी बहुत से शब्द इसमें पाए जाते हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि यह रचना मूलतः अवधी पर ही अवलंबित है।

मैना को सत

पहले सुमिरौ नाम निरंजन। कलमल काल दुष के गंजन।
दूसर मैना कौ सत जानी। दास मनोहर गुर बुध ठानी।
षेमदास दादू पंथ जाकौ। है अवरोहे अस्थल ताको।
सील कथा सुन कथा अपारी। माता वहण तीय उजारी।
संवत सत्रह सै नौवाणी। कातिग पून्यौ वदि परवाणी।
सुभ दिन लिख्यो ग्रंथ यहु सोई। सुनि है साध सुनी नी कोई।

दोहा

कथि सुनि कै केते गए अंत न आवै ठौर।
विन्समान हमहू कथ्या केते कथि हैं और।

सोरठा

दल थंभन रणराइ गिरधारी धरणी धरण।
कतहू गयो विलाय षेम षोज पायो नहीं। १

चौपाई

षोज न पायो चलि चलि गयो। ना जानै कलि के ते भए।
कापर प्राणी करहु पियार। सब जग देखो चालण हार।
धरती दरिया करते फाल। ते वलिवंड गिरासे काल।
जिनके द्वादस जोजन छत्र। गिरजन षाए ते नर कत्र।
द्वादस षट पोहन दलराव। कौरौ पांडौ कहाँ बताव।
जल बुदबुदा निहारौ कोई। कलि मे प्राणी असा होइ।
कासौ कीजे नेह विचार। सब परदेसी चालन हार।
इकछत राज निरंजन केरो। सकल चलाहू दीसै भेरो।

दोहा

षेमदास चल चल दुनी रहत न दीसै कोइ।
कासौं कीजै प्रीतिरी सबै बटाऊ लोइ।

सोरठा

पाणी परकी लीक जामन मरणे जगत कौ ।
पेम पान की पीक ज्यूं डहकानौ भरथरी ।२

चौपाई

अब मैना की चरचा भाषौं । गुर अग्या माथे पर राषौं ।
कुमत मालनी यहु संसार । मैना आतम जनमतु सार ।
विषै क मारग सतन कुवार । सील साच हरिभक्ति विचार ।
ज्यूं संतौ मैना सतु गह्यौ । यूं हरि कौ जन जग में रह्यौ ।
यहै समझ राषौं मन मित । दूसर बात न आनौ चित्त ।

दोहा

गोष्ट साहरु कीर की तथा कथा यहु लोइ ।
स्वारथ समझै स्वारथी परमारथ जन कोइ ।३

चौपाई

(तौ) ग्राम एक वहुब सै सुबासू । सतन कुवार नग्र मै वासू ।
कौतिग एक करायौ जाय । चीन्हव आई मैना ताहि ।
सतन कुवर बदन जिह चीन्हौ । प्रगटयौ प्रेम तास मन दीन्हौ ।
छक्यौ प्रेम मैना के सोइ । नैषक अंतर तासौं होइ ।
मैना चली आपने ग्रेह । नैनन नींद बिसरि गई देह ।
सरवर महल जुगल इक भेसू । ताकर पुरुष गयौ परदेसू ।
भूलस महल आपने मैना । पौढी जाइ कुंवर की सैन्या ।
कुंवर गयो निद्रालू भवना । सिज्या येक जुगल कियो गवना ।
भयो विहान जू मैना चीन्हेसि । उठि ततकाल पयाना कीन्हेसि ।
दासी चरण वदि ले गई एक । कुंवर न जानै भेव वमेक ।
जागिस भोर व कियो निषेदू । तब मैना कौ जानिस भेदू ।
सत कुवर नग्र बहुत पछितान्यौ । इत मैना कौ मरम न जान्यौ ।
जै कोई मैना आनि मिलावे । देब दरब जाके मन भावे ।
दूती मालिन वीरा लीन्हेसि । धी कै आप कुंवर कौ दीन्हेसि ।
तुम सन मैना आनि मिलाऊँ । तौ हूँ सनमुष दरस दिषाऊँ ।
दूत फंद सब लीन्हेसि नारि । कामण टांमण चली संवारि ।

दोहा

चली कपट करि कामनी सजि मैना के धाम ।
पेमदास कैसे टरै जेहि सत राषै राम ।

सोरठा

राषै राषन हार षेम नेम ता दास को ।
जो बैरी संसार दिन दिन दूनी ऊपना ।४

चौपाई

(तौ) दूती गई मंदर मै धाय । मैना बैठी सहज सुभाय ।
पान फूल फुनि हार गुदाय । (स) लै मैंणा की भेट चढ़ाय ।
मुदत वचन बोलेसि इमि मैना । कत पग धारी पूछिसि बैना ।
कस मालन श्रापस सह मोरे । कौने चाह भई चित तोरे ।
बोली मालन परपंच कीन्ही । बात बनाइस ऊतर दीन्ही ।
सुन मैना श्राइस इत श्रैसे । बूझे विना कहू बुन (?) कैसे ।
पिता तुम्हारे धाइ लगाइस । तू बालक मै षीर पिवाइस ।
चूंबी चाटी गोद पिलाई । प्रेम प्रीति पालने झुलाई ।
यहु सनबध उपज्यो मोहू । ताथें निरषन श्राई तो हूँ ।

दोहा

तलफ भई जीव मै जरन मन में उपज सनेह ।
ताथे तुमरे दरस कौं तपत हुवी मम देह ।

सोरठा

मुष श्रौरै मन श्रौर करै लुरषरी सिर नवै ।
श्रसुवन धोवत षोर षेमदास हुर कपटणीं ।५

(तब) मैना नाइन ततषन बोली । फाटे चीर उतारेसि चोली ।
उवटण उवट फुलेलन मंगा । ताते नीर न्हवाइस श्रंगा ।
चीर पटंबर वोढ़ण दीनें । चोवा चंदन बस्तर भीने ।
मोहण भोग जेवायस लाइ । काढिसि घाड़ी जल भरि गाइ ।
ऊंची बैठण नरम दसौंणा । वीरा दीन्हेसि पान दसौंणा ।
बहु विधि श्रादर कीन्हेसि मैना । मालिण मन भई चित चैना ।
पर फुलित विगसी श्रति मालन । मानस बोल कहूंगी चालण ।
काढ़ौ षत्र बचन की बेदू । श्रब ले चलौं कुंवर की भेदू ।
कस मैना मैले तोहि षीरू । मन मलीन छीन मुष पीरू ।
रहस उनमनी पल छिन नीतू । बलीया बाहण कस मन चीतू ।
रुषे केस भेस नहीं नीकौ । गूंथी मांग न काजर टीकौ ।
जीवन कौ फल समझ सयाणी । पहरि सिंगार सुहागण जाणी ।

दोहा

ज्ञान सुहाग सुहागनी आपौ डारिस कित्त ।
सिर पर छत्र बिराजै पिता तुम्हारै नित्त ।

सोरठा

सब सुषराती तीय तूं कत वाम वियोगनी ।
कत तरसावै जीव पैम षुसी मन राषिये ।६

चौपाई

सुनि मालिन रवि के परकासू । विकति जोति का कहा उजासू ।
बैठ्यो कूंन धनक की छाया । किहि बिलसी सुपनै की माया ।
पिता राज ग्रैसौ सुनि नारी । भूतस भोजल की चिनगारी ।
सीय कोष मांग सुष सिज्या । लाडू कोचु रेला के रज्या ।
ग्रैसो राज पिता सुनि भोरी । नैन मूंदि लषि देषति टौरी ।
पाप विछोह मेरे दुपसालै । रैनि बिहान विजोवन गालै ।
महरा की तनया दु:ख दीन्हौ । चंदा दुलार नांव ग्रस चीन्हौ ।
छीन लयौ पुनि ताहि सिंगारू । मम जीवन कहि काहि ग्रधारु ।
करौ सिंगार कवन पर दौरी । परहरि दीनी कंत ठगौरी ।
लोर कियौ द्र (दुर)जन कौ भायौ । नान्ही वैस इसौ दूषयौ ।

सा०

वोछे भाग कर्म षुटे साजन द्रुहौ लाइ ।
ग्रपनौ ही कृत मालणी दोस जन कवन पर लाइ ।

सोरठा

काको दीजै दोस जौ ग्रापनौ कृत भोगिये ।
पेम कवण पर रोस जो पालै सो मुख परै ।७

चौपाई

कहि मालिन सुनि मैना बारी । कस ग्राह मनवा कर तस भारी ।
तू मम तनया हूं तोहि धाईस । तुव दुत्र मेटण कारण ग्रायस ।
पहिरि द्रि(दु)कूल उतारि स्य मैलौ । परहर पूत पुराना पहलौ ।
पहिरहु ग्रभरण सोभित ग्रंगा । पाटी गूंथ सवारिस मंगा ।
राषि षुसी मन करि जिन मैलो । सिज्या सैंन मिलाऊँ छैलो ।
जाके ग्रांगन दाख वहोई । सो क्यू नीबहि भुगतै लोई ।
जाके हेवर हस्ती थानौ । सो कस रासव चढ़ै सयानौ ।
जव लग पूता सकत समोरी । तबलगि सेवा करिहौं तोरी ।
मेलौं ग्रानि पियारौ पाई । सूनी सेज करौ सुगसाई ।
समैं तुम्हारी बिलसन जोगू । करि लै षान पान पर भोगू ।

दोहा

भोग करहि क्यूं न भामिनि भुगत आप सुष अंग ।
गत के भीतर छांह ज्यौ जैहै जोवन संग ।

सोरठा

जोवण कागर नाव षेम सुरा जल ढ़िग वसै ।
रस करि पार लघाव दिन चहुमै गरि जाइ गौ ।८

चौपाई

सुनि मालिनि कस दुषवत मोही । अैसै (जैसै) बोल धाइ की न्याही ।
धरम रहौ धन जाव सवारौ । सत को ससियर जग उजियारौ ।
बरस करोरहु सासन दयौ । करुवा षाय अमर को भयौ ।
तन छो जोवन जाइ तौ जाव । पाप दसा नहीं देहौं पांव ।
लोरक बिना न अंग विटारौ । जनम येक सिर करवत सारौ ।
एकहि एक लगायौ मना । नाव न भाषिस दूसर जना ।
जारौ वधू ताकौ मातौ । एक छांड़ि मन दूसर रातौ ।
उर मे एक बिना नहीं ठांव । सच नही सुन्यौ तिहूं पुर जाव ।

दोहा

अब मन रातौ येक सत छोड़ें पति ना रहै ।
जीवत राषौ टेक पेमदास उहि छैल सन ।९

चौपाई

मना आयो मास असाढ़ू । सब त्रीय नेहैं सवारयौ गाढ़ू ।
घर घर नारी सेज संवारी । चितहि चपलता उपजस भारी ।
गये विदेसी फेरा कीनौ । तोरे पीय वरण सदेसा दीनौ ।
आगम वरिषा विरह जणवा । करत छवाइ पीय मन भावा ।
उमगिस धरणी धूर अकासा । नभ वर वार मिलण की आसा ।
धर जढ़ रूप नेह सठ कीन्हस । तुव चेहर दौकस पीनस ।
जाके पीय घर मानत रली । संग न छाड़त अलिको अली ।
चिरी चेटवा कीन्हेसि धरा । कुरर काग द्रुम छेमू भरा ।
तपति अकास धरण पुनि तवे । चचहि चंदन त्रियपति रचा ।
पंथी पंथ चितारहि ग्रेहा । बिलपत चले न छांह द्रुम देहा ।
तोरे दुष महु रजरत सेहु की । मिटत न जान छपा सब भूकी ।

साषी

भोगत काहेन भामिनी जोबन जात अकाज ।
आनि मिलाउं भंवरलौं बूड़त जनम जिहाज ।

सोरठा

भोगि सकहि तौ भोग जात नदी के तीर ज्यूं ।
बहुरि न यहु संजोग षेम गये नहि पाइयै ।१०

सुनि मालिन पुनि जनमनि नरकौ । पाप पंथ सन देहौं तरकौ ।
ध्रग ते नारी बिर बर राती । पति छाड़यौ रत वालम घाती ।
अंग विटारे अंग उहि छोड़ू । दुहु जग जनम परं तर षोड़ू ।
जीवन कहा जगत मैं नौरी । उपमा कह बताइस तौरी ।
अंग छुवाइ कलंक लगाऊ । पति आगे मुष कहा दिषाऊ ।
कस अपराधन पाप दिढ़ायस । अदग सील सन दाग लगायस ।
लगन कहा तोहि पर घर जारत । पर फाटें विच पांव पसारत ।
तिष्ठा कौन पाप के पंथा । टीका चढ़त लील कौ मंथा ।
पति के सील अहल्या कापी । जग उपहास गऊतम स्रापी ।
नैसक लीक सीय सठ टारी । विन तन परसे देस निकारी ।
बिन सत नारी अ(मिर)तक लोई । ताकी लीह न लेही कोई ।
पल सुष कारन बड़ दुप अस भारू । तिल चाव्यौ गिर अटवत मारू ।

साषी

मालिन सुनि मम अभ की वचन की दूजा कोइ ।
टरौं न पिय की टेक ते कोट करै जो कोइ ।

सोरठा

पिय पति राषौ पैज तिरौ समद गिरौ तै गिरौ ।
यहु सिर रहौ कि नैजः षेमदास सतकारने ।११

चौपाई

मैना सावन आय झवूक्यौ । मै सुनियौ स्र(सर)वन पिक केक्यौ ।
घर घर सखी हिंडोलन झूलहि । करि तस गाए पाय संगि झूलहि ।
राते चीर पहरिहे अंग । करत विवोगनी मन भंग ।
बरिषहि मेघ भूमि हरषानी । जर जंगल वोलै छरि पानी ।
बोलहि दादुर पपीहा मोरा । सूनी सेज फाटस उर तोरा ।
तोरौ दूख मेरे उर सालै । तो सन काम अगीठी बालै ।
उनकौ सुष देषे मन मोरा । दुष पावे निरषे दुप तोरा ।
उमगत मम उर नैन तलाऊ । दिन दिन जोबन होत बटाऊ ।
जस बंधन ऋपन की माया । तस तरसै तपसी की काया ।
यूं जिन षोवहि जोवन नीकौ । बिलसि लेह करि काजर टीकौ ।
कहौ त आनि मिलाऊं प्यारौ । मंदर चंद सेज उजियारौ ।
मानि कह्यौ हठ छाड़ि अयानी । जुबन जात अंजुरी कौ पाणी ।

साषी

छिन छिन छीजत जोबना रंग कसूभे भाय ।
जानहिगी जब हाथ थे सुवटा सौ उड़ि जाय ।

सोरठा

पुनि का कीजै प्रेम औसर काम न आवई ।
परि नहि मरियै षैम जदिप कूवटा बापकौ ।१२

चौपाई

सुनि मालिन तिस सांवन नीकौ । घर आवै पिय जीवन जियकौ ।
जदिप वसै सकल संसारू । पिय बिन दीसै जगत उज्यारू ।
काको सावन विरह सतावै । मानौ रलिया लोरक आवै ।
ध्रग नारी जिन सील बिगारयौ । जग उपहास परंतर हारयौ ।
इत की भई न उत केहु पायौ । जथा नगनका सकल गवायौ ।
विभचारन कौ को मुष देखै । छार छठी ताकी तन भेषै ।
आवै लोरक करौं बधाई । रित मानौ परसौं उर लाई ।
राषौ पतिव्रत जथा कमोदू । रवि दिस पिष्ट चंद दिस मोदू ।
बुध वारज की मै उर दीठी । रविसौ मुदत छपाकर पीठी ।
और पपीहा कावत मेरे । जल थल छांड़ि स्वात दिस हेरें ।
सीप स्वात कौ ज्यूं ब्रत राषै । रहै स्म(समु)द मै स्वात न चाखै ।
जस प्र(पर)बत पै जल गया चारौं । यो जोबन लोरक पर गारौं ।

साखी

जारत जोवन जाव तन मनहि न मानत दूख ।
जौ रसना सन फिर भजौ छार परौ मम मूष ।

सोरठा

मुख मै परियौ छार जाके जो प्रनु पति तजै ।
जीवनु कहा गवारु षैमदास संसार मैं ।१३

चौपाई

अब मैना भादो झरि लाग्यौ । गरजै गगन मदन रिप जाग्यौ ।
घटा घमंडि बीज चमकानी । भूमि भरी नैनन के पानी ।
कंप्यौ हीयौ बिवोग हुलास्यौ । सूनी सेज भवंग प्रकास्यौ ।
दादुर मोर पपीहा बोले । उह सुनि देत विरहि झकझोले ।
सब सषियन के मन आनंदू । रवहिं सेज काटहि दुख दंदू ।
अपणे कौई पर घर राती । करहि बिलास मदन की माती ।
तो पै मैना अधिक मयानू । तुमहिं विचित्र से और अयानू ।
भादौ सिज्या बिलस न वारी । मानि कहा मति टरी तुम्हारी ।

मन में रिस जिन मानहु मैना । ल्याऊं भंवर सेज सुष चैना ।
बारी बैस कहा निठुराई । और न उपजै आतुरताई ।
तो सन तोरीय भयौ बटाऊं । तुम वास न चित राषत काऊ ।
अति विचित्र सेज्या कौ मंडण । मीठे बैन चैन दुष षंडन ।

साषी

डब डब रोवत मालनी छतीया छेदत बैन ।
पाव पसांरि (?) जिहि चपरि जगावत मैन ।

सोरठा

जाकौ तारै राम स्यौ सो क्यों बूड़ै षेम कहि ।
जाकौ सारै काम कौन त्रिगारै दूसरौ ।१४

चौपाई

मालिन कौन कुमति तोहि लागी । वार वार मोहि कहसि अभागी ।
अब त्यौहार दिन ताहि सुहाही । जाके तन मन चित बसाही ।
मेरौ चित चोरयो उन भौंरा । सूहे समै अलापत गौरा ।
माटीं सो माटी ले छाऊं । षोइ परंतर का पतियाऊं ।
कहा सु राना कहा सुरंक । तैसोइ तोला तैसोइ टंक ।
कहा सुनारी कहा भतारू । सतु राषैं सोई प्रभु प्यारू ।
सत राष्यौ हरचंद बड़ाई । लघ ऋत करि पग डग न डिगाई ।
और सत सुनि हातम कीनौ । परमार्थ कारण सिर दीनौ ।
अस सुनि सत दुदिस्टिर केरौ । हारी द्रोपद बचन नभेरौ ।
सत कौ वाध्यौ थम्यौ अकासू । बिन थूनी अर थंभन तासू ।
सत की बांधी छता विराजै । डिगै न गिरवर भारन भाजै ।
ताथे सत इसो सुनि भोरी । छावर कीजै लाष करोरी ।

साषी

सत न छांड़ौं मालनी जदिप करिह अनेक ।
तन धन राषौं पीयकौ सति बचन मम टेक ।

सोरठा

मरौ भौरा लाल और पोत की लालरी ।
तन मन जग प्रपाल पल पल पुरवैं कामना ।१५

चौपाई

मैना चढ़यो कुंवार सुरंगी । हार गुंदाइस तिय पिय संगी ।
फूले कास कनागत आए । करत सहेली पिय मन भाये ।
भोग बिना को रहै न तरनी । काढ़ी काम कटारी वरणी ।
चंद डहडहा लौंन उज्यारी । पिर(प्रे)म ढमारनि खेलत नारी ।

धन जोबन भुगतै जग सारौ । तुह बरतै कछू ग्यान बिचारौ ।
माटी माटी कहा पुकारै । माटी कौ दीसै संसारै ।
माटी धरणी माटी माया । माटी कूपा माटी काया ।
बरण बरण माटी कौ जानू । माटी मैं षेलै सब प्रानू ।
केल करै माटी मैं लोई । बिन माटी भुगतै का कोई ।
माटी कुम्हरा माटी चाकू । माटी हाली माटी छाकू ।
माटी की को जानै संसारी । माटी मैं षेलै नर नारी ।

साखी

माटी के चव्र षेलने तापर कियौ सिंगार ।
जाय देष चित्रसालीया कौतिग रच्यौ अपार ।

सोरठा

सिव सिंगीरिष इंद्र षेम घूमरिष महिपिता ।
मैंना मन मैं व्यंद वे भी षेलै प्रेम रस ॥१६

चौपाई

तौ मालिनि कहु कहा भलाई । तिहि ऋत की किन दई बड़ाई ।
काहि कहौं ब्रह्मा कौ नीकौ । किन दीन्यौ सिव के सिर टीकौ ।
सिंगी रिष कहा भला कहायो । इंद्र कहा याते पद पायो ।
जौ इन सर को भला कहावै । सील साच कत वेद दिढ़ावै ।
इन बातन कुवधन भल मानै । सुबुध सुनारी करै न कानै ।
काहे न सुनसि साषि सुख केरी । इंद्र अपछरा की मति फेरी ।
भीषम कौ द्रिष्टांत सुनाऊँ । मातहि कथा कहा समझाऊँ ।
असी कहि मेरे मन भावै । ब्रत षोलौं लोरक घर आवै ।
मेरैं तौ मालन ब्रत ऐऊ । ज्यूं बंभन गल रापि जनेऊ ।
यूं पिय सों ब्रत मेरो रहै । जैसें सीप स्वात रुति चहै ।

साषी

सति के कारन मालनी जारों यहु तन लाइ ।
कै काली ले बाहुरै कै रनि गोगौ जाइ ।

सोरठा

वोर निवाहै प्रीत षेम सुजानइ सूरतन ।
यहु ईतर की रीत दिन दुहु चहुं की हौं ससी ।१७

चौपाई

सुनि मैना कातिग पुनि आयो । घर घर कामिन पिरम बधायौ ।
जाति छतीसौं सब प्र(पर)ब मानै । तुहुं तौ कह्यौ करै नहि कानै ।
चोवा चंदन अगर सुबासू । पिय संग प्रमदा करहिं बिलासू ।
जोबन रतन न रहसि अयानी । तरवर छाया सरवर पानी ।

ज्यूं परभातै रैनि के तारे । बिलै जात रवि के उजियारे ।
ज्यूं पर भातै······कामिनीया । उगवत भान किरन जस हनीया ।
कहा भरोसौ या जोबन कौ । दिन दिन रूप षिसत या तन कौ ।
गहर न लाय धाय कह सजनी । जात बितीती जोबन रजनी ।
अब कछू समझ देषि मन प्यारी । जमसी ह्वै है जास्यन कारी ।
कस करि कटि है कातिग मासू । मो मन ब्यापै तो तन सांसू ।

साषी

कसन कहस मोहि मरम करि बेग बोलव वाल ।
आनि मिलाऊ षेम घर मोतन मैं को लाल ।

सोरठा

मो मन कसकै पीर ना जानौ तुव चित कहा ।
ज्यूं गल तत्व गंभीर निस वासुर जक ना परै ।१८

चौपाई

का को कातिग के दिन परबू । लागत काल कंत बिन सरबू ।
जिनके पिय परदेसन मांही । तिहि चित कातिग कहा बसाही ।
जौ लोरक ऐंसी बन आई । तौर कहा मेरौ बस माई ।
राजी भाष भै घटै न कारी । ज्यूं तुम राषौ तुमरि बड़ाई ।
जे जिवहि डर सत दीजै वाई । तीन लोक मालन कत ठाई ।
वचन तिहारे जौ सति छाड़ौं । मानिष जनम पोरस सिर षांड़ौ ।
जीवन कहा जगत मैं भोरी । तायें तापै कीजै चोरी ।
चोरी कीजै पैस पतारू । प्रगटै तीन लोक संसारू ।
जौ लोरक सौ सत्त न चालौं । ध्रग युहु देहु अगन मै जालौं ।
सत की दासी कंवला लोई । सत ही सौ निस्टै सब कोई ।

साषी

सत की चेरी लछमी सत्त बड़ो संसार ।
षेमदास असे समैं सत राषै करतार ।

सोरठा

सत धर्म कै काज मालिनि माथौ दीजिए ।
भाजे पीय कौं लाज षेम चेत चढ़ि सूरता ।१६

चौपाई

मैना अगहन अंग सतावै । विलसहु छैल तुम्हारे आवै ।
वैसहि मधप कवल दल माही । लै मकरंद कुंद ढिग नाही ।
अगहन घटे न्यस (?) गहर लगावा । भवन भयानक गहर लगावा ।
दीपक जोति जरै रतनारै । उर अर काम अगीठी बारै ।
बिलसहि सेज सुहागन बारी । ना जानौ गति कहां तुम्हारी ।
पाष उज्यार जुनइया दहै । किरण काम करवत सर बहै ।

सदन सषी सब अंग सवांरै । विस्तर सेज बिवोग निवारै ।
करहि सिंगार झीन सिर सारी । मुषहि तंबोल पुहप गलहारी ।
नीधन नारी पीव विदेसू । दुष दारण चित च्यंत अंदेसू ।
बिरष अकेला पवन डुलावै । बिन पीय ग्रोट कोट दुष पावै ।

साषी

पावत है दुष कामिनी दीजै रत को दान ।
मिलहु मयंक कमोदनी ज्यौं सुष पावै प्रान ।

सोरठा

गुन की बांधी देह गुनवंतौ वर चाहिए ।
मैना मान सनेह सुष करि षेम सुहाग कौ ।२०

चौपाई

सुनि मालिन बरजी मैं केती । पुनि पुनि फेर कही मैं केती ।
तू न रही बिन बोलस बोलू । चुनि चुनि वात कहत गढ़ छोलू ।
मेरौ चित्त बसै उहि ठांई । जहंवा जीवन जीव के पाई ।
जंबक स्यंघ स्वान मंजारी । सीर नही सनकादिक नारी ।
हंस रे काग कवन कौ साथू । बहते जल कटक की वाथः ।
मानिक लाल पोति मैं बांधौं । सोभा कवन चलै है कांधे ।
जैसी ये सोभा गति सारी । जैसी पर पुरषागत नारी ।
अनु छाड़ै पुरषा की नारी । दो दो करै मेदनी सारी ।
उनि सौतिन मोसो अस कीनी । लाल लियौ मोतन कौ छीनी ।
अहै अभागी सौतन दारी । कहूं कहा नावे सत गारी ।

साषी

मो तन मन अस मालिनी ज्यूं मणि गये भवंग ।
जथा षीर कांजी मिले प्राण रहत बप संग ।

सोरठा

तिह मुख परौ बजाग आरे आनस और के ।
सो तन दागौ दाग अंग विटारसि पीव बिन ।२१

चौपाई

आयौ पूस मास सुनि मैना । सीतल पवन लगै उर पैना ।
थरहराइ कंपै उर हीयौ (?) । मोरि मोरि त्रिय वोढ़त बसनू ।
सरवै नाभि जल सीतु तुसारू । थरहराइ थरहर थन हारू ।
सौर सपेती सेज बिछावै । पीय बिन जाड़ौ अधिक सतावै ।
उमड्यौ मदन सद्न (दन) मैं मीतू । प्रीतम हार बिना गल रीतू ।
सुख निधान दुख को दुष दाई । कहौ त प्रीतम देउं मिलाई ।

नासै दुष सुष उपजस प्यारी । मोलछ गानी लहै न न्यारी ।
मित है रैं चिंता जोय तेरी । तोहि परवाह कौन की मेरी ।
सबै उदासी मन की भाजै । जो मधुकर अरविंद विराजै ।
बिंदत बदन सबन कौ सजनी । जौनि जुनइया की ज्यौं रजनी ।

साषी

समै जात सुख की चली भली क कहत हौं बीर ।
भूष मराल न मारिये मान सरोवर तीर ।

सोरठा

लाडि सकहि तौ लाडि लाडू लावनि लाडली ।
षेम षरौ हठ छांड़ि भूख मरत कत कामिनी ।।२२

चौपाई

सुनि मालिन चितवस मम वोरी । झूठी झूठ कहस कस भोरी ।
पूस मास का करे अयानी । तिस मिटै माछन कर पानी ।
मरकट मुस्ट कीर जस नली । पट छल वाघ डोर मंछली ।
यहु दिस्टांत चतर कौ जानी । देषि कवन सुष पायस प्राणी ।
अस पर पुरष भोगवै नारी । पिति नहि पतित बिगूचै नारी ।
लोर कि विरह तपै मोरी छाती । निस दिन जरत दीवे ज्यूं बाती ।
विरह बान लाग्यौ उर अैसें । घायल ज्यूं घूमत अग जैसे ।
कहिये काह कहे बनि आवै । अस लोरक कौ विरह सतावै ।
निस वासुर बिसरै नहि नाहा । मिटि गई मूर और की चाहा ।
चाह मिटी मेरे मन की दूजी । मेरे तौ लोरक धन पूंजी ।

साषी

नीर नहीं चष वींद बिन प्राण गए पिय पास ।
षेम विरह बस बावरी तन मन रहत उदास ।

सोरठा

चित कस वांधी डोर पलटी हाथ सुजान के ।
षरचै षेम करोर कोट जतन छूटै नहीं ।२३

अब मैना आयो चलि माहू । थैसा विरहन भयौ उछाहू ।
सब मेदनी तुसार जनावा । जित तित काठै भंवर लुकावा ।
अति गसि सीत सेजु पुनि व्यापै । नष सष विरह करेजौ कांपै ।
विरह समै जो सेज भतारा । दु(दुर)जन सीव न झंपै द्वारा ।
दीरघ दुष उपजस तन भारी । होत सता निरष नर नारी ।
जिह घर कंत सेज सुषमानै । मिटी च्यंत चित के दुष भानै ।

मोकल भये मदन के कूपू । काम कटक लै आयो भूपू ।
पांच बान कर साजस सामो । बिरह् बली रिप दियो दमामो ।
धरकत छाती बिरह जनावै । तुझ दुष दामण मोहि सतावै ।
विसरत नाहि तोर दुष मोकों । नैन प्रवाह कहां लग रोकों ।

साषी

भामिन भूलस मो मतो कहत तोहि समझाइ ।
कर छूटे कर पाइये जब चलि जोवन जाइ ।

सोरठा

यहु जोवन जरपोस चिलका दिन है चारिको ।
जैसे मणिका वोस चात्र झबूकें षेम जस ।२४

चौपाई

मालिन माहु महीना काको । लोरक सो बिछुरै पीय जाको ।
हारल की लकरी पीय मेरो । ता बिन तलब भोग किस केरो ।
भून सकल पांव की बेरी । मरदन अंग कै च कपि केरी ।
अन तो षंजर की धारा । आंजत नैननि जर अंगारा ।
नही सुहात नाद गुन गीतें । तू पी तू पिय करत बितीतें ।
जलहरि बिना मीन दुष पावै । द्र(दर)पन के जल त्रिषा बुझावै ।
मन मराल को लाल चुगावै । मुकताहल बिन चंच न लावै ।
अनलपंष सुत की गति जानी । उर रापै ऊपर को प्रानी ।
मन मानिक मेरो मुसलीयो । नाह नही नोहारो भायो ।
पति बिन रति मानै मन भावै । नगर नायका नाव धरावै ।

साषी

हाथ विकानी नाथ के कोब सुनै सिष तोर ।
वंटा ज्यो चौगान को चैन नहीं चहु ओर ।

सोरठा

जो कीजो कुल नारि तन मन ताके सो बसै ।
वाकी छठी छार तेस नेम ताको डिगै ।२५

चौपाई

मैना आयो फागुन मासू । विरहन लीनो ली बहु सासू ।
फूले ढाक डहडहे केसू । नाहर कीन हरै के भेसू ।
माते भवंर कंवल को धाये । करत सजोगन सुष मन भाये ।
गावत फागु बसंत सहेली । फाटत छतिया सेज अकेली ।
मौले नीबू नीब अनारू । महुवा मालित दारिम दारू ।
मौले अंबा मौली धाय । जामिन चंपा सब बनराय ।

गुंजत भ्रंग मनोज उमंगा । मणन मणन मणनात पतंगा ।
साष चोर सवही सह चाहस । ग्रह ग्रह धरनि संभारी नाहस ।
विहसि विहंसि मानस मन मोदू । पलटि पलटि लालन की गोदू ।
ग्रैसौ समौ जाय चलि बौरी । रहै परेषो फागुन कौरी ।

साषी

विरह बाव बाजै घनी फगफगात चित तोर ।
लाजन्ह माषी पाहि जिन कहा रही मुष मोरि ।

सोरठा

कहै न ल्याऊं ताहि जिहि देषें दुष बीसरै ।
रूप सवायो नाह षेम कुसल जाके मिलै ।२६

चौपाई

सुनि मालिन जाको दुष लाग्यो । मो तन मन ताके दिस जाग्यो ।
लषत चकोर चंद तन जैसे । लोरक हाथ बिकानो ऐसें ।
लोरक लकुट ग्रंध की मेरै । दीपक दिनकर धाम ग्रंधेरै ।
ता बिन तन मन रहै उदासी । विसरस मम हिरदे की हांसी ।
हंस हि ग्ररु बक सरु नहीं दीजे । स्यंघ स्वांन ऐकै नहि कीजे ।
काह समद कहा छीलरु षाई । कहा सुमेर कहा सुरा ई ।
मेरौ मधप मधर को सागर । ग्रौर कंत कांदौ की गागर ।
झूठे देषि झूठ सन लाग्यो । झूठै सौदा लीयौ ग्रभाग्यो ।
साच बिना सचु कहि किन पाइस । झूठे लालच मूल गवायस ।
सत की डार गही जिन प्रानी । परबत जाय चढ़ायो पानी ।

साषी

मैं बांध्यौ मन सांचमौ सति सील के ताग ।
जा दिन लोरक ग्राइहै तिहि दिन षेलौं फाग ।

सोरठा-मालिन

फागुन फूटे देह षेम बिछोहे कंत के ।
तासिरु डारौ षेह प्रेम बिढ़ावैं ग्रौर को ।२७

चौपाई

ग्रायो चैत मास मैना सुनि । ग्रंबन पलटि नयो लाग्यो पुनि ।
रुति पलटी जाग्यो जु कंद्रप । सार सुरु कीन्ह गुन गंद्रप ।
सब सषियन मिलि सजन सभाले । भव तन चीर पुरातन डाले ।
ग्रगमद तेल तबोलनि राती । सेजस रवनी रवहि संघाती ।
निरषत सुष सषियन के नेरे । दलीयत लोन कलेजै मेरै ।
उठि रसिया तोहि ग्रानि मिलाऊं । बिलससि सेज निरषि सुष पाऊं ।

मानि बोल दुष हरसि तुम्हारौ । सेज चढ़सि जब रवसि पियारौ ।
बिन भेटें रसीया रस नाहीं । समझ देषि अपने मन मांही ।
सोचहि सोचत मास बितीत्यौ । नेक न सुष सिज्या कौ कीत्यौ ।
अव तू समझ सीष सुनि मेरी । सुष की रास बिलास सबेरी ।

सापी

कृपन का धन का करहि गड़चौ धरचौ रहि जाय ।
नहि दीन्यौ नहि षाइयौ गमन समै पचतात ।।

सोरठा

ऐसै जोवन जात जैसै ओरौ फेट मैं ।
पेम कहत सुष बात फुनि ढूढ़े नहि पाइयै ।।२८।।

चौपाई

मालिन चैत चाव जिहि भावै । जिहि कर कंत विदेसी आवै ।
मो लेषें सब जगत उजारु । बसै मेदनी घोर अंध्यारु ।
घोर अंध्यार सवै कर सारौं । जब लग चंदन सेज निहारौं ।
चंद बिना मोरी सुधि बिसरानी । जैसे मीन गादरें पाणी ।
ज्यूं विसहर लागै अग घाइल । घूमत फिरत भवंग मषाइल ।
लोरक संग गयौ जिय मेरौ । कीन्हौ चित्त गसाग अहेरौ ।
यह तन मन लोरक कौ धाई । कै भरिहौ कै मरिहौं माई ।
जियबे ते मरिबो मन भावै । वा बिन दूजो द्रिस्टि न आवै ।
दूसर की कहु कहा बड़ाई । पिय बिन तन की तपनि न जाई ।
भयौ पपीहा प्राण हमारौ । स्वात वूंद विन अस व्रत धारयौं ।

साषी

बिरह बिभूति लगाय तन करि जोगनि कौ भेष ।
भीष दरस कौ षेम नित जपति अलेप अलेष ।

सोरठा

अलष अगीठी आंच सनमुष तापौं रैनि दिन ।
ईधुन डारौ पांचु जाडौ षेम बिवोग तन ।।२९।।

चौपाई

अब मैना आयौ वैसाषा । प्रगटचौ मदन सदन तन ताषा ।
बिरहन डसी लहर झुकि दैहीं । जोग सी लहरनि हसि छाटौ देही ।
ज्यौं ज्यौं पवन झकोरै जोई । घूमत सीस विकल तन होई ।
जो गाडरू लोरक लै आवे । वेदन बांधा लहर छुड़ावे ।
या बेदन को और न औषद । रसीया दै है मदन म्हागद ।

साषि लई परि सीष न लीनी । सीष की बास निठुरता दीनी ।
रसना थाकी रस नहीं कीयौ । रसीया कौ रस नेक न लीयौ ।
दौ लागी दाभत है छाती । काटतु कीर विरह की काती ।
घर घर देषि सेज के चैना । करत विलास वधू सुष मयना ।
वरण बरण बसत्र अधिकाई । चांपति चेरी चरणनि चाई ।
काहि न उपजु तु तोहिं चित चाऊ । जुबना मारग माहि बटाऊ ।

साषी

कहा भरोसो भामिनी निघटत देह उसास ।
समै गये पछितािहगी तन धन लेह बिलास ।

सोरठा

आवष्यायहु रैनि जात वितीती रैन दिन ।
जोबन पंथी ऐनि चलते बार न पेम सुनि ॥३०॥

चौपाई

मालिनि तन धन जीव सवारौ । सति ही टरे होत मुष कारौ ।
लाष करोरण जीय सै कोई । करुवा षाय अमर को होई ।
जो सतु रहै सब कछू पावा । सत गयें किछु हाथ न आवा ।
लालचि स्वाद विषै विष षाई । षात न जानै अमल कराई ।
वहु सुष वहु दुष देखि बिचारी । राई परबत होत सुचारी ।
जौ बिस्टा पानी मैं कीन्हेसि । उछरी छाल सबै किहु चीन्हेसि ।
छाने सत टरै जो मेरौ । होइ प्रगट तिलोक सबेरौ ।
नाची गुपति नगन तजि वसना । माटी जाय नाथ की रसना ।
विष दीनौ रोटी मै घालि । भयो तत षिन पति कौ काल ।
सति छाड़ें गति यहै समाने । ताथे सति न दीजै जाने ।

साषी

सत कौ बिरवा जो बवे धर्म पुंनि फल लाग ।
प्रगटै पुषप वासना षेम प्रेम के बाग ॥

सोरठा

सति के वित्त समान नाहिन धन तिहुं लोक मै ।
सति न देहौ जानि जाना होय सु जावरी ॥३१॥

चौपाई

मैना जेठ मास चलि आया । जग मै दिनकर तपै सवाया ।
अवनी अंबर तपै अधिकाई । जरै विटप लूवन की लाही ।
अधिकौ पवन वहुत झकझोरै । विरही जन विरह न कू लोरै ।

मलया चंदन घसहि सहेली । छरकत छतिया होतु सुहेली ।
पुहपन सेज विथर सुष पावहि । पति सो रतिपति पतिसुष मानहि ।
पिय बिन तपति मिटें नहि बौरी । जदिप लक्ष उपाव करौरी ।
तू बिरहन बिरही वर तेरो । करि बलि कारज सोच सवेरो ।
उठि मंजनकरि सोचु सवेरो । ... ... ।
लाय सुगंध सुवंध सुनि । ... ... ।
रसिया छैल मिलाऊँ सेजू । मिटत तपति तन तिह कर हेजू ।
हेजु करहु हित सो दिन रैनु । तोहि मोहि उपजै सुष चैनू ।

सापी

विलसन कीजै रावरी औसर चीन्ह्यो जाय ।
सिर की लागी क्यूं बुझै बिरह पवन रत लाय ।।

सोरठा

मैना मानिस बोलि मिलि मधुकर मधु पीव रस ।
षेम नेम पट पोल द्वादस मारो जानये ।३२
तव मैना कुटणी झझकारी । वोणौ बोलिम पित तन दारी ।
द्वादस मास गए कहा जै है । मत राषे पति सो पति पैहै ।
द्वादस मास वितीतन लागे । फिरे दिवम करमादिक जागे ।
सुधि पाई लोरक घर आवै । दासी पुहपन सेज बिछावै ।
तव मैना उठि नव सतु माजे । फिरे भागि दुष दालिद भागे ।
ग्रह आए तब लोरकु राई । सपिय सहेली करतु बधाई ।
मंगल भयौ सबै सुष लाहा । सेज सुहाग दियौ जब नाहा ।
दुष करि धीरज वाधस कोई । ... ... ।
पहले धरती विरह तपाई । उडिरत धूरि गगन कू जाई ।
उमगि गरद आकास से लागु । बरिषै मेघ महि दीन सुहागु ।
हरी हरी भूमि पटीलौ पावस । मिले गगन पिय आनद आयस ।
दादुर मोर पपीहा वाणी । मंगल सदन सेज सुष माणी ।
जो सूरा सूरातण करै । तन धन त्यागि सनमुष लरै ।
आंच सहै अत्रण की लोही । राषे रषपति पावस्य सोई ।
सती स सत गहि लीन्ह सेघौंरौ । पति सो रति जुग सो चित करौ ।
फिरे सुधि धणी सनमुष सती । सील कुसील देषि गति मती ।
सती छिनकु दुष मोहत जरै । सूर पलक छल लोभहि लरै ।
मैना बारह मास संमारी । रतु राष्यौ पै सतु नहि हारी ।
जाको राषै राषन हारौ । चलै नहीं दूसर को चारो ।
धनि मैना अपनो व्रतु राष्यौ । दुहु जग मुष उजियारौ भाष्यौ ।
इन कुटणी मालिन अस रची । सील डिगावण को बहु पची ।

मैना कह्यो पकरि लै भ्राऊं । या कुटणी को सजा लगाऊं ।
इह कर भ्राज सजा जो होई । तौ भ्रस काज करस नहि कोई ।
झोटे पकरि जकरि निहुराई । जेहि जस पूजि करी पहुनाई ।
मागु षमोटी घसीटी लूटी । धुबघट सो कूकर ज्यौं कूटी ।
मूड़ मुड़ायस दीन्हे पछनू । चोटी सातु सीस भ्रस लछनू ।
गादह पीठ चढ़ायस दारी । ग्वैंडे नगरी फेरी सारी ।
कारौ मुष उलटी भ्रसवारी । भ्ररु दो दो लरिका दे तारी ।
जैसा करै जगत मै लोई । परगट तैसा पावे लोई ।
यूं कुटवो मैना राणी । पैके पै पांणी के पानी ।

साषी

साच झूठ निरनै भया पतिव्रत भ्ररु बिभचार ।
षेम बमेकी बाहुरा को समझै मतुसारु ।
ज्यौं मैना सत धारु त्यौ वृतु जन जग दी (?) के ।
षेंम भये भौ पारु भर्म कर्म भै डारि कै ।
जै कोइ चाहै प्रेमघरु षेंम नेम इमु लेहु ।
इन उत जित कित राष चित, पिय मारगु सिर देहु ।

साषी

जिन सिर सौप्यौ पीयकूं इह विधि राषी टेक ।
षेम षजानै ते परै विरथा गए भ्रनेक ।

साषी

समयौ सुनिवा ग्रंथ कूं उकति भाव धरि पेम ।
चातुर ताके चित्त में बाढ़ै पिय रस पेम ।

साषी

येक झूठ मुष धर्मसौ येक साच सम पाद ।
सुरति सुकृति जो षेम मम मुष बोलै न संताप ।

साषी

जेता झूठ सुकृत को तेता साचु समान ।
जथा चोर बाछी बधिकु नाटै भानु सुजानु ।

साषी

मैना को सतु पढ़णै चितुलाय ।
सुफल होय जेती घरी सतु की ताहि सुहाय ।

इतीय कह सतकथा सपूरण समापतः

डॉ० चन्द्रभान

मथुरा जिले की बोलियाँ

प्रबन्ध संक्षिप्ति

प्रस्तावना

ब्रज-जनपद के तीन नाम मिलते हैं—मथुरा या मथुरा मंडल, शूरसेन तथा ब्रज। सीमाओं में परिवर्तन होता रहा है। मथुरा का उल्लेख चाहे वैदिक साहित्य में न हो, पर ब्राह्मण-साहित्य के पश्चात् इसका नामोल्लेख मिलता है। विदेशी यात्रियों ने भी इसका वर्णन किया है। पौराणिक साहित्य में मथुरा मंडल नाम आया है। शूरसेन जनपद पहले बहुत प्रसिद्ध था। 'ब्रज' पहले स्थान वाचक था, फिर प्रदेश वाचक हुआ। ब्रज की सीमाओं में भी परिवर्तन होता रहा है। साम्प्रदायिक दृष्टि से चौरासी कोस का ब्रज माना गया है।

ब्रज प्रदेश की भाषा परम्परा का इतिहास गौरवमय है। वैदिक भाषा, वैदिक से पाणिनि तक का भाषा-विकास तथा क्लासीकल संस्कृत के काल तक मध्य देश या ब्रह्मर्षि देश भाषा की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा। प्राकृत युग में आरंभिक भाषा पालि है। अनेक विद्वान पालि को मध्य देश की भाषा का ही साहित्यिक रूप मानते हैं। प्राकृतों में दो मुख्य थीं—शौरसेनी और महाराष्ट्री। पहली तो शूरसेन प्रदेश से संबद्ध थी ही, अनेक विद्वान महाराष्ट्री प्राकृत को शौरसेनी का ही विकसित रूप मानते हैं। यह शौरसेनी संस्कृत से प्रभावित थी और नाटकों में मान्य थी। शौरसेनी प्राकृत के समान शौरसेनी अपभ्रंश भी महत्वपूर्ण रही—इसमें भी प्रचुर साहित्य मिलता है। अपभ्रंश के पश्चात् इसी प्रदेश की भाषा ही ब्रजभाषा कहलायी। यही प्रायः समस्त उत्तरी भारत की काव्य भाषा बनी रही। इसे मध्यदेसी, अन्तर्वेदी, ग्वालियरी, भाखा तथा ब्रजभाखा नाम दिये गये हैं। ब्रजभाषा की सीमाएँ विस्तृत थीं। ब्रजभाषा की दो प्रवृत्तियाँ मुख्य हैं—उकार बहुलता और औकारान्तता।

भौगोलिक दृष्टि से मथुरा जिले की स्थिति यह है—पंजाब और राजस्थान से मिला हुआ उत्तर-प्रदेश का यह एक पश्चिमी जिला है। ब्रज के मध्य में स्थित होने से यहाँ की बोली ब्रजभाषा का प्रतिनिधित्व करती है। इसकी उपज, इसके धरातल, इसके निवासियों आदि में वैविध्य मिलता है।

मथुरा जिले में अनेक जातियाँ हैं। इनमें से कुछ स्थायी हैं और कुछ घुमन्तू। घुमन्तू जातियों में हाबूड़ा, खुरपल्टा, कंजर आदि हैं। आभीर, गुर्जर, चमार, चौबे, जाट राजपूत, आदि स्थायी जातियों का बोली-भेद की दृष्टि से महत्त्व है।

प्रस्तुत प्रबन्ध मथुरा जिले की बोली तथा इसमें मिलने वाले बोली-भेदों का अध्ययन है। लेखक ब्राह्मण जाति से संबंधित है। ब्राह्मण-बोली का अध्ययन मुख्य रूप से तथा अन्य बोलियों का अध्ययन तुलनात्मक दृष्टि से हुआ है। सामग्री संकलन के लिए मथुरा जिले का सर्वेक्षण किया गया और इसके निवासियों के स्वाभाविक वार्तालाप को सुनकर तथा उनसे कहानी कहलवा कर संकलन सम्पन्न हुआ। उसी सामग्री के आधार पर अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

१. ध्वनि-विचार

मथुरा जिले के स्वनग्रामों का विवरण इस प्रकार दिया जा सकता है—

(क) स्वर—१० हैं—/ ई इ ए ऐ ऊ उ ओ औ अ आ / इसके अतिरिक्त ४ दीर्घ नासिक्य स्वर पृथक् स्वनग्राम हैं / ईं ऐं ऊं औं / स्वरों का पारस्परिक संयोग इस प्रकार हो सकता है—/ ई + उ /, / ई + औ /, / ई + अ /, / ए + ई /, / ए + ऊ /, / ए + औ /, / ए + अ /, / ऐ + आ /, / ऊ + अ /, / ओ + ई /, / ओ + इ /, / ओ + ए /, / ओ + आ /, / अ + ई /, / अ + ए /, / अ + ऊ /, / आ + ऊ /, / आ + ई /, / आ + ए /, / आ + ऊ /। दो श्रुतियों का समावेश होता है—/ य् व् / इनकी परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं—/ ई + ए / = [ई^य^ए], / ई + आ / = [ई^य^आ], / इ + ए / = [इय्ए], / ऊ + आ / = [ऊ^व^आ], / ऊ + औ / = [ऊ^व^औ], / उ + ई / = [उ^व^ ई] अग्र स्वरों के साथ /—य्—/ तथा पश्चस्वरों के साथ /—व्—/ श्रुति आती है। स्वरों की संधि होने पर स्वरों में विकार भी उत्पन्न होता है अ + ऐ/ = / ए /‿/ अऐ /, / इ + ऐ / > / यै /, / उ + ऐ / > / वै /, उ + औ / > / औ / स्वरों के संयोग में दीर्घ और ह्रस्व स्वर का संयोग, दीर्घ स्वर—दीर्घ स्वर का संयोग, ह्रस्व स्वर—ह्रस्व स्वर का संयोग संभव है। पर दो ह्रस्व स्वरों का संयोग अत्यन्त विरल है। स्वरों के ध्वन्यात्मक परिस्थितिजन्य तथा प्रयोगात्मक संस्वन भी मिलते हैं।

(ख) व्यंजन—ये व्यंजन मिलते हैं: अल्पप्राण स्पर्श—/ क् ग् ट् ड् त् द् प् ब् /; महाप्राण स्पर्श—/ ख घ ठ ढ् थ् ध् फ् भ / अल्पप्राण संघर्षी—/ च् ज् / महाप्राण संघर्षी—/ छ् झ् /, ऊष्म—/ स् ह् /, नासिक्य / म् न् /, कंपनयुक्त / र् / पार्श्विक / ल् / अर्द्ध स्वर / य् व् / संयुक्त व्यंजन—सभी अल्प प्राण स्पर्श व्यंजन स्वनग्राम सभी अल्पप्राण स्पर्श-संघर्षी, दोनों नासिक्य, कंपनयुक्त, पार्श्विक, तथा अर्द्ध स्वर य द्वित्व हो सकते हैं। संयोग की दृष्टि से अल्पप्राण स्पर्श + स्ववर्गीय महाप्राण स्पर्श, अल्पप्राण स्पर्श संघर्षी + स्ववर्गीय महाप्राण स्पर्श संघर्षी संयोग सम्भव है। ऊष्म / स / + / प् त् ट् / सम्भव है; नासिक्य / म्— / + / प् ब् ह् / सम्भव है; नासिक्य / न् / + / त् थ् द् ध्, ह् / सम्भव है; नासिक्य [ण] + / ट् ठ् ड् / सम्भव है; नासिक्य [ञ] + / च् ज् / सम्भव है; नासिक्य [ङ] + / क् ख् ग् घ् / सम्भव है। / र् / के साथ / त् थ् द् च् छ् ज् स् ह् / का

संयोग हो सकता है; / ल् / के साथ / त् थ् द् ट् च् ज् झ् स् ह् / का संयोग हो सकता है; व्यंजन + अर्द्ध स्वर की स्थितियाँ भी हैं। इन संयोगों में भी बोलीगत भेद प्राप्त होते हैं। इन व्यंजनों के ध्वन्यात्मक तथा प्रयोगात्मक संस्वन भी मिलते हैं। आक्षरिक विधान इस प्रकार है। ह = व्यंजन तथा अ = स्वर

अ	अ ह अ अ
अ अ	ह ह अ ह अ अ
ह अ	ह अ ह अ अ
ह अअ	ह अ अ ह अ
अ ह अ	ह अ ह ह अ ह अ
ह अ ह अ	अ हह अ ह अ
ह अ हह अ	अ ह अ ह अ ह अ
ह अ ह अ ह अ	ह अ ह अ ह अ ह अ ह अ

२. पद विचार—

(क) संज्ञा—संज्ञा की रूपतालिका इस प्रकार है-—

१	२	३	४	५	६
/ घर्— /	/ चीत् /	/ हाती /	/ लोटा /	/ सौति /	/ झाऊ /
/ घरु /	/ चीतौ /	/ हाती ऐ /	/ लोटा ऐ /	/ सौत्यै /	/ झाऊ ऐ /
/ घर /	/ चीते /	/ हातीन् /	/ लोटन⁀लोटान् /	/ सौतिन् /	/ झाऊन् /
/ घरै /	/ चीते ऐ /				
/ घरन् /	/ चीतेन् /				

उक्त तालिका में (१) और (२) ऐसी संज्ञाएं हैं जो पाँच रूप ग्रहण करती हैं। शेष संज्ञाएँ तीन रूप ग्रहण करती हैं। संज्ञा के मूल रूप में पदरूपांशों के संयोग की दृष्टि से संज्ञाएं तीन भागों में विभक्त हो सकती हैं—(१) सं० भू० + {—उ—अ—ऐ—अन्} (२) सं० भू० + {—औ—ए > —ऐ—न्} (३) सं० भ० + {—ऐ—न्} संज्ञा के साथ युक्त होने वाले पदरूपांशों का अर्थ बोधन इस प्रकार है—{—उ—औ} = एक० पुं० कर्त्ता०; {—अ—ए} = तिर्यक् तथा बहु० पु० कर्ता; {—ऐ} = कर्म सम्प्रदान; {—न्} = बहुवचन। उकारान्त स्त्रीलिंग शब्द। ब्याजु। आदि तिर्यक् रूप में भी विकृत नहीं होते।

सं० भू० के पहले ये पूर्व प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं—कुत्सार्थक {अ—कु—औ—खर—दु—} निषेधार्थक {अ—अप्—} स्वार्थक {अप—} परार्थक {पर—} संज्ञार्थक {दु—ति—चौ—}

सं० भू० के पश्चात् पर प्रत्ययों के योग से भी विशेष अर्थ वाले संज्ञ-रूपों की रचना की जाती है। लघ्वर्थक पर प्रत्यय स्त्रीलिंग होते हैं। सं० भू० + {–उ + –ल् + –ई} जैसे। ढपुली। "छोटा ढप"; सं० भू० + {–इया} जैसे। लुटिया। "छोटा लोटा" अन्य पर प्रत्यय—सं० भू० + {–न् + –ई} / चाँदनी /, सं० भू० + {–बार् + औ⁀ई}

/ गाड़ी बारौ / ~वारी / सं० भू० + {–हार् + ओ~ई} / पनिहारी / सं० भू० + {–अर् + –उ~आ} / पीहरु /, सं० भू० + {–आर् + उ~अ} / सुनारु /, सं० भू० + {पन् + –उ} / बालापनु /, सं० भू० + {–औ} / सराफौ / "जहाँ सर्राफों की दुकानें हों" सं० भू० + {–अट्टौ} / पसरट्टौ /, सं० भू + {–हा~आ + ई} / गुड़िहाई / सं० भू० + {–त् + इ} / रंगति / सं० भू० + {–आइस्– + इ} / घराइसि / सं० भू० + {–आस् + औ ~ई} / मुंडासौ / सं० भू० + {–ई} / अंगूठी /, / खेती /, सं० भू० + {–आलू ~लू} / दयालू / सं० भू० + {–एर् + औ~ई} / कमेरौ / सं० भू० + {एर् + ई~औ} / हतेरी /, सं० भू० + {–एल् + अ} / फुलेल /, सं० भू० + {ऐल्} / खपरैल /, सं० भू० + {– आर् + औ} / घमारौ /, सं० भू० + {–आऊ} / गैलाऊ / सं० भू० + {औट् + ई} / हतौटी /, सं० भू० + {—औत् + ई} = /बपौती / सं० भू० + {— औट् + ई} / गुबरौटी /, सं० भू० + {—अक} = / ठंडक /, सं० भू० + { —अका} / बुँदका /, सं० भू० + {—ज् + औ~ई} / भतीजौ /, सं० भू० + {—त + उ~औ} = / पांइतु /, सं० भू० + {—अड् + ई} / अंतड़ी /, सं० भू० + {—अड् + आ} / दुखड़ा /, सं० भू० + {– अर् + आ~ई} / लौंड़रा /, सं० भू० + {—ल् + आ} / घुड़िला /

संज्ञाओं की रूप-रचना:—विशेषणों, सर्वनामों, क्रियापदों, में प्रत्ययों का योग करके भी संज्ञा के विशिष्ट रूपों की रचना की जाती है । ऐसे प्रत्यय अनेक हैं । दो क्रियाओं के योग से भी संज्ञा की रूप-रचना होती है । इस दशा में परप्रत्यय अन्तिम संज्ञा के साथ युक्त रहता है ।

संज्ञा के स्थानापन्न विशेषण, सर्वनाम तथा क्रियार्थक संज्ञा (तुमन्त) हो सकते हैं ।

(ख) **लिंग** · समस्त संज्ञाएं स्त्रीलिंग, पुल्लिंग में विभक्त हैं । विशेषण तथा क्रियाओं में भी लिंग-प्रत्ययों का योग होता है । / —औ / अन्त्य सदा पुंल्लिग होता है तथा / — इ / सदैव स्त्रीलिंग जैसे / तारौ /, / सौति / अ—आ– –इ—ई—उ—ऊ / अन्त्य दोनों लिंगों में प्राप्त हो सकते हैं । स्त्री प्रत्यय–मूलतः दो हैं / —ई / तथा / — इ / स्वतंत्र रूप से तथा / —न— / के साथ मिल कर भी प्रयुक्त होते हैं । जैसे— / हतिनी / **पुंल्लिग प्रत्यय** / —उ / तथा / —औ / है । इन्हींके प्रयोग से अधिकांश विशेषणों को और क्रियाओं को बहुधा / —औ / के प्रयोग से पुंल्लिग रूप दिया जाता है। आकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त, तथा औकारान्त संज्ञाओं को ईकारान्त करने से पुंल्लिग संज्ञाएं स्त्रीलिंग हो जाती हैं । / — ई / के स्थान पर / — इया / भी जोड़ा जा सकता है । जैसे— / चपटा / से / चपटिया /, / अईया इनि इनी, आनी / जोड़ कर भी पुंल्लिग रूपों से स्त्रीलिंग रूप बनाए जाते हैं ।

संबंध कारक के चिह्नों में भी लिंग भेद रहता है । / कौ~की /

(ग) **वचन**—एकवचन, बहुवचन मिलते हैं । वचन का द्योतन संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण संबंध कारक चिह्न / कौ~के~की / के साथ होता है ।

१. **संज्ञाओं में वचन-द्योतन**—इस दृष्टि से संज्ञाओं के दो वर्ग हैं (कर्ता पुं० एक० तथा बहु प्रत्यय क्रमशः / —उ —औ / तथा / —अ—ए / ग्रहण करने वाली संज्ञाएं ।

जैसे / घरु / (एक०) / घर / = बहु० / चीतौ / = एक० / चीते / = बहु० । ९१ दूसरी संज्ञाएं उक्त स्थिति में अविकृत रहती हैं । ऐसी संज्ञाओं में बहुवचन का द्योतन / —न् ~अन् / प्रत्यय से होता है / जैसे —/ बात / — एक० / बातन / "बहु०" आदि ।

२. **विशेषणों में वचन-द्योतन**—एक० और बहु० का द्योतन संज्ञाओं की भाँति है । {—उ~—औ} एक० {—अ~ए} बहु० प्रत्यय प्रथम वर्ग के विशेषणों के साथ संयुक्त होते हैं । जैसे— / सुन्दरु / "एक०" / सुन्दर / बहु० / अच्छौ / एक० / अच्छे / बहु० । अन्य विशेषण संज्ञा के रूप में प्रयुक्त होने पर {—न} बहु० प्रत्यय अपने तिर्यक् रूप के साथ स्वीकार करते हैं । जैसे —/ अच्छेन् /—विशेषण रूप में प्रयुक्त होने पर ये अविकृत रहते हैं ।

३. **क्रियाओं में वचन द्योतन** —वर्त० कृ० में एक० पुं० का द्योतन {—उ} तथा बहु० पुं० का द्योतन {—अ} प्रत्ययों से होता है । जैसे—/ जांतु / "जाता" (एक०) / जांत / "जाते" (बहु०) भू० कृ० में । {—औ} एक० पुं० {—ए} बहु० पुं० {—ई} एक० स्त्री {—ईं} बहु० स्त्री० का प्रयोग होता है । जैसे—/ गयौ / "गया" गए/ "गये" / गई / "गई" / गईं / "गईं" / भविष्यकाल के रूपों में भी {—औ~ए} का प्रयोग होता है । / जाइगौ / "जायगा" / जांगे / "जायगे" । पर उ० पु० एक वचन में {—औ} मिलता है । जैसे—/ जांगौ / "जाऊंगा ।

४. **संबंध कारक चिह्नों में** भी / औ~—ए / का प्रयोग होता है । जैसे— /—कौ—के / ।

(घ) **विशेषण**—इनके तीन वर्ग हैं :

१. भू० वि० + {—औ~—ए~— ई} / अच्छौ / "अच्छा" / अच्छे / "अच्छे" / अच्छी / "अच्छी" ।

२. भू० वि० + {—उ}, {अ} / सुन्दरु / "सुन्दर" (एक०) / सुन्दर (बहु०)

३. भू० वि० + / सादा / "सादा"

मिश्र-विशेषण—मूल विशेषण (मू० वि०) के साथ कुछ परप्रत्ययों का योग करके उनमें विशिष्ट अर्थ उत्पन्न किया जाता है ।

१. भू० वि० + {लिं० वच०} + {—स्—} + {लिं० वच०} अथवा {स्त्री०} = विशेषण । / अच्छौ सौ / "अच्छा सा" । भू० वि० का द्वित्व भी इस स्थिति में प्रयुक्त होता है जैसे—/ अच्छौ अच्छौ सौ / "अच्छा अच्छा सा" ।

२. विशेषण तिर्यक् + {—मन} = विशेषण । जैसे—/ कारेमन / 'काला सा' ।

३. तुलनात्मक रूप के लिये तुलनीय संज्ञा अथवा सर्वनाम तथा विशेषण के बीच में / —ते / का प्रयोग किया जाता है : / कुत्ता ते हुस्यार बिल्ली / 'कुत्ता से होशियार बिल्ली' ।

४. उक्त / —ते / से पूर्व / सब / 'सब' जोड़ कर तमप् रूप बनाए जाते हैं । जैसे—/ सबते हुस्यारु / "सबसे होशियार"

विशेषणों की रचना--

१. संज्ञाओं से पूर्व प्रयुक्त संज्ञाएँ=विशेषण: / हीरा आदिमी / "हीरा सा आदमी"।

२. संज्ञा+संज्ञा=विशेषण / गँगाजलु पानी / "गंगा जैसापानी"

३. पू० प्र०+संज्ञा=विशेषण। {अ—, अन्—, अप्—, कु—, खर्—, नि—, हु—, ना—, पर—, बे—, बद्, ला—, स—, सें—} प्रत्ययों का योग होता है। जैसे—/ अथाह / "अथाह" आदि।

४. संज्ञाओं के साथ पर प्रत्ययों के योग से भी विशेषणों की रचना होती है। जैसे / घरबारौ / "घर वाला" आदि।

५. क्रिया पदों के साथ भी प्रत्ययों का संयोग करके विशेषणों की रचना होती है। जैसे—√बिगार्—से / बिगारा / "बिगाड़ने वाला" / पिअक्कड़ / "पीने वाला" आदि।

६. क्रियार्थक संज्ञाओं के साथ भी प्रत्ययों का योग करके विशेषण बनते हैं। जैसे / खानों / "खाने वाला"।

७. **विशेषणों के प्रकार**—इस प्रकार हैं: सर्वनाम मूलक, प्रकार वाचक, परिमाण वाचक, संख्या वाचक।

(ङ) **सर्वनाम**—इसके चार भेद हैं: चार रूप ग्रहण करने वाला और तीन रूप ग्रहण करने वाले दो रूप ग्रहण करने वाले और अपरिवर्तनीय।

१. मध्य० एक० / तू /, / तैं—/, / तो—/, / ते / तू, तू, (ने), तुझे, ते (रा)।

२. उत्त० एक० / मैं /, / मो—/, / मे—/ "मैं, मुझे, मेरा"।

३. अन्य० एक० / बु /, / व्वा—/ "वह, उस"।

४. उत्त० मध्य० बहु० / हम /, / तुम / "हम, तुम"।

(च) **परसर्ग**—निर्विभक्तिक शब्द मात्र भी पद रूप में प्रयुक्त होते हैं। जैसे—/ छोरा जाइगो / "छोरा जायगा"।

१. **विभक्तियाँ** /—उ /, /—इ◡ऐ / हैं, /—उ / का प्रयोग कर्ता-कर्म-एक० में व्यंजनान्त संज्ञाओं में होता है। / रामु गयौ / "राम गया" / इ◡ऐ / का प्रयोग कर्म, करण, सम्प्रदान व्यक्त करने को होता है। जैसे— / रामें बुलाओ। "राम को बुलाओ"।

२. **कारक चिह्न**—कर्तृवाचक /—नैं /, कर्म-सम्प्र० /—कूं /, संबंध / कौ◡कै◡की /, अधिकरण /—में, —पै, —तर, —तक, जूं / करण-अपा० में इन्हीं का प्रयोग होता है।

(छ) क्रिया—

१. **धातु**—दो वर्गों में : एकाक्षरात्मक, द्वयाक्षरात्मक। धातुओं के स्वर को परिवर्तित करके तथा प्रेरणार्थक प्रत्यय {—आ} तथा {अबा} का योग करके अर्थ भेद किया जाता है। जैसे—√रुक्—से / रोक्—/ और—√रोक् से / रुकबा /।

२. **क्रियार्थक संज्ञा**—धातुओं तथा उनके प्रेरणार्थक रूपान्तरों के साथ क्रि० स० प्रत्ययों का योग करके क्रि० स० की रचना होती है। प्रत्यय ये हैं : {—इब्—} अथवा {—न्—} जैसे— / आइबौ /, / खानौं /।

३. **वर्त०** कृ०=धा० + {—त—} + {औ⌣ए⌣ई⌣ईं} जैसे—√चल् + {—त्—} + {औ⌣ए⌣ई⌣ईं} = / चलतौ /, / चलते /, / चलती /, चल्तीं /

४. **भूत०** कृ०=धा० + {—ग—} + {औ⌣ए⌣ई⌣ईं} जैसे— / गयौ / "गया" आदि।

५. **आज्ञार्थक**=धा० + {इ⌣औ⌣ऐ⌣ऐं} जैसे / करि /, / करौ /, / करै /, / करैं / मध्य० एक० के भविष्य आज्ञार्थक पृथक् है। जैसे— / करियो / "करना" उत्तम० एक० बहु० के अभिप्रायार्थक रूप बनाने के लिये धातु में {—ऊं} तथा {—एँ} का प्रयोग मिलता है। जैसे— / करूं /, / खां मैं /।

६. **काल रचना**—

अ—मूलकाल : वर्तमान निश्चयार्थ, भविष्य निश्चयार्थ तथा आज्ञार्थक रूप हैं।

आ—कृदन्ती रूप : इसमें वर्त० कृ०, भूल० कृ० और भूत संभावनार्थ प्रयुक्त होते हैं।

७. **संयुक्त क्रिया**—वर्त० कृ०, भूत० कृ०, पू० कृ० तथा क्रि० सं० के साथ किसी सहायक क्रिया अथवा प्रधान क्रिया का संयोग करके विभिन्न अर्थों का द्योतन किया जाता है। ऐसे संयुक्त रूप मथुरा में प्रचुर हैं।

८. **क्रियाओं की रचना**—

अ—संज्ञा + {—आइ} = क्रि० = / दुख + आइ / = / दुखाइ / "दुखाना"।

आ—विशेषणों के साथ भी उक्त प्रत्यय जोड़ कर क्रिया बनाई जाती है। जैसे— / लंबाइबौ / "लम्बा करना"।

इ—क्रि० वि० के साथ भी इस प्रत्यय का प्रयोग होता है : / भितराइबौ / "भीतर घुसाना"

ज—अव्यय के दो वर्ग हो सकते हैं : क्रिया विशेषण तथा अन्य अव्यय।

१. **क्रिया विशेषण**—मूल, यौगिक, संयुक्त और स्थानीय भेद हो सकते हैं। मूल किसी दूसरे शब्द के आधार पर नहीं बनते। जैसे—/ नजीक / "पास"। इनके कालवाचक, स्थान वाचक, रीति वाचक तथा परिमाण वाचक भेद हो सकते हैं। यौगिक क्रि० वि० अन्य पदों के साथ प्रत्यय संयुक्त करके बनाए जाते हैं। जैसे—/ भागि बस /

"भाग्यवश" ये संज्ञा, विशेषण, सर्वनामों, क्रिया पदों, तथा अव्ययों के आधार पर बनते हैं। संयुक्त क्रिया वि० संज्ञाओं की द्विरुक्ति / घर घर / विशेषणों की द्विरुक्ति / एकाएक /, क्रि० वि० की द्विरुक्ति / धीरें धीरें /, अनुकरणात्मक शब्दों की द्विरुक्ति / सटासट / तथा क्रियाओं की द्विरुक्ति / सोमत सोमत / से बनते हैं।

दो समान क्रि० वि० के बीच /—न—/ रखकर / कबऊ—न—कबऊ /, दो भिन्न क्रि० वि० / जहाँ-तहाँ /, दो समान संज्ञाओं के बीच / —के— / अथवा / —कौ— / रख कर / महीना—के—महीना / संज्ञा + / कूं / मैं / जैसे -- / घर में /, विशेषण + संज्ञा / जाखन / "इस क्षण" संज्ञा + क्रि० धा० + / —ऐं— / / दिन चढ़ें / "दिन चढ़ने पर" विशेषण + / —तरह / / अच्छी तरह / आदि प्रणालियों से संयुक्त क्रि० वि० की रचना की जाती है।

स्थानीय क्रि० वि० अपरिवर्तित पदों के प्रयोग होते हैं / जैसे — / तू अपनौ भूंडु पढ़ैगो / "तू नहीं पढ़ेगा"।

२. **अन्य अव्यय**—बलवर्द्धक, समानार्थक, समेतार्थक, केवलार्थक, संबंध सूचक, समुच्चय बोधक, तथा विस्मयादि बोधक हो सकते हैं।

३. **वाक्य विचार**—इस अध्याय में वाक्यों के वर्गीकरण, विश्लेषण विस्तार, लोप, अन्वय और पद क्रम पर विचार किया गया है।

(क) **वाक्यों का वर्गीकरण**—पहले वाक्यों के दो भेद किये जा सकते हैं : एक क्रिया वाले वाक्य तथा एक से अधिक क्रिया वाले वाक्य।

१. **एक क्रिया वाले वाक्य**—भी दो प्रकार के हो सकते हैं: लुप्त क्रिया वाले वाक्य और प्रकट क्रिया वाले वाक्य। लुप्त क्रिया वाले आह्वान वाक्य होते हैं। इनमें केवल उद्देश्य प्रकट रहता है। आह्वान वाक्य मात्र संज्ञा वाले भी हो सकते हैं: / छोरा ↑ /"छोरा।" तथा संबोधन + संज्ञा वाक्य : / ओ ↑ छोरा ↑ / "ओ छोरा।"

प्रकट क्रिया वाले वाक्य निम्न प्रकार के हैं—

(अ) **अवरोही सुरान्त वाक्य**—सामान्य कथन। / बु आवैगो / "वह आयगा"।

(आ) **अवरोह + मोड़ वाले वाक्य**— क्रिया पर बल : / छोरा आवैगो ↓ T ‖ / "छोरा आवैगा"

(इ) **आज्ञार्थक प्रत्ययों से युक्त वाक्य**—१. धीर सुर युक्त / तू जा→।।/ "तू जा।"

२ **अवरोही सुरान्त वाक्य**—आशीर्वादात्मक वाक्य : / भगमान सबकौ भलौ करै ↓ ‖ / "भगवान सब का भला करे।" ३. अवरोही + /T/ वाक्य : प्रार्थनात्मक : / भैया चल्यौ जा ↓ T ‖ / "भैया चला जा।"

(ई) **संदेहार्थक अव्ययों से युक्त वाक्य—**/ स्याइति बुजाइ / "शायद वह जाय"।

(उ)—प्रश्नवाचक वाक्य—१. आरोही सुरान्त : / बु गयौ ↑ ‖ / "वह गया."

२. प्रश्नवाचक अव्यय वाले वाक्य / बु कहाँ गयौ / "वह कहां गया?"

(ऊ) निषेधार्थक अव्ययों से युक्त वाक्य— / मैं नं जाँगो / "मैं नहीं जाऊंगा" ।

(ए) **बल तथा बलवर्द्धक निपात** / **तौ** / से युक्त वाक्य / **रामु कल्लि जइगौ** / "राम कल जायगा" ।

२. **एक से अधिक क्रिया वाले वाक्य**—इनके पहले दो भेद किये गये : संयुक्त वाक्य : समानाधिकरण वाक्यों से युक्त : तथा मिश्र वाक्य : अधीन वाक्यों से युक्त : । संयुक्त वाक्य संयोजक अव्ययों से युक्त होते है / बु आवैगो और मैं जांगो / "वह आवेगा और में जाऊँगा" । संयुक्त वाक्यों के रूप-रचना की दृष्टि से दो भेद किये गये हैं : जिनमें प्रथम वाक्य किसी विशेष पद से आरंभ नहीं होता तथा जिनमें प्रथम वाक्य किसी विशेष पद से आरंभ होता है । मिश्र वाक्य भी किसी विशेष पद से आरंभ होने वाले और किसी विशेष पद से आरम्भ न होने वाले हो सकते हैं । आश्रित वाक्य—संज्ञा वाक्य, विशेषण वाक्य और क्रिया विशेषण वाक्य हो सकते हैं । इनके कई रूपान्तर मिलते हैं ।

(ख) **वाक्य का विश्लेषण**—व्यक्त या अव्यक्त रूप से प्रत्येक वाक्य मे एक उद्देश्य एक विधेय, तथा एक संयोजक क्रिया होती है । उद्देश्य संज्ञा या संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त हो सकने वाला कोई पद होता है । विधेय क्रिया, संज्ञा, विशेषण, अथवा वाक्यांश हो सकता है । संयोजक क्रिया उद्देश्य और विधेय को संबद्ध रखती है ।

(ग) **विस्तार**—संज्ञा का विस्तार विशेषणों, विशेषण वाक्यांशों, समानाधिकरण पदों और विशेषण उपवाक्यों द्वारा हो सकता है । विशेषण का विस्तार अन्य विशेषणों, बलवर्द्धक निपातों क्रियार्थक संज्ञा + कारक चिह्नों से हो सकता है । क्रिया का विस्तार क्रिया विशेषण पद तथा वाक्यांशों द्वारा हो सकता है ।

५. **लोप**—प्रश्नों के उत्तर में प्रश्न से संबंधित पद के अतिरिक्त सभी अंग लुप्त हो सकते हैं । सामान्यतः आज्ञा वाक्य मे क्रिया रहती है तथा आह्वान वाक्य में उद्देश्य रहता है ।

६. **अन्वय**—१—क्रिया के लिंग वचन कर्ता के लिंग वचन के अनुसार होते हैं ।
२—विशेषण का लिंग वचन विशेष्य के अनुसार होता है ।

७. **पद क्रम**

१—सामान्य पद क्रम : कर्ता→कर्म→क्रिया ।

२—उद्देश्यात्मक विशेषण विशेष्य से पूर्व और विधेयात्मक उसके पश्चात् प्रयुक्त होते हैं ।

३—क्रि० वि० सामान्यतः विशेष्य पदों से पूर्व ही प्रयुक्त होते हैं ।

४—सम्प्र० कारक चिह्न कर्ता और कर्म के बीच में स्थित रहता है / मैंनें व्वा कूं किताब दई / ।

५—करण—चिह्न कर्म कारक से पूर्व प्रयुक्त होता है ।

६—अपादान कारक की स्थिति कर्ता और क्रिया के मध्य कहीं अपने महत्व के अनुसार होती है ।

७—अधिकरण कारक सामान्यत: वाक्य के आरंभ में रहता है।

८—संबोधन कारक भी वाक्य के आरंभ में रहता है।

९—संयोजक क्रिया वाक्य के अन्त में रहती है।

४. **बोली भूगोल**—बोली की दृष्टि से मथुरा जिले के दो भाग हो सकते हैं: ठाड़ी बोली भाग तथा खड़ी बोली भाग। किन्तु इनकी विभाजक रेखा पूर्ण सुस्पष्ट नहीं है।

(क) दोनों भागों का बोलीगत अन्तर—

१—ठाड़ी बोली में / व / स्वनग्राम मिलता है पर प० बो० मे नहीं मिलता।

२— / ए / का एक संस्वन [$^{य}{}_{ए}$] ठा० बोली में मिलता है, प०बो० में नहीं।

३— / ओ + ओ / = / ओ /‿/ ओ ओ / : प० बोली :
= / औ / : ठा० बोली :

४—अ + ऐ / = / अऐ / : प० बो० : = / ऐ / ठा० बो०

५—जो पद प० बो० में ह्रस्व स्वरान्त होते हैं, वे ठा० बो० में व्यंजनान्त होते हैं।

६—ठा० बो० में पदान्तक /—इ / पर आधारित अक्षर से पूर्व का / आ / प० बो० में / आ / ही है पर ठा० बो० में / --आइ्—। है / आदिमी / = [आइ्द् मीं] "आदमी"

७—ठा० बो० में अधिक व्यंजन-संयोग सम्भव है।

८—प० बो० उकार बहुला है। ठा० बो० इकार बहुला है।

९—ठा० बो० व्यंजन सुदृढ़ हैं और स्वर शिथिल, प० बो० में स्वर सुदृढ़ हैं और व्यंजन शिथिल।

१०— / स्—/ के पश्चात् प० बो० मे / च / स्थित रह सकता है, पर ठा० बो० में / च / के स्थान पर / स / मिलता है। जैसे— / सांची / = / सांसी / "सच्ची"।

११—प० बो० में [ड़] प्राप्त होता है, पर ठा० बो० में नहीं।

१२—ठा० बो० व्यंजनान्त संज्ञाएँ {—उ , —अ} प्रत्यय कर्ता पु० एक० बृङ में ग्रहण नहीं करतीं, प० बो० में करती हैं।

१३—अनिश्चित वर्तमान तथा भू का रूप दोनों में भिन्न है। जैसे प० बो०

क्रि० धा० + {—त्} + { —उ / —अ / —इ } + { भूत { —औ / —ए } / वर्त { —ऐ / —ई / —ऐ } } = भूत०वर्त० अनिश्चित

ठा० बो० क्रि० धा० + θ + θ + ,, = ,,

१४. **सर्वनाम**—दोनों में कुछ भिन्न हैं। जैसे—

पा० बो०	ठा० बो०	
/ बु◡गु /	/ ऊ /	"वह"
/ बे◡ग्वे /	/ वे◡वे /	"वे"
/ जि◡गि /	/ ई /	"यह"
/ व्वा◡ग्वा /	/ वा /	"उस"
/ जा◡ग्या /	/ या /	"या"
/ तुम◡	/ तम /	"तुम"

१५—**क्रि० वि०**—प० बो० / न्यां / ठा० बो० / ह—यां / "यहां"
,,　　/ म्वां /　　,,　　/ हवां / "वहां"
,,　　/ बौं /　　,,　　/ क्यौं / "क्यों"

उक्त दोनों विभागों के उपविभाग भी हैं। प० बो० के पूर्वी पड़ी बोली, मध्य पड़ी बोली तथा पश्चिमी पड़ी बोली उपविभाग हो सकते हैं। इसका आधार जातीय तथा स्थानीय दोनों प्रकार का है। ठाड़ी बोली के उपविभाग जातीय आधार पर हैं : गूजर, जाट, मेव, जादों जातियों की बोली में कुछ अन्तर है। नगर तथा चौबों की बोली का विस्तुत अध्ययन प्रस्तुत प्रबंध की सीमाओं में नहीं है। फिर भी इनका ग्रामीण बोली से अन्तर स्पष्ट करदिया गया है।

श्री उदयशंकर शास्त्री

चतुरभुजदास की मधुमालती में मैनांसत प्रसंग

चतुरभुजदास निगम के नाम से पाई जाने वाली रचना मधुमालती की चर्चा प्रायः सभी इतिहास ग्रंथों में मिलती है, और भारत के एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक इसकी अनेक प्रतियाँ भी पाई जाती हैं। चतुरभुजदास ने मनोहर (मधु) और मालती की प्रेमकथा के व्याज से अनेक कथाओं का गुंफन भी साथ ही साथ किया है। यह रचना इतनी प्रसिद्ध रही है कि अनेक प्रकार के चित्रों से युक्त प्रतियाँ भी देखने में आती हैं किंतु खेद है कि इतनी विश्रुत रचना भी अभी तक मुद्रित नहीं हो पाई है। इसी मधुमालती के बीच में एक स्थान पर मधु मालती से कहता है—

जीयत शत न छंडीये उत्तम जन इह पेष।
दूती बचन कह्यौ थकै शत मैनां को देख।

इस वाक्य को सुनकर मालती मधु से पूंछती है कि मैनां का सत किस प्रकार से रहा इसकी कथा सुनाओ, तब मधु ने—

'मालती सुन मैनां की बात, अपनौ सत है अपने हाथ।
शत मैनां को तोहि सुनाऊ, थोरा बात कहै समझाऊं।'

मालती को मैनां के सत की पूरी कहानी सुनाई। वह कहानी इस प्रकार है :—

वरनापुरी नाम का एक नगर है जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि अठारहों जातियां निवास करती थीं। खूब बड़े-बड़े महाजन भी रहते थे, उनमें एक लोरकशाह भी थे जो राजा के समान धनाढ्य माने जाते थे। उनकी स्त्री जिसका नाम मैनां था अत्यन्त सुंदरी थी और उतनी ही सतवंती भी थी। उन दोनों में आपस में इतना प्रेम था कि दोनों में से कोई भी पल भर का भी वियोग नहीं सहन कर सकता था। पर होनहार को कौन टाले। एक दिन लोरकशाह ने अपनी स्त्री से परदेश जाकर व्यापार करने की बात कही जिसे सुनकर मैनां ने कहा कि आपको किस बात की कमी है ? आपको परदेश जाने की क्या आवश्यकता है। इस पर लोरक ने कहा कि बिना उद्यम के सुख नहीं होता। नगर के लोग व्यापार करने परदेश जा रहे हैं, मैं भी उन्हीं के साथ चला जाऊं और साल छै

महीने में बहुत सा द्रव्य कमा कर ले आऊं। मैनां ने पति के परदेश जाने की बात से बहुत ही दुख माना परन्तु लोरक किसी तरह उसे समझा बुझाकर परदेश चला गया।

लोरक के परदेश चले जाने के बाद मैनां किसी प्रकार अपने दिन काटने लगी। न किसी से मिलती जुलती न किसी के साथ हंसती खेलती, मन मारकर अपने पति का वियोग सहन करती थी।

इसी समय घटना ऐसी घटी कि गंगा के उस पार रहने वाले एक राजा के पांच लड़के थे। उनमें से चार तो अपनी मर्यादा के अनुसार ही चलते थे पर पाँचवाँ लोक-लाज छोड़कर बेराह चलता था। वह प्रतिदिन शिकार खेलने उसी राह से जाया करता था, जहाँ मैनां का घर था। संयोगवश मैनां अपनी अटारी पर बैठी हुई थी कि उधर से राजकुमार निकला, मैनां को देखते ही राजकुमार उस पर आशक्त होगया। और मैनां को अपने वश में करने का उपाय करने लगा। उसने अपने मित्रों को बुलाकर मैनां को अपने वश में करने के उपाय पूंछे। मित्रों ने आकर सलाह दी कि नगर में बहुत सी कुटनियाँ हैं, उनमें से किसी को बुलाकर यह काम सौंप दो। तब उसने रतना मालिन नामक दूती को बुलवाया और उससे कहा कि अगर तू मैनां को मेरे पास ले आवेगी तो तुझे मुंह मांगा इनाम मिलेगा। रतना मालिन ने कहा, कि मैं बड़े-बड़ों को वश में कर सकती हूं, इस मैनां की कौन गिनती है, और वहाँ से चल पड़ी।

अपने घर आकर उसने अपना सिंगार-पटार किया और मैनां के महल में जा पहुँची। अजनबी स्त्री को अपने घर में आया देखकर मैनां ने कहा—तू कौन है, और कहाँ से आई है, तब मालिन ने कहा—मैं तेरी धाय हूं। तेरे बचपन में तेरे पिता ने दूध पिलाने के लिए मुझे रखा था। बचपन में मैंने तुझे अपना दूध पिला कर पाला पोसा है। सो बहुत दिनों से तुझे देखा नहीं था इसलिए तुझे देखने की इच्छा से आई हूं।

मैनां ने रतना मालिन की इन कपट भरी बातों को सत्य समझा, और तुरंत ही अपनी दासियों को बुलाकर मालिन का स्वागत सत्कार करने को कहा। मैनां को अपनी बातों में आया जानकर मालिन मन ही मन बहुत प्रसन्न हुई और समझ लिया कि अब तो यह शीघ्र ही मेरे वश में हो जाएगी। धीरे-धीरे जब उसका हेल-मेल थोड़ा और बढ़ा तब उसने पूंछा कि तेरी यह दशा क्यों है, न आँखों में काजल है न मांग में सेंदुर, क्यों? तेरा पति कहाँ गया है जो तूने यह भेष बना रखा है। मालिन की सहानुभूति भरी बातों ने मैनां की वियोगाग्नि को और भी भड़का दिया, और उसने कहा—मेरा पति तो सागर पार चला गया है, अब मैं सिंगार किस पर करूं।

मालिन और मैनां का यह वार्तालाप चल ही रहा था कि वर्षा ऋतु आगई और आषाढ़ का महीना लग गया, मेघों के दमामे बजने लगे। तब मालिन ने कहा कि इस वर्षा ऋतु में तुझे अकेले तो बड़ा डर लगेगा, अभी क्या है जब सावन में पुरवाई बहेगी, भादों में मेंह की झड़ी लगेगी, तब भला तू अपनी रातें कैसे बिता सकेगी। इस लिये यदि तेरी इच्छा हो तो मैं तुझे ऐसे रसिक से मिला दूं जो तेरे सारे दुख दूर कर दे।

मालिन के इस प्रकार के वाक्यों को सुनकर तो मैनां भौंचक रह गई। वह सोचने

लगी यह किस प्रकार की धाय है, जो मेरी माता के समान होकर भी मुझे पाप के रास्ते चलने की सलाह दे रही है, उसने कहा मेरा पति तो संसार के सभी पुरुषों से श्रेष्ठ है उसे छोड़कर मुझे किसी दूसरे पुरुष कामना की स्वप्न में भी नहीं है। निदान मालिन उसे हर महीने में होने वाले ऋतुजन्य उपद्रवों से भयभीत करती और उसे प्रलोभित करती पर मैनां अन्त तक अपने सत पर दृढ़ रही, पर-पुरुष की ओर तनिक भी आसक्ति नहीं प्रकट की। किसी किसी प्रकार एक वर्ष व्यतीत हो चला और लोरक परदेश से लौटकर घर आगया। फिर तो मैनां के दिन ही लौट आए। उसने लोरक से मालिन की सारी हकीकत बताई। उन दोनों ने फिर मालिन का खूब सत्कार किया, ऐसा सत्कार कि जिससे देखकर दूसरों ने शिक्षा ग्रहण की। मालिन का सर मुड़ा कर उसके कई रंगों के टीके लगाकर, गधे पर चढ़ाकर नगर में इधर-उधर फिराकर निकाल दिया।

लगभग इसी कथानक पर कवि साधन ने 'मैनासत' नाम से एक अवधी काव्य लिखा है। अभी साधन के विषय की पूरी जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी हैं, जिसके कारण उनके रचना काल आदि का समय अज्ञात है। पर सन् १५६० ई० से साधन की रचना के लिखित रूप प्राप्त हैं अतएव यह तो निश्चित है इस अवधि से पूर्व ही उक्त रचना हो चुकी थी। चतुरभुजदास की इस रचना में यह कथा कब सम्मिलित की गई है इसके भी कोई पुष्ट प्रमाण अभी तक नहीं मिल पाए हैं जिसका कारण यह है कि चतुरभुजदास की मधुमालती के रचना काल का सही पता अब तक नहीं चला है। केवल हस्तलिखित प्रतियों की पुष्पिकाओं के आधार पर ही निर्भर रहने के कारण सं० १७७७ = सन् १७२० ई० से पीछे का कोई प्रमाण अब तक उपलब्ध नहीं हुआ है। मेरे संग्रह की दो प्रतियों (एक हस्तलिखित, एक मुद्रित) में यह प्रसंग पाया जाता है। जो दोनों सचित्र हैं। हस्तलिखित प्रति का लिपिकाल सं० १८२१ (?) है और मुद्रित प्रति संवत् १९२७ = सन् १८७० ई० की है। अन्य प्रतियों में यह प्रसंग नहीं है और अभी प्रमाणाभाव के कारण निश्चय पूर्वक यह भी नहीं कहा जा सकता है कि यह अंश मधुमालती में किसके द्वारा और कब सम्मिलित किया गया। इसकी भाषा और मूल मधुमालती की भाषा में अंतर है जिसके कारण यह भी अनुमान होता है कि यह अंश मूल से भिन्न है, और परवर्त्ती है।

इस पूरे प्रसंग में साधन के मैनांसत की कुछ पंक्तियां ज्यों की त्यों मिलती हैं। वैसे भी कई स्थानों पर साधन का नाम भी आया है। जिन स्थानों में साधन का नाम आया है वे ये हैं:—

इह तन राखूं राम सायधण सत्त न छंडहूं।
नैन न देखूं कोय लोरक बिन बीजो पुरष ।।२४

मालिनि आय भौन में पैठी, मैनां जहां सिघासन बैठी।
चंप चंबेली चौसर हार, दई भेंट कर कर मनुहार।

× × × × ×

तेरे पिता धाय मोहिं कीनी, मैं तोय चूची बालपनें दीनी।

× × × × ×

मैनां बात सांच कर मानी, मालिन कै बोलै पतियानी ।
तबही नावनि बेगि बोलाई,

नारि अकेली सेज सैं, श्रावण वरषै मेह ।
तिण रित साधन पिउ बिना, बैठी कहा करेय ।।६४

चहुंदिस झर निरझर बहें सषी सुषेलत तीज ।
साधन पिय बिन एकली, सही मदेसी षीज ।।६७

भादौं गहिर गंभीर चिहुंदिस बादल सघन घन ।
ए दिन बहोत अधीर साधन साँई बाहिरौ ।।१०७

× × × × ×

दादुर शोर कहूकत मोरा, सूंनि सेज लष उर फटि है तेरा ।।११४

× × × × ×

ए दिन यूंही जाय साधन जोबन पाहुंनौ ।
फिर कै बहुर न पाय पीछै पछितावौ परै ।।२२१

× × × × ×

साधन चढ़ि है वसंत बिरह बढ़त है चौगुनो ।
कामिन जब बिन कंथ जीवत शे मरबो भलो ।८८

इन पंक्तियों के अतिरिक्त और भी स्थान-स्थान पर साघन के मैनासत के अंश इस प्रसंग में विद्यमान हैं ।

मैनासत के इस प्रसंग में दो अन्तर्कथायें और भी आगई हैं। जो कथा कहने की पुरानी परिपाटी की याद दिलाती है। पहिली नकुल और ब्राह्मण की कथा है जो हितोपदेश पंचतंत्र आदि ग्रंथों में पाई जाती है दूसरी कथा सौदागर और सौदागरनी की है जो प्रायः कल्पित प्रतीत होती है। जिस प्रकार साधन की मूल कथा को लेकर इतना विस्तार किया गया है। उसी प्रकार अन्य कथाओं के रूप भी हैं। एक बात यह ब्रिचारणीय है कि साधन की मूल रचना में आने वाली 'चंदा' या 'चांदा' नाम की स्त्री की इसमें कोई चर्चा नहीं है। साधन के मैनांसत में रतना मालिन के पूंछने पर मैनां कहती है—

महरि कै धीया चाँद गोवारी, लै गै सेंदुर मोर उतारी ।

अर्थात् महर की बेटी चाँदा मेरा सेंदुर उतार ले गई है यानी मेरे पति को बहका कर ले गई है। यह अंश इस प्रसंग में नहीं है।

जहां ध्रू शायर चंद रवि मेरु मही थिर होय ।
तब प्रतयों परिवार सूं लेषक पाठक दोय ।।६६
जब लग मेर अडग हैं जब लग शशिअर सूर ।
तब लग आ पोथी शदा रहै ज्यों गुण भरपूर ।।२४००

इस अवतरण से यह विदित होता है कि मूल मधुमालती में गोयम (गौतम) कवि ने भी अपनी ओर से कुछ बढ़ोतरी की है। इस बढ़ोतरी की कैफियत देते हुए उसने लिखा है कि मधुमालती के अंतर्गत काम प्रयास, कोक विचार, शिव के द्वारा काम का दहन, पुनः उसका अवतार ग्रहण करना, आदि बावन प्रसंगों से पूर्ण यह पुस्तक उसने तैयार की है। मधुमालती की अन्य प्रतियों में जिनमें यह क्षेपक नहीं है उनमें भी पाँच आख्यानों की चर्चा है। उन प्रसंगों में मैनांसत के प्रसंग को अपनी ओर से जोड़ने की बात नहीं कही है। दूसरी मुद्रित प्रति में कुछ आख्यान उसके संशोधक या संपादक की ओर से बढ़ाए गए हैं, उसमें भी मैनासत प्रसंग को उक्त संपादक द्वारा बढ़ाए जाने की कोई चर्चा नहीं है। अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि इस मैनासत प्रसंग को गोयम (गौतम ने) अपनी ओर से मधुमालती में जोड़ा होगा।

मधुमालती की सभी प्रतियों में यह प्रसंग नहीं पाया जाता है जिससे यह भी अनुमान होता है कि मधुमालती के दो मुख्य पाठ हैं जिनमें से एक में साधन के मैनासत का यह प्रसंग है, और दूसरे में नहीं है। साधन के मैनासत में कोई अन्तर्कथा नहीं परन्तु इसमें मैनासत प्रसंग के भीतर भी ब्राह्मणी और नकुल का एक अंश विद्यमान है, जिसके लिए कवि गोयम (गौतम) ने लिखा है कि इसका समावेश मैंने इस कथा में किया है—

"मानधाता नृप को समय शिव दहियत शिव काम।
अजया गज ऊपर चढ़ी विप्र नौल कथ बांम।"

अर्थात जो चार प्रसंग उसने बढ़ाये हैं वे ये हैं—१. मानधातानृप, २. शिव द्वारा काम दहन ३. अजया गज, ब्राह्मण नकुल प्रसंग, इन में से नकुल और ब्राह्मण की कथा उसने साक्षी रूप से मैनांसत प्रसंग के अंतर्गत रखी है। इसी प्रसंग के अंतर्गत एक और उपकथा सौदागर, सौदागरनी की आई है, वह इस हस्तलिखित और मुद्रित दोनों प्रतियों में है

जिस हस्तलिखित प्रति में मैनासत का यह प्रसंग दिया हुआ है, उसके अन्त में इस प्रति का परिचय देने वाली यह सूचना दी हुई है। मधुमालती की पुष्पिका "इति श्री मधुमालती काम विलास कथानकं शंपूरनं ।।" एक नया शीर्षक समाप्त होने के बाद "अथ ग्रंथ विचार द्वार कथनं यथा सवैयों २५ सों ।।" देकर लिखा है :—

इहबात सुभाषित है मधुमालती याही में काम प्रयास बषांन्यौं।
पंचाख्यांन प्रचाररु कोक विचार नायककों कछू भावहु आंन्यौं।
शिवकाम दहे अवतार लहे मधूताहि प्रबंध शबें इत मान्यो।
उपवात प्रकाश जुदोय पंचाश इहें विध सूं इह ग्रंथह ठांन्यो।।९०

अथ शब ग्रंथ का तुमार कथनं यथा सवैया।३१।

बावन हीश में मधि सात्रुं हे छंदबध सवैये इकतीस सात चंदायन आने हैं।
छप्पय बनाये तीनूं कुंडलीये दोय दीनूं औरूं दोहा चौपै साढ़ातेईशशे ठाने हैं।
बत्तीशे अच्छर के श्लोककीय ताहि लेषैं ग्रंथ शंष्या षट इकसों प्रमाने हैं।
याहि ग्रंथ मांहि चौपी दूहें येरूपनाहि तायें कछू रूपक किबन गोयम बषाने हैं।

दोहा

मानधाता नृप को शमय शिवदहियत शिव काम ।
अजया गज ऊपर चढ़ी विप्र नौल कथ वांम ॥९२
इन विध च्यार प्रबंधए कहीया गोयम कवि ।
रूप शहित शत तृय कह्यो चोपी दूहा अव ॥९३
मत अनुसारे(?) में कह्या लीज्यो सुकवि सुधार ।
ह्रस्व दीर्घ गन अगन कों छमिहो एह विचार ॥९४
शततृय चौपी दूहरा शुभग सवासों रूप ।
किव गोयम एशें कहे भले रिझावन भूप ॥९५

अथ ग्रंथ लिषनहार ताकी प्रशस्ति:

सवैया ३१

तप गछ दिनंदिन तूर श्री विजैरत्नसूर तीश षट गुने पुर कीरत कहानी है ।
ज्याके पद धैयारू बाचक पदवैया किल कीरत के लहैया विजै लक्ष ही बषाने हैं ।
ताके प्रतपाट काजें बुद्धि भाग विजै राजे ज्याकें विजै मुक्ति छाजे पंडित प्रमाने हैं ।
जाके प्रशाद पाय गोयम पुस्तक वनाय सांडेरे शेहर माय ग्रंथ यो लषांने ।९६
संवत कृतारुशंन नाग भुयवर्ष ठान रितहू वशंत जान नीके मधुमाश हैं ।
तामें उदोत वष गवरजाहि तिथी रुषवार कुज तष लिष्यो ग्रंथ षाश हैं ।
रशीयन कें रीझवेंकूं चातुर क वंचवे कूं बुध जू के बूझवें कूं प्रेम कों प्रयाश हैं ।
कामी के जु शधें काम ध्यांनी के शझे धाम (ध्यान) इन विध गरथ मधुमालती विलाश हैं ।९७

जिससे यह अनुमान होता है कि यह मुद्रित प्रति (गोयम) गौतम के पहले वाले पाठ की परम्परा की है। इसीलिए गोयम (गौतम) द्वारा बढ़ाया गया प्रसंग उसमें नहीं है, परन्तु पहले की बढ़ोतरी वर्तमान है।

मैनासत का अध्ययन करने वालों के लिए यह बड़े महत्व का विषय है कि साधन की मूल कृति जिसकी प्रतियाँ इधर उधर पाई जाती हैं, उसका मूल रूप इस प्रकार अन्य रचनाओं के भीतर सुरक्षित है। प्रति में जहाँ मैनांसत का प्रसंग आरंभ होता है, और जहाँ समाप्त होता है दोनों पत्रों की अविकल प्रतिकृति इस लेख के साथ प्रकाशित की जा रही है।

मधुमालती में मैनासत प्रसंग

दोहौ

जीयत शत न छंडीयें उत्तम जन इह पेष ।
दूती वचन कह्यौं थकें शत मैंना कौं देष ॥७८

मालती वाक्यं । सोरठों ।

मालती टुक विलमाय मधूकर सूं एवें कहें ।
साची बात सुनाय शत मैंनां कैसें वह्यौं ॥७९

मधू वाक्यं । दोहा ।

मालती सुन मधूकर कहै ऐशी करै न कोय ।
जीयते शत न छंडीयों शत मेंना कों जोय ।।८०

मालती वाक्यं । चौपी ।

बहुर मालती बूझै एशी । मेंनां शत कीयां सों कैशी ।
दूत बचन दूती कहा कह्यौ । मेंनां कों शत कैशें रह्यौं ।८१

मधू वाक्यं

मालती सुन मेंनां की बात । अपनौं शत हें अपनें हाथ ।
शत मेंनां को तोहिं सुनाऊं । थोरी बात कहै शमभ्काऊं ।८२

प्रशंग मेंनां को । मधु वायक दोहों ।

नगर वशै वरनापुरी लोक महाजन सार ।
वरण अठारै वशत हें च्यार वरण सुविचार ।।८३

चौपी

वर रथ राजा राजै तहां । सोभा जाश सिंधु तट जहां ।
नगर लोक छिब कितीयक कहूं । थोरे मांझ बहोत रश लहूं ।७४
माहाजन रिधवंत तिहां वशैं । मोटै भौंन चित्त उल्लशैं ।
साह लोरक इक वशत हें जहां । राजा निकट मनियत हें तहां ।।८५
उनकैं गेह तृया इक सुंदर । ताशम नाहीं तृया पुरंदर ।
देव भुवन नहीं एशी सुरी । राज गेह ना अंतेउरी ।।८६
जोवन अधिक अधिक उनिहार । मदन कुंद रति कै विवहार ।
सतवंती घर सुंदर शोई । यैसी महीतल विरली होई ।।८७

दोहो

मालती सुन मधू कहैं मैंनां वाकौ नाम ।
अपने पति सौं रति करै नहीं और सूं काम ।।८८

चौपी

अपने पीउशें हेत अपारा । धरी एक दोउं होय न न्यारा ।
पति लोरकशा मेंना नारी । दोउं हेत बहोत अधिकारी ।८९
एत दिवश दोउ बैठे शंगे । लोरक शाह तृय शें कहैं रंगें ।
माहाजन विनज काज शव जावैं । तुम कहो तों हम भी सह जावैं ।९०
जो तेरी इक आग्या पावै । तो बहोत द्रव्य माल ले आवैं ।
मैंना बात सुनत मुरझांनी । लोरक साह गलें लपटानी ।९१

मैंना वाक्यं । चौपी

सुनौं कंथ इक बात हमारी । सब सुष तुमकूं दीयौं मुरारी ।
करौं विलाश अंत ना जावौं । नित प्रति मोकूं दरश दिषावौं ।९२

दोहौ

सुन मैंना लोरक कहै मोकूं आग्या होय ।
साह महाजन शब चले अब ढील न कीजें कोय ॥६३

चौपी

विन उदम कैशो सुष प्यारी । धन बिन कहा कैशौ शंशारी ।
जो धन होय तों शबही चहै । द्रब हीन नर पशु सम लहैं ।६४
अब मैं कहूं सोई सुन लीजै । चलूं विदेश रजा मोय दीजें ।
बहोत द्रव्य तहां ते ल्याऊं । वरश छमाश बहुरि फिर आऊं ।६५

मैंना वाक्यं । चौ

रोय रोय इम बोलै नारी । प्रीतम मोकूं मार कटारी ।
मोहि मन तुम अनंत ही जावों । करौं राज अपनें मन भावैं ।६६
तुम बिन मोय किशों शंशारा । तुम बिन शबही जगत उजारा ।
मार कटारी दाह मिटावों । पीछै तुम परभौमें जावों ।६७
में स्वामी चरनन की चेरी । याही बात मान ले मेरी ।
घर बैठां तुम करो विलाशा । गयें विदेश कहें की आशा ।६८
वाली वेश आपनी दोई । छोटौ बड़ौ नही तहां कोई ।
घर बैठां ही आनंद कीजै । विदेश जाय कहा सुषलीजै ।६६
अन धन लिछमी बहोत अपारा । गृह वैठे पूजों किरतारा ।
ऐं स्वामी विनती सुन लीजै । चेरी जानि मोय सुप दीजैं ।११०

लोरकसाह वाक्यं । दो

मैंनां घर बैठी रहौं निस दिन भजौ गोपाल ।
माश दिवश में आयहैं लावैं हीरा लाल ॥१०१

चौपई

हम तुम प्रान एक है दोऊ । तो मैं अंतर रती न कोउं ।
बैठे रहों चिंता नां कीजै । कृष्ण नांम नित हिरदै लीजै ॥१०२

मैंनां वाक्य । दोहा

जिनकौ प्रीतम विछुरैं सो क्यूं जीवन नार ।
पति आग्या मानैं नहीं दुरगति जन्म शंशार ॥३
पति बिन गति पावै नहीं पतिभरता शो नार ।
पति शेवा नांहीं करैं दुरगति जन्म संसार ॥४
चालन चालन तुम करो कैशें मोय कहाय ।
ध्रगह जन्म तिहि नार को पति सूं कहै शो जाय ॥५
शज्जन चलें तो चल बशौं रहौं तो रिदै शमाय ।
जीभ काटि नवखंड करूं जो कहूं मुष सुं सुजाह ॥६

में मुष शें कैसे कहूं तें प्रभु दूरें जाहु ।
ताहि नार कौं जनम द्रग (ध्रग) पति बिछुरें सुष पाहि ।७
मनछा बाचा करमना मैं न कहूं तुम जांहि ।
सिद्ध काज अपनौं करौं वेग दरश दयो आहि ।८

यत :

पंथी परदेशी हूंआ चालूं चाल करेय ।
पीउ परदेशें गमन तूय डब डब नेंण भरेय ।९
चलो चलाबो सिध करौं फलज्यों घहरी आश ।
वेग वलण मन कीजीयों इण मिंदर में वाश ।१०
शजन फल जौ फूल ज्यौं वड ज्यूं विशतर ज्यौ ।
माशे वरशे जो मिला तोई इंणारंगे रेंह ज्यौं ।११

मधूवाक्य श्रोता मालती । चौ

दइ आग्या पतिभरता नारी । लोरकसा पर दीप सिधारी ।
दोउ के नैन नीर भरि आए । पिउ बिछुरत विरहनि दुष पाए ।१२
लोरक सा आग्या लै चले । आगें शतइक महाजन मिले ।
सारथवाह शब मिले अपारा । उदम चलें सौंद्र के पारा ।१३
मेनां पति बिन गति नां पावें । रोय रोय दिन रात गमावै ।
नृत्य गीत चित की चतुराई । पिय विछुरें सबहीं विछुराई ।१४

शवैयो

ग्रहबो नभ मंडल हाथन तें अरु सेंहथ शीहन शें लरवो ।
करवो शिषी घोम महा अंग होमण षीजत नाग करां धरवौं ।
गिरबो गिर तुंग दुरगन तें अरू जाय शंग्राम षगें मरवौं ।
कवि यन्न कहै शबही सु भले पर एक बुरो पिय बीछुरबो ।।१५

दोहरो

पीय कारन पीरीं परी गये चाम लोहु षूट ।
षगरिप बाहन चढवहें (तोइ) वाकें भारन तुट ।।१६
बैठी चित वित अनसुषी षांन पांन तज काम ।
पिय विजोग तन में दुषी हमें भवंग वह वाम ।।१७
षांन पांन रश शेज सुष शबे विशारे नार ।
बैठी नित मंदिर रहै पीउ पीउ नाम शंभार ।।१८
कुंकुम काजर पानमुंष चीर सुगंध अहार ।
पति विजोग तैं शब तजें पतिव्रता वह नार ।।१९

चोपई

गीत नाद तन शवे बिसारयौ । दिन दिन रूपदेह तन जारयौ ।
नैना पर नर निरषें नहीं । तन शरूप पीउ परषें नहीं ।२०

अड़ गउ नेंम न इतनी कीनी । याहि देह लोरक कूं दीनी ।
मेरो अहै लोरक भरतार । दूजो कोय न लषूं शंशार ।।२१

दोहो

ए तन जारूं आपनों रूप रंग केहि काज ।
मो लेपैं सूनों शकल बिन लोरक इह राज ।।२२

सोरठो

नैनां देषूं नांहि लोरक बिन बीजों पुरष ।
बिरहानल उर मांहि झुर झुर तन पिंजर करूं ।।२१
इहतन राषूंराम सायधणश तन छंडि हूं ।
नेनां देषूं केम लोरक बिन बीजो पुरष ।।२४

चौपई

ऐशें शतषूं मेंना रहै । पर पूरुष कबहूं ना चहै ।
शील चित्त एशैं मन लीनो । जोबन तन लोरक कूं दीनों ।२५
बैठो मिंदर मांहि इकेली । और नाहिं कोई शंग शहेली ।
मेंनां कहूं सूंवात न कहै । एकांकी एशी विध रहैं ।२६

दोहो

शषी साथ षेलैं नहीं करैं न माया मोह ।
या विधि शें बेठी रहै पीउ विजोग अंदोह ।।२७

चौपी

नयर राय बड़ बषत नरेशा । गंग पार पूरब इह देसा ।
दल पायक कित लहूँ विचार । वाकौं जानें शब शंशार ।२८
ताकैं पंच पुत्र बलबीर । करैं राज गंगा कैं तीर ।
न्यायवंत श्री राम विचार । कछु पाप क्रम नहीं व्यौंहार ।२९
च्यार कुंअर राजनीत चालै । एक कुंवर पाप पग घालैं ।
कर अ (मर) जाइ काहूना शहैं । चढ़े शिकार शबे वन दहैं ।३०
एशें समैं भई इक बात । श्रोता सूनौं तजे व्याघात ।
नित प्रति कुंअर शिकारें जावैं । मेंना कूं देषण दिल ध्यावैं ।३१
मैंना मिंदर बैठी रहै । कुंअर शिकार षेलन तित जहैं ।
एक दिवस मैंना आवाश । बैठी देषे नगर विलाश ।३२
तैशे कुंअर देष वैं पायौं । शहज रूप मन में दरशायो ।
कुंअर दृष्टि मैंनां पें जाई । तन व्याकुल होइ मुरछा आई ।३३
कुअरहि के मन मैंनां मानी । घर की नार शबै बिशरानी ।
एशो मित्र न देखूं कोई । मैंना आनि मिलावै सोई ।३४
सषा एक कुंअर कू कहै । या मेंना शत शीलें रहै ।
याको कंथ गयों परदेशा । नारी शत्त न तजे नरेशा ।३५

यतः दोहा

साया मिण अरु सिह पल शरणागत शो डाह ।
शती पयोहर विप्रधन चढ़सी हाथ मूग्राह ।३६

चौपी

जो कुंअर मन अैसी होई । दूती एक बुलावों कोई ।
दूती बहुतक मंत्र बिचारै । जल कूंवह पावक कर जारै ।३७

कुंअर वाक्य

बोलै कुंअर सुनौ रे भाई । कहां रहै दूती लेव बुलाई ।
वेगै जाय बूझ शुध लेवौ । मोकूं षबर तुरत आय देवौ ।३८

दोहो

दूजी नगर में बहुत हें ऐसी नाहि न कोय ।
रतना मालिनि शार सी और न अैसी होयप ।३९

चौपी

कुंअर कहै तिहिं बेग बुलावौं । सवा लाष गहनों पहिरावौं ।
चल हेरू कर बेग पठावौ । रतना कूं इत तुरत नेरावौं ।४०
एशें कुंअरें बचन कहे तें । वंदें जन चले वले वले तें ।
एक काज इक ईश शिधाए । रतनां कूं तित ते रे ल्याए ।४१

दोहो

दूती आय कुंअर ढिग कुलटा करी सलाम ।
कहीं कुंअर मुष बेंग तुम शोय करूं में काम ।४२
सुरग मृत्य पाताल में जैशी नारी चाहि ।
तैशी मुख फुरमाइई आन मिलावूं ताहि ।४३

कुंअर वाक्य । चौपी

सुनि दूती तें बात हमारी । मोय मिलावौ मैनां नारी ।
जो तूं मैनां आनि मिलावै । तेरै मुष मागै सोई पावै ।४४

दूती वाक्य । सो

मैना किती यक बात सुरकन्या की नांहि कहि ।
जाहि न देषै गात ताहि मिलावूं आज ही ।४५
तेरी आग्या होय जो तों बश करीयें देव ।
जंत्र मंत्र की शबनिगें और दून के भेव ।४३

छंद पधरी

कहीयत चंद बसकरूं इंद । कहियत गगन आनूं मुकंद ।
कहीये अकाल वरषा करंत । वीराण मंत्र वरीयत अनंत ।४७

जल कर अगन्न जारू जलद । दर दह की पीर भागूं दरद ।
साय कहे कशं धूयतष भून । पावक विहून पकरंधू नून ।४८
बड़ विकट टुंक दादुर डमाक । पारद अमन्न पर करूं षाक ।
जल हुंत नाव थल मझ वहाउं । बिन पंप व्योम पंषीय उडाउं ।४९
मेले जुमंत्र मुष वसत मोय । के तीयक ऋतुत आषूं में तोय ।
ज्याकी न छांह झंषियत जिहांन । तिह वश करीय देहूं तो आन ।५०
तुम निश्शंक विकशें चित रहौ । ज्याकी जु चाह तिह ही तुम लहौ ।
कहीयत कविद दूती धीमंद । तुक पंच संच पधरिय छंद ।५१

दो०

इह बिधि दूत पनैन की वशत दें मो बात ।
केते गुन मुपतें कहूं तीहूं जगत विष्यात ।।५२
आभूषन शब पहर कै करले मालन साज ।
कपट रूप दूती चली कुंअर हूंत शम्राज ।।५३
जंत्र मंत्र मुष धार कैं अरु पौहुप की माल ।
मैनां को चित छलन की मोहन पैहर श्रृंगार ।।५४

चौपी

दूती कुटिल तहां चलि आई । मैना महल देप सुप पाई ।
देषि अटारी अति सुषकारी । शतवंती बैठी तिहां बारी ।।५५

दोहरों

दूती कुटिला मालनी समझै नहीं विचार ।
जेह सत राषै साइयां कौन छुटावन हार ।।५६
जिह अपना शत सूं रहै पतिब्रता धर नार ।
शव दूती पच पच मरों जिह राषे करतार ।।५७

चौपी

मालिन आय भौन मैं पैठी । मैंना जिहा सिघासन बैठी ।
चंप चंबेली चौंशर हार । दई भेद कर कर मनुहार ।।५८

दूती वाक्यं

इश कहै दूती मैंना नारी । तुम पिउ गमन कियौ कंह प्यारी ।

मैना वाक्य

कहै मालनी कहां घर तेरो । तूं कहा जानैं मिंदर मेरौं ।।५९

दूती वाक्य

तेरै पिता धाय मोय कीनी । में तोय चूची बालपनें दीनी ।
मेंहूं धाय तेरी सुन बाई । तोकूं आज मिलन में आई ।।६०

दोहो-सोरठो

मैंना झारे नीर मैंना कूं लई उर मालनी ।
प्रिय की उपजी पीर धाय माय सम कही सुकब ।।६१
दूती बोली कपट सूं मैंना जानै सत ।
कपट रूप चीनी नहीं छिन छिन दूनो चित ।।६२

दोहरो

मैंना बात सांच कर मानी । मालिन के बोलै पतियानी ।
तबही नावन बेग बोलाई । केशर अगर उवटनै लाई ।।६३
दूती बात कहै सुन प्यारी । मो सुष कौंन सुनौं मतवारी ।
तोय देष में परी लजाउं । ए दुष मैं अब कहे सुनाउं ।।६४

दोहरो

बदन जोत तेरी नहीं पीत बरन सब गात ।
धीर मलिन तोहि अंग पै यो दुष सह्यो न जात ।।६५

मैंना वाक्य । चौ० ।

मैंना कहै धाय सुन लीजै । और बात मां नांहि पतीजै ।
मनकी वेदन मनही जानै । परदुष और कहां पहिचानै ।।६६

श्लोक

पाप पुन्य मनोज्ञातं देही जानंत आपदा ।
गीतार्थकृष्ण जानंति माता जाणंति शो पिता ।।६७

चौपी

मैं अपनो तन पति कूं दीनो । पति के मन भाव सोई कीनो ।
मोकूं अब कछु नाहि सुहावै । निश बाशर तन पति कूं ध्यावै ।।६८

सोरठा

वशन चीर उर हार अंजन मंजन सेज सुष ।
ए शब तजै विवहार पिय विजोग तन में दुषी ।।६६
सालैं बोल शरीर तीषा तरगश तीर ज्यूं ।
आखैं आवैं नीर वात करंता वल्लहा ।।७०
जेता तरकश तीर मुलतांणी मुगला तणा ।
तेता दुष शरीर शहस्यूं पिण कै हसूं नहीं ।।७१

दोहो

करवतडी किरतार जो शिर दीजत माहरै ।
तोहूं जाणत सार वेदन विछोहा तणो ।।७२
वाशर पिउ बिन बोलियौ कटै न बैरण रात ।
मेरे उर अंतर सषी करवत आवत जात ।।७३

चौपी

पिय मेरौ गयौ सायर पार । वा संग गयौ सकल श्रृंगार ।
सुष संयोग कहौ किन कूं भावै । पीउ बिन बिरहौ कौन मिटावै ।।७४
बैरी करै शोय कीनौ । बारी वेश विछोहौ दीनौ ।
काजर रोली किन पर सारूं । बिन पिय बैठी योबन गारूं ।।७५

दोहरो

हियरा भीतर दव जलै धुआ न परगट होय ।
कै जिय जाणें आंपणौ कै जिय जाणै सोय ।।७६।।

दूती काव्य सोरठा

ताशौं कीजै नेह ज्यासूं बहुर निबाहियें ।
ज्याकौं किशौ सनेह त्रोडें काचा सूत ज्यूं ।।७७
राखै मन में आश निशदिन चातक स्वात की ।
वौंही मरत पियाश वाकें कछु भावै नहीं ।।७८
प्रीतम ज्याकौं नांम एक पलक ना बीछुरे ।
मैनां निपट अग्यान मैं तोसौं सांची कहौ ।।७९

चौपी

दूती बचन बहु हित उपजावे । बात कहें नैनां भरि आवै ।
तेरो दुष देषत हूं मैनां । सायर गंग बहत मो नैना ।८०
इह असाढ़ रितु बहुरि पधारा । नारि पीउ घर कौ ब्यौहारा ।
रहै विदेश विश्मय इह आवैं । तो अवगुन पति कछु मन लावे ।८१
जे घर रहै सो करै बिलासा । नारी पीय न छांड़ै पासा ।
इण रित दुष पावै सोइ नारी । ज्याकौं नहीं पती सुष कारी ।८२

दोहरा

जिण रित भाषर पल्लवें उमट आवै मेह ।
चिहूं दिस नीझरणा बहै तब पीय बिन दाझै देह ।८३

स०

आये जु मास असाढ़न मैं शषी कंत बिना अति ही दुष पावै ।
गाजै घटा वरशें शरशैं घन चात्रुक घातक बोल सुनावैं ।
कितहूं गरजै बरषै कितहूं बिरहानल अैसेही देह जरावैं ।
वाहि समै निश षारी लगै तन पीय बिना तृय नाहि सुहावै ।८४

दोहौ

घन मैं पौन झकोरतै जरि हैं कंचन देह ।
ऐसी रित में पिय बिना साधन चमक मरेह ।।८५
मैंना तू दुष आपनौ मोकूं कहौ सुनाय ।
जैसो रसियो चाहियै सो मैं देउ मंगाय ।।८६

मेनां वाक्य सो०

पुरस परायौ जेह मैं मन मै कैशें धरूं ।
नहि छंडिय शत एह मनष जनम फिर फिर नहीं ।।८७

दूती वाक्य सोरठो

इह तो जोवन जाहि मालन सूं मैनां कहै ।
मनुष जनम कौ लाह बंध टेक कैशै रहै ।।८८
यह रित जोबन लाडलौ अहृल गमावण हार ।
मालन मैनां सूं कहै पीय कौ विरह नेवार ।।८९

चौपी

दूत बचन मालिन मो कहई । मैंना धाय रही मुष चहई ।
तीखें नेंन शों रूखे बैना । बोली महाशती तब मैंना ।।९०

मैंना वाक्य चौ०

लाज काज मेरी तोहि आवै । अैशें बोल कैसे पति पावै ।
जल हौं तास नारि का हिया । एकहि छाड़ि दूसरा किया ।८१
अपने पिय सों रंग रस कीजै । वाके संग सदा रस पीजै ।
और पुरुस सों करै सनेहा । जलहौं ताहि नारि की देहा ।९२

दो०

मेरे पति की सरभरि कौन करै संसार ।
एक छांड़ि दूजो रटै ध्रगह जनम तिहि नार ।।९३

दूती वाक्य दो०

नारि अकेजी सेज सैं श्रावण बरषै मेह ।
तिण रित साधन पिउ बिना बैठी कहा करेय ।।९४
श्रावन घन पावस सरस बनी बूंद विष बेल ।
(क्यूं) जीयै बिन कामनी लगी बिरह कीं शेल ।।९५

चंद्रायणौं

श्रावन बरषैं मेंह नदी जल षल हलै ।
गाज रहें गेंणाक दामनीं भल हलै ।
करत मोर झिंगोर पीउ पीउ पपीयरा ।
परि हां तादिन पिय बिन तीय तलफै जीयरा ।।९६

दोहा

चहुंदिस झर निरझर वहें सषी सुषेलत तीज ।
सायधण पिया बिन एकली सही मरे सी षीज ।।९७

चौपी

श्रावन मैना पीउ विजोगैं । अशन पान कैशौं आरोगैं ।
कंथ सुहागिन षेलत बारी । गावैं गीत उठैं झनकारी ।९८
हरिया भूमि कसूभल सारी । तीज ष्याल षेलत है प्यारी ।
पति न होय तिह कैसे भावै । झुरि झुरि नारी प्रान गमावै ।९९

दोहो

जोबन जात न जानियै गये बेर पछिताहि ।
आन मिलाऊँ तो भमर लै दूनो जग लाहि ।।१००

सोरठा

पर नर प्रेम करेह अमृत रस पीयों जिनां ।
सो रस पीउ षरेह निज पिउशें नहि ऊपजै ।।१०१

चंद्रायणो

चंदण कुटकी एक कैं भारा लाकड़ी ।
एकउ पाको अंब कैं बहुरी काकड़ी ।।
पाडल के दश फूल चंपै की पांषणी ।
परिहां परण्या की दशरात छैल की इक घड़ी ।१०२

सोरठा

जासे कीजे नेह तासैं दोउ युग थिर रहै ।
जाशौं किसौ सनेह रात बसै दिन उड़ चलै ।१०३

मैनाँ वाक्य चौ०

सुन मालन सावन तिन भावै । ज्या कौ कंथ भौन में आवै ।
बिन पीतम श्रावन का करि है । तेरी बातें काज न शरि हैं ।१०४
कै तो पीउ लोरक ग्रह आवै । नहिं तर मैनां प्रांन गमावै ।
तू पापिन मोय पाप सुनावै । इन बातन कैसे पतियावै ।।१०५
ऐसी बात ताहि सूं कीजै । जासैं तेरो जीय पतीजै ।
मेरै मन इह बात न होई । बात बिचारौं रतना सोई ।।१०६

सोरठों । दूती वाक्य

भादौं गहिर गंभीर चिहुंदिम बादल सघन घन ।
ए दिन वहोत अधीर सायधन सांई बाहिरौ ।।१०७

दोहा

भादौं आयौ रौश भर जारत मदन शरीर ।
कबहू मिलेंगे आय तोय पीय मिटावन पीर ।।१०८

सवैया

भाद्रव मास अकेली पिया बिन काम व्यथा दिन कैशे भरैगी ।
आवेंगे बादल उमड़ कै रट कै पपीया तब कैसे करैगी ।
चहूं ओर तें मोर झिगोर करै छत्र दामनी आयकै जीय हरैगी ।
यातैं सुनौं रू मनौ बिनती मोय मेरें कह्यौं चित चित टरैगी ।।१०९

दोहौ

बरसत घन दामिन षिवत कै कै चातक बैन ।
मेंना इन रित एकलैं परी दुहेली रैन ।।११०

मैना वाक्य ।दोहा

सूषें शेज्या की कही जाहि कंत ग्रह होय ।
मो वैरी हू श्रो वल्लहां विवेकन बूझें कोय ।।१११

दूती वाक्य ।दोहौ

भादौं गहिरौ घमघमैं रैन अंधारी होय ।
सेज अकेली सुंदरी ए दुख लागै मोय ।।११२

भादौं रित है सुहामणी पिय बिन यूंही जाय ।
मनुष जनम फिर फिर नहीं गहीली क्यूं पिछताय ।।११३

चौपी

भादौं मैनां मेह झकोरै । बोलैं कोकिल पिक चहुं ओर ।
दादुर शोर कहूकत मोरा । सूनि सेज लष उर पटही तेरा ।।११४

दोहो

रैन अंधेरी बीज अति घरे नांहि तो पीव ।
ले लैं रस जग रीत कौं क्यूं तरसावै जीव ।।११५

चौपई

अंध कूप ज्यों निशा अंधेरी । झुर झुर मरहि सुन बात मेरी ।
जोवन एह अकाज गमावै । गए बेर बहुरि पछितावै ।११६

दोहो

ए जोवन यूंही जहै लाज न उपजै तोय ।
तोय मिलाऊं शजनां बोल बचन दै मोय ।।११७
इह जोवन वहि जायशी कारज शरै न कोय ।
इह जोबन कै ऊतरचे [फिर] बात न बूझैं कोय ।।११८
सुन मैनां जोवन गए फिरि पछितावो होय ।
मधु सूं लागी मक्षिका हाथ घशंती जोय ।।११९
तन धन जोवन कारिमों औरूं गरब गुमांन ।
सदा काल इह थिर नहीं मेरो कहियो मांन ।।१२०
मरणा जाणां हुक्क है वार तार रहि जाय ।
अब रित मांणौ बावरी बहुरि कहूं समझाय ।।१२१

चौपी

धन जोवन की कैशी आसा । सुष बिलसौ करौ भोग बिलासा ।
मांन बात नां होय अग्यानी । तोहि मिलाऊं भमर शयानी ।।१२२

मैनां वाक्य । दोहो ।

काजर कैसी कूंपली धाय पाप की गेह ।
दरशन लोरक शाहरो उत्तर मेनां देह ।।१२३

सोरठों । कबीरुवाच ।

दूती निपट अयान मेंनां कूं इह विध कह्यौ ।
ज्यूं अरजुन के बान मेंनां चित चूकै नहीं ।।१२४

दूती बाक्य । चौपी ।

सुन मैना आसू रित आई । दशरावै दिश शरद सुहाई ।
जंत्र ताल भेर गृह गाजै । घर घर गीत गान ह्वी राजै ।।१२५

दोहो

लाल बिना आशोज लष तन तृय व्याकुल थाय ।
चंपक चंदन चांदनी नागन ह्वै कै षाय ।।१२६

चंद्रायणां

आये मांस आसोज पीय बिन तन दहैं ।
उजल रैंन तन मन अधिक उलट वहै ।।
धरैं न कांमन धीर पीर पल पल लहैं ।
परिहां मैंनां सुन कह्यौ मान कै दूती हां कहैं ।।१२७

दो०

सुरत हुवै जिह पुरश की तिह मोय कहो निदांन ।
जीबन जाशी बावरी कहयौं हमारौ मान ।।१२८

मैना वाक्य । सो० ।

पेम पियारौ शोय जिह मे चबरी कर ग्रह्यौं ।
और न धारूं कोय मालिन शौं मैना कहैं ।।१२९

चोपी

सुनहो धाय शरद रित आई । मोकूं तेरी बात न भाई ।
काजल टीको कैसे शारूं । भो लेषै शंशार उजारूं ।।१३०
भोग भगति निज पति सूं कीजै । दूजा कै मुख धूरि भरीजै ।
एशैं कौन कलंक लगावै । फेरि कहां जग मुख दिषरावै ।।१३१

यत: दो०

शज्जनपांणी अपणी नाले राज्यूं रख ।
ऊतरी यां चढ़शी नही जौ परचेशी लष ।।१३२

सोरठौं

बाधा जाम्रो लाष शाख मजाम्रो शज्जना ।
सापो म्रावैं लाष लाषें साषन शंपजैं ।।१३३

चो०

दरशै चंद चकोर सुष पावैं । देष भानु कौं वहु दुख पावै ।
मो पिउ लोरक में तश प्यारी । म्रोर न देषूं इण शंशारी ।।१३४

दो०

ए तन लोरक शाह बिन जार करूं तन छार ।
प्रीत जरों इन बात की ह्वै हाशी शंशार ।।१३५

सोरठो

ऐशो कौंन पलीत जिह मेरे ढिग म्रावही ।
कोई कहौ नचित मन दिढ़ राषूं म्रापनो ।।१३६
म्रौरूं किशौं शनेह पिय बिन सुष नहि जगत में ।
दहूं म्रगन इह जो तन परशें को म्रवर ।।१३७

दूती वाक्य । दो ।

में जानी तो जीय की करै तें मोसूं लाज ।
डार लाज बिलशौं सुषं लाज शरै नहिं काज ।।१३८

चौपी

जोबन धन मध्याना जाई । छिन मां जाय वार नां लाई ।
काती मास जित परब दिवारी । मरिहैं कंत बिन बिरहनि नारी ।।१३९
घर घर दियरा जरहैं बाती । तूं तौं भई मंद गति माती ।
तुम पिय छांड गयौ परदेशा । म्रली सोय शाजन कहौं कैंशा ।।१४०

सवैयौ

कातिक मास बिना सुष वाश वहै उरमें नितही नित काती ।
सुंदर बाल शबैं मिल म्रावत गावत गीत महा मद मांती ।।
दीपक शीत न देह जरै दृग नीर झरै से दहैं नित छाती ।
सुनरी तें श्याम कहयो मो मांन भरेंगी महा दुष में दिन राती ।।४१

दोहौ

काती दहै छाती कठिन ज्यूं घन दहैं जवाश ।
तिण रित प्यारी तोय कूं कहा सुष कहौं म्रवाश ।।४२

षायजैं पीयजैं विलशजैं कीजें रंग अपार ।
जोवन थें सुष लीजीइं मान बचन निरधार ।।४३

मैंनां वाक्यं । चौपी ।

कहा करूं काती परब दिवारी । मो लेषैं सूनों शंशारी ।
परब दिवस मोय नाहि सुहावै । वीय आया तन में सुष पावैं ।।४४
मेरो जीय हें सायर पारी । बिन जिय देह मटी इतडारी ।
माटी भोगव माटी षाई । आ माटी सब जगत सुहाई ।।४५
माटी नर अरु माटी नारी । किन कौ कंत कपट वदवारी ।
सो वन फूलें ज्यौं माटी फूली । माटीं देषवौं माटी भूली ।।१४६
माटी ऊपर दृष्ट बुद मेलै । परमहंश माटी में षेलै ।
माटी बिरला जाने कोई । हंस षेल फिर माटी होई ।।४७
रित मांणूं लोरक घर आवें । नहीं तौ मैंनां प्रांन गमावै ।
इह जम वारें इह पन मेरौ । दूती लह्यौ मैं लच्छन तेरौ ।।४८

सोरठा

देह विटारूं नांहि औरूं जुग अपजश बढ़ै ।
दृग पिंजर हैं तांहि तेरी गल्ल धीजूं नहीं ।।१४८

दूती वाक्य । दोहा ।

अधन अनंत घन होय दिन घटहैं रजनीं बढ़ैं ।
प्रीत करत शब कोय दीशत हौ तुम तो नयौ ।।१४९
आवहि मृगशिर माश शीत परेंगो धरन पर ।
तिण रित पिय नहीं पाश कौन हवाल तेरों कहौं ।।१५०

सवैयो

आवहें मारग माश शषी सुन भौन भुजंग शें भारी लगैंगो ।
भूषन दूषन शाल दुसाल हूं शीत चिहूं दिश हूंत पगैंगो ।।
ताहि शमैं तन मांझ तपें विरहानल दिश चिहूंत दगैंगो ।
शीत थटंत हेमंत बधंत तबें दुष कौंन तो आय कटेंगो ।१५१

दोहो

नृग शिर बिन प्रीतम शषी अंग उठत अत पीर ।
शीत चमंकत तन तपत शरद दहत तन हीर ।१५२

मेनां वाक्य । दूहरों

कुशती कुटिल कुभारज्या तहिं दुष मृगशिर माश ।
मोतन दाग न लागहै पच पच मरौ पचाश ।१५३

चौपी

जो मालन सत अपनो हारूं । कहा अमृत शो जीव विटारूं ।
ऐशो बुधि कबहूं ना कीजै । पाप पुन्य मन मांह गनीजै ।१५४

दो०

पाप बचन तेरे प्रमुष सुनैं शएशें शोय ।
होय कुजश इण बात में सुरग हूंत पत षोय ।१५५

यत:

गृही टेक नहि छंडियें जीह चंच जल जाय ।
मीठें कांहिं अंगार जू तांहि चकोर चुगाय ।१५६
साहिब बिन कहा प्रेम सुष सुंदर किशो सनेह ।
इहें बात मु तलब नहीं जारूं कारिज एह ।१५७

दूती वाक्यं । चोपी ।

मैनां मास पोस रित आई । झुर झुर कंप तुसार जनाई ।
बाढ़ै सौड ठंढ नहि जावै । जो लौं पुरश न कंठे लावै ।।१५८

दोहा

नवल नेह तन बावरी विलसे सुष संसार ।
अब तोय रशीउं मेलवूं मान वचन इक वार ।।१५९
पोस इकेली क्यूं रहै सुन मैंनां इह बात ।
हेम जमत तिह रित शमैं बिरह शंतापें गात ।।१६०
हेम टूंक हूं ते पवन चलिहैं विरही दुष देंन ।
बिन पीय तीय हर शदन गें दहें एकेली रैंन ।।१६१
पोश रोश कर अति पवन बाजैं शीतल वाय ।
तिण रित विरहिनि तृयन कूं लगिहैं कटारी घाव ।।१६२

सवैयो

पोश में पौन पगें धरणी पर प्रीय बिना प्रीय प्रेम दहैंगे ।
भूषन चीर भयौ समसान शें भीतर वीच करौंत वहैगो ।

पीवही पीव पुकार अहो निश थीव कहां सुष आय लहैगो ।
माननी मान कह्यो में कहूं तोय पीछैं तुनें पिछतावों रहैगो ।६३

दो०

शीत शरश जाडो जमत मदन धरत मन रोश ।
तरश हौं तब सु कमाल तृय जब पीय बिन पीरहें पोश ।६४

मैंना वाक्यं । चौपई ।

पोश रोश मो पें कहा करिहै । डिगु नाहे मेरौं मन थिरहैं ।
शीत व्यथा पिय कारण शहूं । और पुरश मन में नहिं लहूं ।६५
सुन हो रतना मालिनि बाई । तोय भुराई भूलि न जाई ।
पोश माश मोकूं सुष कैशा । मेरौ कंथ गयौ परदेसा ।६६
भोग भुगत तेरी नहिं जाऊं । सीत दाह शें नांहि डराऊं ।
पोश माश क्या करशी मेरौ । दूत लछन में देखूं तेरौ ।६७

दूती वाक्य । चौ०

मैनां माह माश अति ठारी । परत दाह जिहं अकेली नारी ।
वानर भूजा ताप बनावै । तोय एकाकी कैशें भावै ।६८
पीय विदेश गयों निधि पारें । आवागमण तिह नांह अवारें ।
बिन स्वारथ कत बैठी अबै । जोबन गयों न पावैं कबौं ।६९

दोहो

विरह वियापैं जिह शमैं अंग उठें जब ताप ।
पंच भूत करैं तृपति नहिं सो तेरैं शिर पाप ।।७०
पंच भूत आशा मुखी ज्याहिं न पूरैं आश ।
तिह कूं नही गत पावही फेर नरग में बास ।।७१
एशे बडे पुराण में कह्यौ बड़े मुनि राह ।
पोश रोश ऊतरघो अबैं माश बयठो माह ।।७२

तथा

नैंन झुरहिं पिय दरश बिन सुन रे शषी सयान ।
तन झरही पीय सरस तैं पल पल दही परान ।।७३

चंद्रायणों

आयो माह ज माश ठार अति परत है ।
बिरही कंचन देह काम तन दहत हैं ।

बानौं काम भुयंग अंग जब डहत है ।
परिहां तिणरित एकली वांम धीरनां धरत हैं ।७४

दोहौ

एशी कबहूं न कीजिए एकंगी की पीर ।
प्रीत एकंगी माछली छिन छिन तजैं शरीर ।।७५

मैनां वाक्यं दो०

दूती एशी कहा कही प्रीत एकंगी नांहि ।
मो पीय रंग मंजीठ हैं तें बूझावत कांहि । ७६

दूती वाक्य सोरठों

जोबन गुहिर गहीर मेंनां सूं दूती कहै ।
जा दिन पीय नहीं तीर तादिन बोलां बिलव हैं ।।७७

चौपी

सुन मैंना इह फागुन आयौ । घर घर तरुणी षेल मचायौ ।
प्रीतम सूं सुष लहैं सब कोई । इंणरित नार न एकली कोई ।।७८

सवैयो

फागुन षेलत फाग शषी मिल गावत नृत्य बजावत तारी ।
चंग मृदंग उपंग लीयें संग रंग गुलालरू देक्त वारी ।
दंपति ले पिचकारी सुं डारत गावत ही फगुआंन सुढारी ।
नीर अबीर शरीर कूं बेधत आय मिलैं कब पीउ सों प्यारी ।।७९

दोहा

बंधे पाशौं विरह कौं फागुन डारयौ फंद ।
तेंहि शमैं अवला तूयन कों कौन कटै दुष दंद ।।८०

चौ०

फागुन मदन मांननी होई । शीत चौगुनो कहत शे कोई ।
जमे हेम गलि है जब सोई । पत बिन इन रित अति दुख होई ।८१
बिरह अंग लागत है मोही । भोग भुगत विनती दुष होई ।
इह रित तरुणी सेज सिधारै । बिरह दाह तबही ह्वैं न्यारै ।८२

सोरठौं

नृत्य षेल अरु तांन प्रेम अगनि में अगनि शे ।
कछु सुहात ही नांहि मैनां सूं मालिन कहै ।।८३

मैंनां वाक्य । सोरठों

एह झूठौ संसार झूठौ नेह न कीजिए ।
मालिनि दूत विचार शिर जातें शत राषिए ॥८३

दूती वाक्य । दो

मेंनां मन मैं सोचकर हियौ राष समझाय ।
ए दिन अहि लैं जात हैं (तोय) रशियो देहुं मिलाय ॥८४

मेनां वाक्य । चौपी

सुन दूती कहा करैं झषोरौ । मेनां तृय लोरक पिय मेरौ ।
कूं कूं काजर नौशर हार । बिन प्रीतम कहा किसौ श्रृंगार ॥८५
मो लेषे बिन पिय अंघियारौ । सेज किशौ सुष विदेशी प्यारौ ।
अब में कहूं सोय सुन लीजै । भाग ताकी गैल न कीजै ।८६

सोरठौं

मो मन एह सुभाउ और न देखूं नैन सों ।
लोरक सा गृह द्वार ता दिन फागुन पेन सूं ॥८७

दूती वाक्य

सायधन चढ़ि है बसंत बिरह बढै तब चौगुनो ।
कामिन जब बिन कंथ जीवत शें मरवों भलौं ॥८८

दो

प्रफुलित पुहप गुलाब के गूंजत भृंगी आय ।
वन वन फल फूलेन विन चित वसंत वन छाय ॥८९

सवैयों

वाजत पौंन मृदु अवनी तल चंपक लाल गुलाल सुनाये ।
तापर भौंर गुंजार अलापत पंचम रागु पराग रिझायें ।
अंब कदंब मोरें जित कोकिल बोलत बोल सबें सुष पायैं ।
ताहि शमें विरही जिय जारत बा रित नारि अती दुष दायैं ।९०

दोहरो

पात परत शब द्रुमन के सो लूट बिरह जिय लेत ।
भूल हें तृय व्याकुल भये तब चित चेत अचेत ॥९१

चौपी

चैत चातुरी चतुर मिलाऊं । जो तेरी हूं निहचों पांऊ ।
कुल कांमनी कौं इह सुनाऊं । मैनां बार बार कहि पाऊं ।
रैंन शर्मं सुष सेज अलूणी । बिना छैल ललना छिब ऊणी ।
इह चलि जाय बसंत रित प्यारी । तुंम सूं बचन कहत मैं हारी ।९३
एकहि बात सुणौं तें हमारी । बिना कंत नहीं सोभा प्यारी ।
तोय मिलाऊं सुंदर कंता । तें दिलगीर सो मो मनचिंता ।।९४

दोहों

गैंहली मान गुमान तज गाढ़ मकर अति गात ।
पीछैं तूं पिछतायगी ज्यूं विप्र नकुल की बात ।।९५

श्लोक:

अपरीक्षतं न कर्त्तव्यं करतव्यं सुपरीक्षितं ।
पश्चाद्भवति शंतापं ब्राह्मणी नकुलं जथा ।।९६

मेनां वाक्य । चौ

कैसे पिछतावत कहो रतनां । विप्र नकुल कैसें हुई कथनां ।
किह विधि उन शंताप हि धारयो । अणन परखें कहा काज विगारयौ ।९७

दोहा

दूती कहै मैना सुनौं विप्र एक अनपूत ।
पुत्र हेत बहविध किए सेवे केई अवधूत ।।९८
तिह गृह सुंदर गेहनी फल बिन निस दिन दीन ।
क्षण क्षण डारत नैंन जल तलफत जल बिन मीन ।।९९
अन धन लछी गेह अति नांहि एक शंतान ।
चितातुर चित में हुए इक दिन पुंहतौ रान ।।
आगें इक दीठौ नकुल थांन वियोगी दीन ।
पकर ले आयो गृहन पैं पयहु करायो पीन ।२००
विप्र कहै निज तृयन कूं तुम षेलन कैं हेत ।
मैं आन्यो जंगल हुंते इह तेरैं सुष देत ।।२०१
मन तें सोच मिटाइए इहें दईव के षेल ।
वैठी नित गोपाल भज कर इनशें नित केल ।।२०२

चौपी

अब निशदिन ब्राह्मनि ताहि षिलावै । मुकन मुकन कहि कैं बतलावै ।

ऐशे भये दिवस तहां केतैं । पुत्र आश प्रभु पूरी जेतैं ।
नौल किहे सुभ मुहूरत आयौं । तिन आवत सुत जनमही पायौ ।२०३
मंगला चार बढ़े गृहद्वारैं । बालक कूं तृय गोद षिलारैं ।
बालक से तौं हीचतपालक । मुह डोर ले षिलवै मुकनक ।२०५
ऐशे मुकन वाव दौं बढ़ैं । बालक निश दिन दौनौं चढैं ।
ब्राह्मनी गृह शब काज सुधारैं । मुकन नौल तिह तनुज षिलारैं ।२०६
ऐसे करत बरस इक बीते । इक दिन तिह तृय गई जल हेतैं ।
मुकन काज षाटक की डोरी । सूंपी कहि जल ल्यांउ बहोरी ।२०७
ठाढ़ौ मुकन बाल हुलरावै । तैंशे इक सप शिशु पर आवै ।
वैशें मुकन उतरतौं देय्यौं । बंधव डशहीं इहु कर लेष्यों ।२०८
रपट नौल अप के दिश धायों । रपट झपट अप भूं अभरायौ ।
मारत अप रुधिर अंग लग्यौ । बहुरूं बंधु षिलावन लग्यौ ।२०९
एशै ब्राह्मनी जल भर ल्याई । मुकन मुकन कहि फाट षुलाई ।
षोलत फाट मुकन अंग देष्यौ । तृय मूढ़ शिशु मारयौ लेष्यौ ।२१०
फिट रे निलज नौल कहा कीनौ । मो बालक कूं तें मृत दीनौ ।
इह कहि कुंभ शीश तें पटक्यौ । परयौ नकुल शिरि जय ले छिटक्यौ ।२११
मुकन अप उपगारह कीनौं । तृया मूढ़ नोंलक मृत दीनौ ।
अशें ब्राह्मनि निरष्यौ आयें । बालक शे तों पेल षिलायें ।२१२
मूओं अप धरन पें परयौ । मुकनुपगारी म्हें कहा करयौ ।
हाय हाय करमन में रोवै । एशें बालक गोदैं लेवें ।२१३
बालक कूं तृय चूंची देहै । मुकन मृत्य रोती यूं कहैं ।
एशें मृत्य सुन्यौ तिहि बाल (तैंशें)बाल हि मृत्य करयौ वह काल ।२१४
अैशें विप्र गेह में आयौ । मृतक दुहूं देषैं दुष पायौ ।
ब्राह्मनी रोवत चिंता तुरी । मूढ़ बिचार करी मत बुरी ।२१५
हाय हाय कर करें शंताप । बालक मृत्यु रु मुकन क पाप ।
तेशें नैंनां तोय परैगो । चिंता जाल संताप मचैगो ।२१६

दोह्रो

मरणौं शब शिर ऊपरैं राव रंक बड़ बीर ।
षाणां पीणां अमर है विलशण सुष शरीर ।।२१७
चैंत वशंत सु पेंमरश मैंनां कर रश भोग ।
जाती दीशत शब प्रथी कह्यो करैं सब लोग ।।२१८

मैंनां वाक्यं । चौपी

जनमांतर चित नांहि डुलाऊं । बार बार कहा कहि समझाऊ ।
ऐसी बात करैं जो प्यारी । आप हांन रु कुल कूं गारी ।।२१९

दोहा

रित अनरित समझूं न कुछ नहि वसंत समुझाय ।
रित कों रश हुइ मोहि कूं जब लोरक गृह आय ।।२२०

दूती वाक्य । सोरठा

ए दिन यूंही जाय सायधन जोबन पाहुंनौ ।
फिर कैं बहुर न पाय पीछैं पछितावौ परै ।।२२१

दो०

वैशाषैं वन गहर छिब अंब लूंब लहिकाय ।
इह रित तरुनी एकली मूरष ह्वै पछिताय ।।२२२

स०

माधव जुमाश में फूल फल छायौ बन दौरयो वशीठ दाष अरु सीतल सुवाश हूं ।
मोरें बनराय मृदु अंब लहकाय ताय बेठे कीर कोकिल सो बोलत हुलाश हूं ।
मोरही भिंगोर सौंर केलहु करत औंर चंदन चरच प्यारी मुदित अवाश हूं ।
एशें पिय विनह प्यारी न्यारी अटारी मांझ मरिहें तलफ जीय उपजै उशाश हूं ।२२३

सोरठों

जल बिन तलफत माछली अति मन में अभिलाष ।
तेरौं तन कैशें धीयत विलम वालम वैशाख ।।२२४

दोहा

मनमथ कौंसुप लै शषी बनी जु बारी वेह ।
मान वचन मेरो मनें दहैं काय दुष देह ।।२२५

चौपई

मैंनां माश चढ्यो वैशाखा । मदन जार करै तन षाषा ।
बिरह उमंग कै डांग बजावैं । बिना पुरश दिन यूंही गमावै ।।१२६
मदन पोष करते सुष पावै । कांमदेव कूं क्यूं ललचावै ।
जीवत मुष संशारैं आई । मैना कहो तो देउं मिलाई ।।२२७

सोरठों

ए जोवन यूंही जाय मैंनां सूं हसकै कहै ।
प्रीत करै नहि कोय टेक बंध कैशैं करैं ।।२२८

चोपी

मैंना तैं पिय कारन झुरिहे । ए जोवन तन धूरें मिलिहें ।
फिर नहि जोवन आवै बारा । मूरष बचन तें मान हमारा ।

मैंना वाक्यं । चौपी

पति बिन बीजौं जो मन ल्यावैं । तों जैशी करैं शो आगें पावै ।
थोरे सुष कहा अपजश ल्याऊं । इन बातें कैशें पति पाऊं ।।२३०
मीठौ नांहि रुषानौं ऐंठौं । एशी वात करै शो धीठौ ।
रश अनरश की एक न बूझै । आंधी भई कछु रिदैं न सूझैं ।।२३१

दूती वाक्यं । सोरठों

अगन झाल अशराल बिरला कोई थंभसी ।
मेंनां व्रीह (विरह) विकराल जेठ माश किम राषसी ।।२३२
जेठ मास जुग प्रीत मैना पीउ बिन किम रहै ।
रस की न जानैं रीत जोवन जल बिल कै वहैं ।।२३३
पाके अंब रशाल जल शर घटि हैं जेठ में ।
तादिन तरुनी शाल उपजैं रित ग्रीपम शमैं ।।२३४

स०

पाके रशाल अंब लुंबही लहकलीनें पानी शर घटे पतु ग्रीपम रित कहीयें ।
करत हैं वार पौंन ढारत शहेली संग पीकैं उछंग स्यांमा बैठे सुषलहीयैं ।
तातौ जब सूर अकाश गये लूआंझिल झपट लेय शीतल शमीर पांन पीयैं सुख पहीयैं ।
ताही रित मांझि दैया तूही नहि बाल कौन तादिन तौं पीय शंग पेंम सुष चहीयैं ।२३५

दो०

जरहिं नेंन पिय दरश बिन होयही हियों हिरांन ।
झपटे ही लू झाल जब पल पल जरहि परांन ।।२३६
जेठ मास जुगती छयल करौ प्रीत समझाय ।
नर बिन तरुणी एकलां रैंन दुहेली जाय ।।२३७

मैंनां वाक्यं । चंद्रायणों

जेठ माश कै ताप मोय कह जारहै ।
कुशती कुटिला तोय नहीं अतबार है ।
मोकूं कैसो दुष सुने तू मालनी ।
परिहां पिय बिन कैशो सुष नाहि पतहारनी ।।२३८

दूती वाक्य । चौपी

शरश कंठ कोमल कहु कत ही । रित वशंत मल्लार गावत ही ।
सब तृय कंथ गलैं लपटावें । मो तेरो दुष सह्यो न जावैं ।२३६

सो०

सुनी न मेरी सीष जेठ माश यौंहीं गयौ ।
भर कें लांबी स्रीष जोबन यौंबहि जायसी ।२४०

दो०

जेठ गयौ जुग रीत कौ मैनां ग्रहै न बोल ।
इण रित जोबन लाडलो साजन लीजै मोल ।।२४१

चौपी

बारहि माश कहे शमुझाई । तोई मैनां नांहि रिझाई ।
बूझिवान रु होय श्रयाने । ताकूं बुझवें कहा शयाने ।२४२

मैनां वाक्य । चौपी

सुन दूती इक बात सुनांऊ । एक बात तोय भलो मनांऊ ।
मेरो दिल तौ जब सुष पावैं । जो जाय तें लोरक गृह ल्यावैं ।२४३
एशैं बैन कहत नां धीजूं । लोरक बिन मैं नांहि पतीजूं ।
एशैं कहे न पतीजै कोई । सुरग हूंत पति लहै न कोई ।२४४

दो०

अपजस कबहुं न बाढ़ई अपजश तें पत जाइ ।
पत हूं ते अपजस मिटै जश तें सुजस लहाय ।।२४५
सुन मालन मैनां कहै सौदागर की नार ।
तनक ग्यांन मनमैं धरै राष्यौ सत करतार ।।२४६

प्रसंग सौदागर कौं । मैनां वाक्यं श्रोता दूतिका ।

दूती वाक्यं । दोहा ।

कहौं मैनां कैशें भई मोय कहौं विशतार ।
किह बिध उन शत राखियौ सौदागर की नार ।।२४७

मैनां वाक्यं । चौपी ।

तें तौ दूती लोभ शयानी । या तौं बात सुनैं कोई ग्यांनी ।
जो मन धरै तौ तोहि सुनाऊं । तजौं दंभ शतही मैं गांऊ ।२४८

नगर उजेंन वशै अधिकारी । वशहैं वनज बड़ौ सुषकारी ।
कथा अपार पार नां पाऊं । कहियै तौं तोकूं कहि पाऊं ।२४९

दो०

सौदागर इक तहां वशै नारी सूं अति नेह ।
घरी पलक बिछुरै नहीं दोनु एकही देह ।।२५०

चौपी

उन दौनूं विच नेह अपारा । एक पलक तजि होय न न्यारा ।
सौदागर मन ऐसी आई । पंप भरन कूं मनछा धाई ।५१
नारी सूं पूछै शतभेउ । चलूं विदेश जो आग्या देउ ।
नारी कहैं तुम बिना शनेहा । मरिहै तलफ हमारी देहा ।५२
तरुन वेश अरु प्रीत पहेली । बिन साजन किम रहूं अकेली ।
पति बिन नार बहू दुप पावै । तरूणी वय कहौ केम रहावें ।५३

सौदागरवाक्य । चौपी

पति आग्या जिह मानैं नारी । धन धन होइजश जगत मझारी ।
जौ काया अपने वश रहै । तोलौं भले शबे जुग कहैं ।५४
एक बचन मेरो निरबहै । तब तैं एशौ इक पण वहे ।
जादिन किरहो तोय संतावै । वहौंत भांत काया अकुलावै ।५५
तादिन कीजै तुम इक काम । चढ़ियो महल आपणैं धाम ।
झाडषंड दूरें जिह जावै । तिह ऊपर तें मन ललचावै ।५६

दोहों

निरषहि नैनें आपही साई पुरस बोलाय ।
विरह व्यथां जब ऊलटे तब तिह पर मन ल्याय ।५७

चौपी

एह बात कांने सुंण लीजै । शीष देहुमो ढील न कीजें ।
बैठे मिंदर हरि गुन गावौं । सत शील हिरदै मन ल्यावौं ।५८

दोहौं

शषी शहेली शंघ अब बैठ रहौं गृह द्वार ।
हमकूं आग्या दीजई चलैं देश षंधार ।५९
आग्या ले कैं गृहन की चले सौंदागर दूर ।
साथ अबे पंथी हुआ भरे षेप भरपूर ।६०

चौपी

सौदागर परदेश शिधारे । तृया रही शीश भुंइ मारे ।
बिछुरत कंत तृया दुष पायो । रोय रोय जोबन धूर मिलायो ।६१

दो०

पीउ ं वियोग तन दीनता सब समभावैं नार ।
राग रंग क्यूं करत नां तुं किम हुइं गिमार ।६२
शषी मनावैं नेह से बोलो रश की बात ।
जल ल्याऊं भाजन भरी धोंय पषालो गात ।६२
षावंद आवेंगे शबैं करीइं नाहि वियोग ।
वहिलौं फिर लहिशीवले साहिब सुष संजोग ।६४

चौपी

सब बिजोग दुष दूर गमाश्रो । ल्याऊं ऊबट नेम न ल्याश्रो ।
जल सुगंध दाशी ले आई । सौंदागरणी कुं नबराई ।६५
कर मंजन आभूषन दीनौ । चोर सुगंध बीच चित दीनौ ।
दृग अंजन बीरी मुष लाई । हार कंचुकी पहिर सुहाई ।६६

दो०

सीस फूल विंदी दई फूल वहूली माल ।
अब शृंगार उर हार धर हिय सुध आयौं लाल ।६७
लालन की ललनानिकूं अधिकी उपजी पीर ।
दाह बिरह दाहन लग्यौ छिन छिन दहत शरीर ।६८
छकी मदन की छाक तें मन रापत समझाय ।
जकरी विरह जंजीर तें छिन भर नांहि रहाय ।६९

चौपी

बिरह भुयंग नारी तन छायो । एशौं माश असाढ़ अघायौं ।
चिहुं दिश बीज चमंकत तैशें । विरह दाह वाढैं तन जैशें ।७०
बैठ अटारी बनिता सोचें । कंत बैन मन में आलोचै ।७१
अपने महल गोष पर चढ़ी । सोचै चिंता सायर बढ़ी ।
जे कोई दूर झाड़खंड जावै । तासौं नेह दगा चित ल्यावै।२७

दोहो

पुरश एक अपूरबी लष्यौ सुनारी ताह ।
उत्तम इह नर दीशहूं पूरण मेरी चाह ।७३

चौपी

नारी पुरुस दोष रिझाई । धीरज करि मन मांहि रहाई ।
भोर भए फिरि उहां ही जावै । तोए पुरश मेरे मन भावें ।७४

दूहरों

भोर भये त्रीया महिल मैं उहां फिर बैठी जाय ।
उवह पुरश उन बाट तैं फिर कैं निकस्यौ आय ।७५
नगर छोड़ आगैं गयौ ठोकर लागी पाय ।
लोटौ फूटौ ढह परचौ परचौ धरन पैं जाय ।७६
सौदागर की नारि नर तिह देषे अकुलाय ।
दासी दई पठाय कै वेगै लियौ बोलाय ।७७

चौपी

दासी चलि तिहि नरपैं आई । रोवत पुरष बहुत अकुलाई ।

दासी वा०

कहौं क्यु रोवत पुरश सुजांन । माटी वाशन कहा उनमान ।७८
चलौ तोय सिरदार बोलावें । नारी ताश तोय शमझावै ।
तब तिह नर दाशी सह आयौं । सौदागरणी कौं महलह पायौ ।७९

दो०

सौदागरणी जिह तृया जित वैंठी आवाश ।
तित दासी ले ताहि कूं वैंसारचो वहि पाश ।८०

सौदागरणी वाक्यं । दो०

माटी कौं भाजन ढहचौ तापर तज हों प्रान ।
कनक कलश नीकौ सुघट कहौ तों दिउं में आन ।८१
चिंता चित्त मिटाइये धरिहूं मन में धीर ।
ऐंशी तैंशी जनशतें हुइ जै नहीं दिलगीर ।८२

सौदागरनी शें वह पुरस वाक्यं । दो०

वह कंचन कुन काम कौं ताशें मेरों नेह ।
या जग मांहें आन कैं देषी उन मो देह ।८३
कहा जानूं कैशी निभी मनुष जनम ए देह ।
में रोवत इन बात से तन कोई और लषेह ।८४

चौपी

उठ सौदागरणी पग लागी । बाचा सुगन शबें भ्रम भागी ।
धन शतगुर तें ग्यांन बतायौ । डिगत जिये मेरो ढिढ आयौ ।८५
तव सतगुर कर वाकूं थाप्यौ । मैंनां बचन धाय सूंजंप्यौ ।
मूरष दूती ग्यांन धरीजें । इह बिचार हिरदै धर लीजें ।८६

दोहों

मात पिता कुल शब मिलें जोतन धीरज होय ।
ए तन लोरकशाह बिन और न भेटै कोय ।।८७

चौपी

पुरश जात एतौ पण राष्यौ । मैंनां यूं मालिन सूं भाष्यौ ।
सत्य बचन में तोंहि सुनाऊं । बार वार कहा कहि समझाऊं ।८८

दोहो

दूती सुन मैंना कह्यौ अंतर रही लजाय ।
ए सतवंती नार है मोपै छली न जाय ।।८९

चौपी

बरश एक दूती पचहारी । मैंनां शत टरै नहिं टारी ।
मैंना हरिकौ ध्यान लगायौ । इतना में लोरक गृह आयौ ।९०

दो०

बहोत हरष मन में भयौ मिली कंत सूं धाय ।
चरन धोय आचवन लीयौ दूती मन पिछताय ।।९१

मैंनां वाक्यं । दो०

इह पति तेरे भ्रम में शत राष्यौं किरतार ।
ओ तन तुम हित राषीयौ दूती रह्री झख मार ।।९२

यत : दोहौ

पाप पुन्य दोउ बीच हैं जो बावै सो खाय ।
जिह पति सूं अंतर करै सो नरक वास मैं जाय ।।९३

लोरक सा वाक्यं । चोपी

लोरक कहै सुनौ पिय प्यारी । तुम मेंदिर बीजी को नारी ।
मैंना बोलै कंत सुजाना । दूती इक आई इह थाना ।९४

दो०

इक दूती इत कंथ सुन ठगन आई थी मोय ।
म्हें पिउ तेरे भ्रम शैं सत राष्यौ गृह सोय ।।९५

चौपी

लोरकें दूती पकड़ बोलाई । अह जूटी आगे बैठाई ।
पकड़ रांड कौ मूंड मुड़ायौ । कारो पीरो रंग लगायौं ।९६

दो

गधो एक मंगाय कैं तापर करि अशवार ।
दूती कै जूती परी मैंना लोरक प्यार ।९७

चौ०

काली मुंह करि गधै चढ़ाई । हाट हाट बाजार फिराई ।
नगर लोक शब देषन आये । दूती ऊपर धूर उड़ाये ।९८

दोहा

मैंनां अपने शत सूं पतिव्रत राष्यौ दूर ।
पतिव्रता परतीत अह शबद रह्यौ शंगार ।।९९

यतः सोरठा

जो जुग बैरी होय बाल न बांको होय है ।
तिह मार न शकै कोय ज्याकूं रापै सांइयां ।।३००
भई बहुत बेहाल लरका शब पीछै लगें ।
भयौ रांड कौं काल दूती गधा पर चढ़े ।।३०१

चौपी । कवीरुवाच

एशौ शत जो राषें कोई । ताकौं जश शगरैं जुग होई ।
भली होय भली बुध उपावै । बुरी रांड कुल शबे लजावै ।।३०२

यतः

संगत कीं सोभा चढ़ैं उत्तम मध्यम जोय ।
लोहा पारस संगतें छिन में कंचन होय ।।३०३

मैनासत प्रसंग का अंतिम पत्र

मधुमालती की जिस हस्तलिखित प्रति में मैनांसत का यह प्रसंग है उसमें १३" × ११" आकार के ५० पत्र हैं। जिनमें २०वें पत्र के मध्य भाग से मैनांसत का प्रसंग आरंभ होता है और २५वें पत्र के अन्त में जाकर समाप्त होता है। इन ६ पत्रों में ५ रेखाचित्र बने हैं। जिनमें क्रमश ये दृष्य अंकित है—१, लोरक और मैनां एक अटारी पर बैठे हैं। २, मैनां अपने महल में बैठी है, मालिन उसके सामने फूल लेकर उपस्थित हुई है। ३, अटारी के ऊपर बैठी हुई मैनां से मालिन का वार्त्तालाप हो रहा है। ४, सौदागरनी अपने महल में बैठी हुई एक पुरुष को जाते हुए देख रही है। ५, लोरक अपने घर लौटकर आया है उससे खड़े-खड़े मैनां सब हकीकत बयान कर रही है। चित्र केवल आंक कर के छोड़ दिए गए हैं, उनमें रंगों का भराव-फुलाव नहीं हो पाया है। इस लिए गेरुए रंग के रेखाचित्र ही हैं। हाशिए पर चित्रों के शीर्षक भी सावधानी से टांक दिए गए हैं। रेखा चित्र बूंदी कलम के मालूम पड़ते हैं।

पूरी पुस्तक खूब चटकीली काली स्याही से लिखी हुई है। बीच के शीर्षक, छंदों के नाम, उनकी संख्या सूचक अंक सब लाल रोशनाई लिखे गए हैं। चित्रों के हर्दे तथा पत्र की हाशियेदार डांडियां लाख के पक्के रंग से बनाई गई हैं। जहाँ कहीं छूट होगई है वहाँ क्रौंचपद (∧) बना कर उस पाठ को हाशिये पर लिख दिया गया है। जहाँ किसी अंश को काट देने अथवा निकाल देने की आवश्यकता पड़ी है वहाँ उक्त अंश अथवा अक्षर के ऊपर एक खड़ी लकीर। लगा कर व्यक्त किया गया है।

लिखावट में बहुत ही असावधानी बरती गई है। तालव्य श की तो सर्वत्र भरमार ही है। किसी एक अक्षर पद्धति का निर्वाह नहीं किया गया है। यही हालत भाषा की भी है। राजस्थानी के रूप तो सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं, परन्तु पंजाबी, गुजराती आदि के रूप भी पर्याप्त मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं, जैसे जीयथें, इण, मिंदर, म्हें, खावंद, गलां आदि।

साधन की रचना में केवल दोहा, सोरठा और चौपाई छंद ही प्रयुक्त है परन्तु इस में दोहों, सोरठा, सवैया, चंद्रायणा आदि छंद व्यवहार में आए हैं। ऋतुओं की उद्दीपकता को व्यक्त करने के लिए सवैया छंद का व्यवहार किया गया है। ऊपर मैनांसत प्रसंग का जो अंश उद्धृत किया गया है उसमें क्षंदों की संख्या और अक्षरी पद्धति मूल के अनुसार ही रखी गई है। छंद संख्या के विषय में भी सर्वत्र एकरूपता नहीं बरती गई है। एक बार सौ की संख्या पूर्ण होने पर आगे उसका क्रम नहीं चलता है। इसलिए इस उद्धृत अंश में संख्या सूचक अंकों में जो अक्रमता दिखाई पड़ती है, वह मूल में वर्तमान है। इसी प्रकार छंदों में मात्रा आदि की कमी और बढ़ोतरी के कारण जो गति भंग आदि दिखाई पड़ते हैं, वह सब ज्यों के त्यों मूल में हैं। इस अंश को बिना विंदुविसर्ग के परिवर्तन के उद्धृत करने की चेष्टा की गई है। जिससे पाठकों को मूल प्रति के प्रामाणिक स्वरूप की शुद्ध झांकी प्राप्त हो सके।

टिप्पणी—१

भारतीय भाषा विषयक राजकीय दृष्टिकोण

अंग्रेजों के पूर्व भारतवर्ष (उत्तरी भारत) में मुसलमान शासक थे। उनके शासन काल में कचहरी की भाषा फारसी तो थी, किन्तु उसके पठन पाठन की कोई खास व्यवस्था नहीं थी। मुसलमान अपने धार्मिक ग्रन्थों को मकतबों में पढ़ते थे और हिन्दू अपने धार्मिक ग्रन्थों को पाठशालाओं में। राज्य की ओर से इनकी व्यवस्था पर ध्यान नहीं दिया जाता था[1]। जिस समय अंग्रेज भारतवर्ष में आये उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में इसी व्यवस्था को देखा था। एक व्यापारी जाति के रूप में आने के कारण अंग्रेजों ने प्रारम्भ में भारतवासियों के रहन-सहन, धर्म, भाषा आदि के साथ किसी भी तरह की छेड़छाड़ करना उचित नहीं समझा। इस तटस्थ नीति को उन्होंने १८वीं शताब्दी के अन्त तक ज्यों का त्यों कायम रखा। व्यापारी संस्था से १८वीं शताब्दी में ही ये एक प्रशासकीय अधिकारी के रूप में आ गये थे। जीते हुए प्रान्तों की जनता के साथ सम्पर्क बनाये रखने के लिये, इन्हें यहाँ की भाषा की जानकारी आवश्यक मालूम हुई। भविष्य में भी अन्य भूमिभाग को जीतने के लिये सेना संगठित करनी पड़ी। सेना के संगठन करने में यह सम्भव नहीं था कि सभी सैनिक अंग्रेज होते। अतः यहाँ के सैनिकों को भर्ती करना पड़ा। उन सैनिकों के साथ उचित व्यवहार करने के लिये भी भाषा की जानकारी आवश्यक हुई। इन आवश्यकताओं ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी को इस ओर प्रेरित किया कि भारतवर्ष में कार्य करने वाले कम्पनी के अधिकारियों को भारतीय जीवन से परिचित करने के लिये एक शिक्षा संस्था की स्थापना की जाए। जिसके फलस्वरूप १८०० ई० में फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना हुई। लार्ड विलियम बैन्टिक ने कालेज की स्थापना करते समय जो मसविदा तैयार किया था उसमें स्पष्ट लिखा गया है कि :—

"चूंकि परमपिता परमेश्वर की असीम कृपा से ग्रेट ब्रिटेन को भारत में बुद्धि और बल द्वारा उत्तरोत्तर समृद्धि और यश प्राप्त हुआ है; और चूंकि कई लड़ाइयों के बाद न्यायपूर्ण, कुशल और उदार नीति के सुखद परिणाम द्वारा हिन्दुस्तान और दक्षिण

---

१. Desai A. R. (Social Back ground of Indian Nationalism Second Edition).

के विस्तृत भूमिभाग ग्रेट ब्रिटेन के आधीन हैं, और कालप्रवाह में ऑनरेविल इंगलिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासनान्तर्गत एक ऐसे बड़े शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना हो चुकी है जिसके अनेक घने बसे हुये और धनधान्यपूर्ण भूमिभागों में अपनी-अपनी प्रथाओं, सिद्धान्तों और कायदे-कानूनों से अनुशासित होने के अभ्यस्त विभिन्न जातीय भाषाभाषी, धर्मावलंबी, आचार-विचार और स्वभाव वाले लोग बसते हैं, और चूंकि ब्रिटिश जाति के पुनीत कर्तव्य, सच्चे हित, यश और उसकी नीति की दृष्टि से यह आवश्यक है कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के सुशासन और उसके निवासियों की समृद्धि और सुख के लिये समुचित प्रबन्ध हो और जिसके लिये निवासियों का उनके अपने कायदे-कानूनों, प्रथाओं, पद्धतियों के अनुसार शासन करने की दृष्टि से ब्रिटिश विधान की उदार और पुनीत भावना से प्रेरित होकर गवर्नर जनरल ने समय-समय पर सुन्दर और लाभप्रद नियमों की रचना की है; और चूंकि इन सुन्दर लाभप्रद और उदार नियमों के साथ भविष्य में सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा जो कायदे-कानून पास किये जायें उनका सदैव सदुपयोग होना अत्यंत आवश्यक है, इसलिये भारतीय शासनान्तर्गत आनरेबिल इंगलिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के उच्च पदों पर नियुक्त कर्मचारियों में अपना-अपना कार्य सुसंपादित करने की योग्यता होनी चाहिये; उन्हें साहित्य और विज्ञान के सामान्य सिद्धान्तों से परिचित होना चाहिये और हिन्दुस्तान व दक्षिण की विभिन्न देशी भाषाओं और जहाँ वे नियुक्त किये जायें वहाँ के कानूनों और रीति रिवाजों की भाँति ग्रेट ब्रिटेन के कानूनों, शासन-व्यवस्था और विधान का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिये और चूंकि ऑनरेबिल इँगलिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सिविल सर्विस में भर्ती होने वाले व्यक्तियों की यूरोपीय शिक्षा असमय समाप्त हो जाने से उन्हें, भारतवर्ष आने से पहले, साहित्य और विज्ञान के सामान्य सिद्धान्तों से यथेष्ट परिचय अथवा ग्रेट ब्रिटेन के कानूनों, शासन-व्यवस्था और विधान का अच्छा ज्ञान प्राप्त करने का अवसर नहीं मिलता और चूंकि भारतीय सिविल सर्विस के दुरूह और महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करने के लिये बहुत सी जरूरी बातें सरकारी निरीक्षण, दिग्दर्शन और नियंत्रण में भारत में संचालित शिक्षा और अध्ययन के विधिवत् क्रम के बिना पूर्ण रूप से नहीं सीखीं जा सकतीं : और चूंकि इस समय भारत में ऐसी कोई सार्वजनिक संस्था नहीं है जिसमें ऑनरेबिल इंगलिश ईस्ट इंडिया कंपनी के नवयुवक जूनियर कर्मचारी मेहनत की जगहों पर नियुक्त होने की योग्यता प्राप्त कर सकें, और उन जूनियर कर्मचारियों की शिक्षा का प्रबंध करने, अथवा पहलेपहल भारतवर्ष आने पर उनके आचरण की देखभाल करने, अथवा परिश्रम, दूरदर्शिता, सचाई और धर्म के नियमित और सुसज्जित क्रम द्वारा भारत में अंग्रेजी यश-पताका फैलाने के लिये अनुशासन या शिक्षा की व्यवस्था नहीं है; इसलिये रिचर्ड मार्क्विस वेलेजली, नाइट-आव दि इलस्ट्रियस ऑर्डर ऑव् सेंटपैट्रिक, आदि-आदि, सपरिषद गवर्नर-जनरल, से सुशासन स्थापित करने और भारत में ब्रिटिश साम्राज्य दृढ़ बनाने और ऑनरेबिल इंगलिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के हितों और यश की संरक्षा करने के लिये एक संस्था और अनुशासन, शिक्षा और अध्ययन की व्यवस्था आवश्यक समझ कर निम्नलिखित विधान पास किया—

"इस विधान के द्वारा कम्पनी के जूनियर सिविल कर्मचारियों को ईस्ट इंडीज में ब्रिटिश राज्य के सुशासन के निमित्त विभिन्न पद ग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करने के उद्देश्य से साहित्य, बिज्ञान तथा ज्ञान के आवश्यक अंगों की उचित शिक्षा देने के लिए बंगाल के फोर्ट विलियम में एक कालेज की स्थापना की जाती है[२]।"

इस रेजोलूशन से यह स्पष्ट हो जाता है कि फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना 'भारत में अंगरेजों की यश-पताका फैलाने' 'ब्रिटिश साम्राज्य को दृढ़ बनाने' के हेतु हुई थी। इस कार्य के सम्पादन में 'ईस्ट इंडिया कम्पनी के उच्चपदों पर नियुक्त कर्मचारियों में अपना अपना कार्य सुसंपादित करने की योग्यता का होना आवश्यक था। यह योग्यता तभी सम्भव थी जबकि इन कर्मचारियों को ग्रेट ब्रिटेन के कायदे–कानून के साथ हिन्दुस्तान वा दक्षिण की विभिन्न देशीय भाषाओं और जहां वे नियुक्त किये जायें वहां के कानूनों और रीति रिवाजों' का पूरा ज्ञान हो। अत: फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना भारतवासियों को शिक्षा देने के लिये नहीं हुई थी बल्कि उन अंग्रेज कर्मचारियों को शिक्षित करने के लिये हुई थी जो भारतवर्ष में शासन करने आये हुये थे।

भारतवर्ष में भारतवासियों के लिये शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये, और वह शिक्षा किस भाषा के माध्यम से होनी चाहिये, इसके लिये मिशनरियों की ओर से प्रयास बहुत पहले से होता आ रहा था; किन्तु कंपनी की ओर से इस तरह का कदम नहीं उठाया गया था। १८वीं शताब्दी में कुछ अंग्रेज विद्वानों का ध्यान अवश्य भारतीय भाषाओं के अध्ययन की ओर गया था। जिसके ही परिणाम स्वरूप विलियम जोन्स ने १७७४ में एशियाटिक सोसायटी की स्थापना कर दी थी। इसी बीच १७८१ में वारन-हैस्टिंग्स ने कलकत्ता मदरसा की नींव डाली और जोनाथन डंकन में १७९१ में बनारस संस्कृत कालेज स्थापित किया। इन कालेजों को स्थापित करने का सबसे प्रमुख उद्देश्य था ऐसे व्यक्तियों को तैयार करना था जो कि तत्कालीन इंगलिश जजों को हिन्दू और मुहम्मडन कानूनों की व्याख्या करने में सहायता करें।[३] १७८१ के पूर्व जिस सुप्रीम कोर्ट की स्थापना १७७३ के रेग्यूलेटिंग एक्ट द्वारा हुई थी उसमें केवल अंग्रेजी कानून से ही विचार होता था। किन्तु यह कानून भारतीय विधि-विधानों से अनेक स्थानों पर भिन्न था। अत: इस भिन्नता को समाप्त कर उसमें समरसता लाने के लिये १७८१ में उसमें सुधार किया गया।[४] कालेज की स्थापना में दूसरा उद्देश्य अंग्रेजी साम्राज्य को दृढ़ बनाने के लिये यहाँ के प्रभावशाली वर्ग को प्रसन्न करने का था।[५]

---

२. जैसा कि डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने अपनी पुस्तक "फ़ोर्ट विलियम कालेज" में उद्धृत किया है। पृ० १२–१३. यूनीवर्सिटी इलाहाबाद (सं० २००४ वि०) नेशनल लाइब्रेरी पुस्तक नं० H. 891. 43. V. 438

३. History of Education in India. By Syed Nurullah and J. P. Naik. 47, 1943 National Library No. 127. H059

४. 　,,　,,　,, P. 47

५. 　,,　,,　,, P. 47, 49.

किन्तु भारतवासियों को पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराने के लिये पहली बार चार्ल्स ग्रान्ट ने प्रयास किया। चार्ल्स ग्रान्ट १७६७ में पहली बार भारत आये थे। भारतीय जीवन काल में उन्होंने भारत की स्थिति का अध्ययन किया था। उनके मन में यह धारणा बद्धमूल हो गई थी कि भारत का पतन हो रहा है। इसको इस स्थिति से तभी मुक्त किया जा सकता है जब कि यहां पर पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान का प्रचार किया जाय।[६] इसको मात्र ईसाई धर्म ही दूर कर सकता है। किन्तु इससे पूर्व कि ईसाई धर्म का प्रचार किया जाय,[७] हमें भारतवासियों को इस योग्य बना देना होगा जिससे कि वे इन अच्छी बातों को ठीक ठीक समझ सकें। और इस योग्य बनाने के लिये हमें पहले उनके बीच अंग्रेजी भाषा का प्रचार करना होगा। तभी वे हमारे धर्म दर्शन साहित्य आदि का ज्ञान प्राप्त कर अपनी कमजोरियों को सुधार सकेंगें।[८] चार्लस ग्रान्ट ने यह प्रस्ताव १७६२ में तैयार किया था (Ovservations on the state of society among the asiatic subjects of Great Britain, particularly with respect to their morals; and on the means of improving it.) किन्तु यह मान्य नहीं हुआ। इसके बाद भारतवर्ष में शिक्षा के लिये बराबर प्रयत्न चलता रहा। कुछ लोग अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा दिये जाने के पक्ष में थे तो कुछ लोग प्राच्य भाषाओं (Oriental literature) के पठन पाठन के। कम्पनी ने भी अपने राजनीतिक और आर्थिक कारणों से उचित समझा कि भारतीयों के साथ उनके धार्मिक और नैतिक विश्वासों से छेड़ छाड़ करना उचित नहीं।[९] इस बीच

---

६. The true cure of darkness is the introduction of light. The Hindoos err, because they are ignorant, and their errors have never fairly been land before them. The communication of our light and knowledge to them, would prove the best remedy for their disorders; and the remedy is proposed, from a full conviction that if judiuously and patiently applied; it would have great and happy effects upon them, efforts honourable and advantagious for us. (As quoted in Maccully "English Education and origin of Indian Nationalism," p. 184 and Nurrullah and Naik. History of Education in Indlia. 1843 P. 60)

७. "As a sturdy evenglical he had nodoubt that moral deprivity was the source of Hindu degeneracy. Christianity alone could cure the fromer but in order to Prepare them way for the reception of divine truth the native understanding must first beenlightend." (Maccally. Eng. Edn. Origin. Indian. Nation.)

८. We proceed then to observe, that it is perfectly in the power of this country, by degrees, to impart to the Hindoos our language; afterwards through that medium, to make them acquainted wlth our easy literary compositions, upon a variety of subjects; and let not the idea hastily excite derision, progressively with the simple elemenis of our arts, our philosophy and religion. These acquisitions would silently undermine, and length subvert, the fabric of error. (Selections from Educational Records, Vol. I.) (As quoted By Maccaully and Nurrullah.) p.p. 81-83

९. Selections from Educational Records. Vol. I. p. 17.

इंगलैण्ड में ईसाइयों का प्रभाव धीरे-धीरे बढ़ता गया और उन्हें भारतवर्ष में आकर प्रचार करने की सुविधा मिल गई।[१०]

इन तमाम परिस्थितियों के बीच में से १८१३ ई० में कम्पनी ने शिक्षा सम्बन्धी नया प्रस्ताव पास किया। जिसके द्वारा पहली बार भारतवासियों की शिक्षा पर खर्च करने के लिये एक लाख की रकम स्वीकार की गई। इसमें लिखा गया था कि "विद्वान् भारतीयों को उत्साह देने" तथा "साहित्य के विकास और पुनरुद्धार" पर यह रुपया खर्च किया जाएगा।[११] यह स्पष्ट उल्लेख न होने के कारण कि यह रुपया किस भाषा पर खर्च होगा, इसको लेकर काफी वाद-विवाद चलता रहा। अन्त में १८२३, १७ जुलाई को कम्पनी ने शिक्षा की व्यवस्था करने के लिये "जनरल कमेटी ऑव पब्लिक इन्सट्रक्शन" की स्थापना की। इसमें वे ही लोग थे जो कि प्राच्य भाषाओं के अध्ययन अध्यापन के पक्षपाती थे। अतः इन्होंने इस रुपये को इन्हीं भाषाओं के अध्ययन पर खर्च करने का निर्णय किया।

किन्तु इस प्रकार से मात्र प्राच्य भाषाओं पर इस रुपये के खर्च किये जाने के विरोध में अनेक लोग हो गये। इस विरोध को लेकर दो दल हो गये। एक anglicist दूसरा orientliast पहले दल का मत था कि भारत में अंग्रेजी भाषा के अध्ययन से पाश्चात्यज्ञान विज्ञान का प्रचार होना चाहिये। दूसरे दल के अन्तर्गत दो तरह के लोग थे। एक का मत था कि संस्कृत और अरबी ही पठन पाठन के उपयुक्त हैं अतः इसी से शिक्षा दी जानी चाहिये। दूसरे वे थे जिन की दृष्टि में आधुनिक भारतीय भाषाओं को ही शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिये। anglicist दल के साथ अनेक भारतीय व्यक्ति भी थे जिनमें राजा राममोहनराय का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। राजा साहब ने १८२३ ई० में लार्ड एमहर्स्ट के नाम एक पत्र लिख कर यह प्रार्थना की थी कि भारतवर्ष को सभ्य सुसंस्कृत बनाने के लिये अंग्रेजी भाषा का ज्ञान कराया जाना अति आवश्यक है। संस्कृत साहित्य से भारतवर्ष का परिचय आज के वैज्ञानिक जगत से नहीं कराया जा सकता। १८१९ में जिस हिन्दू कालेज की स्थापना की गई थी, उसके जन्मदाताओं में राजा साहब भी एक थे, उसके उद्देश्य में लिखा गया था कि इसमें "हिन्दू बच्चों को एशियाई तथा यूरोपीय भाषा और विज्ञान की शिक्षा दी जायगी।"[१२] दूसरा नाम मेकॉले का आता है। मेकॉले ने प्राच्य भाषाओं को बहुत ही घृणा और उपेक्षा की दृष्टि से देखा। वे उस समय गवर्नर जनरल की Executive council में सदस्य थे। अतः जब यह मामला गवर्नर

---

१०. History of Missions in India : p. 150-51. By Richters.

११. "a sum of not less than one lac of Rupees in eaeh year shall be set apart and applied to the revival and improvement of Literature and the encouragement of the learned natives of India, and for the introduction and promotion of a knowledge of the sciences amongs the inhabitants of the British territories in India."
(Educational Records Vol. I. p. 22),

१२. "To educate the sans of Hindus in the Europian and Asiatic languages and sciences." By James.

जनरल के सामने रखा गया तो मेकॉले ने अपनी सम्मति देते समय अंग्रेजी को ही शिक्षा के माध्यम के लिये उपयुक्त ठहराया। मेकॉले केवल अरबी या संस्कृत के ही विरोधी रहे हों ऐसी बात नहीं थी; वे आधुनिक भारतीय भाषाओं को भी ज्ञान-विज्ञान के प्रचार और प्रसार में अशक्त मानते थे। मेकॉले के इन्हीं सुझावों से प्रभावित होकर गवर्नर जनरल ने ७ मार्च १८३५ को यह निर्णय दिया कि ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य भारतवासियों में यूरोपीय साहित्य का प्रचार करना है। अतः यह सारा रुपया मात्र अंग्रेजी शिक्षा पर खर्च किया जाना चाहिये।[१४] गवर्नर-जनरल के इस निर्णय से शेक्सपियर ने जो कि उन दिनों शिक्षा-समिति के अध्यक्ष थे, अध्यक्ष पद से स्तीफा दे दिया। उनके स्थान पर मेकॉले समिति के अध्यक्ष हो गये। मेकाले ने इस कार्य-काल में जोरों से अपनी नीति का प्रचार किया। अंग्रेजी के प्रचार करने में इन्होंने भारतीय भाषाओं की उपेक्षा आरम्भ कर दी। संस्कृत और अरबी के अनुवाद तथा पठन-पाठन पर जो रुपया खर्च किया जाता था उसको बन्द कर दिया गया। विद्यार्थियों को जो छात्रवृतियाँ दी जाती थी वे भी बंद कर दी गयीं। १८३४ ई० में देहली कालेज के अन्तर्गत ३८८ विद्यार्थी पढ़ते थे जिनमें ३५६ को छात्रवृत्ति दी जाती थी। अन्यान्य कालेजों में भी करीब-करीब ऐसी ही व्यवस्था थी किन्तु इस कानून द्वारा ये छात्रवृत्तियाँ बन्द कर दी गईं। अगर स्थानीय कमेटियों से किसी तरह की सिफारिश आती भी तो जनरल कमेटी उस पर ध्यान नही देती थी। किन्तु यह स्थिति अधिक दिन तक कायम नहीं रह सकी और जनरल-कमेटी ने अपना मत स्पष्ट करते हुये यह कहा कि हम अरबी और संस्कृत के

---

१३. "We have a fund to be employed as government shall direct for the intellectual improvement of the people of this country. The simple question is, what is the most useful way of employing it" He first aside the vernaculars on the ground of general agreement that the dialects commonly spoken among the natures of the part of India contain neither literary nor scientific information, and are moreover, so poor and rude that, until they are enriched from some other greater, it would not be easy to translate any valuable work into them. It seems to be admitted on all sides, that the intellectual improvement of those classes of their people who nhve the means of pursuing higher studies can at present be effected oaly by means of some language not vernacular among them. What then shall that language be ? One half of the committee maintain that it should be English.

(James Education and Statesmanship. In India. 1797-1910)

१४. "His lordship in council is of opinion that the great object of the British Government ought to be the promotion of European literature and sciences among the natives of India; and that all the funds apprpriated for the purpose of education would be best employed on English Education alone."

(Selections from Education Records Vol. I. p. p. 130-31)

१५. Review of the Public Instruction in the Bengal Presidency. From 1835 to 1851. By. J. Kerr. M.A. 1853. N.L. No. 172. H 97 (1)

विरोधी हैं न कि आधुनिक भारतीय भाषाओं के।[१६] भाषा की नीति पर और भी विस्तार से आकलैण्ड ने अपना मत प्रगट किया। इस प्रकार अंग्रेजी के साथ भारतीय भाषाओं पर भी ध्यान दिया गया।

---

१६. "The general committee are deeply sensible of the importance of encouraging the cultivation of vernacular languages. They conceive that the order of the 7th of March precludes this, and they have constantly acted on the construction. In the discussion which produced that order, the claim of the vernacular languages were broadly and prominently admitted by all parties, and the question submitted for the direction of Government only concerned the relative advantages of teaching English on the one side and the learned eastern languages on the other." It was added that the phrases "English education" "English literature and science." Were not yet up in opposition to vernacular education but in opposition to oriental learning taught through the medium of Sanskrit and Arabic." (p. 8-9)

(Review of Public Instruction in the Bengal Presidency from 1835 to 1851. By. J. Kerr. M. A. 1853).

— श्रीनारायण पाण्डेय

टिप्पणी—२

जसराज सवाई का पन्द्रह-तिथि-विरह-वर्णन

हस्तलिखित ग्रंथों* की खोज करते समय मुझे कई ग्रंथों के साथ एक चौपतिया के आकार की छोटी पुस्तिका प्राप्त हुई। इसमें कबीर, लाल एवं जसराज सवाई आदि कवियों की कविताओं का संग्रह है। एक स्थान पर लिखा है—"सं० १७३२ वर्ष असाढ़ सुदि २ दिने। पं० सभाचंद लि०।।" इससे पता चलता है कि लिपिकार पं० सभाचंद हैं। ये संभवतः कवि भी रहे होंगे, क्योंकि कुछ छंदों के नीचे ही इस प्रकार की पुष्पिका दी है।

जसराज सवाई के नाम से ही जान पड़ता है कि ये राजस्थान की ओर के कवि होंगे। इनके सवैयों की भाषा से भी ऐसा ही ज्ञात होता है—'मिले दोउ कामिण कंत हसंत शरीर तिया अपणों सिणगारयो।' कवि शाक्त जान पड़ते हैं, उन्होंने भवानी की पूजा का पूरे एक सवैये में वर्णन किया है।

हिन्दी में बारहमासा एवं षट्ऋतु वर्णन की प्रथा है। संभवतः पन्द्रह तिथि विरह वर्णन केवल जसराज ने ही किया है। उन्होंने प्रारंभ में ही लिखा है—'अथ पनरह तिथि सवैया लिख्यते।' ये पन्द्रह तिथियाँ किसी एक ही मास की नहीं हैं। तिथियों का क्रमशः वर्णन अवश्य है। सावन की तीज संभवतः भादों की चौथ, क्वार की दशमी, कातिक की देवोत्थान एकादशी एवं बसंत की नवमी आदि का वर्णन है। सभी तिथियाँ शुक्ल पक्ष की हैं; एवं प्रत्येक तिथि के लिए एक सवैया लिखा गया है।

पन्द्रह सवैयों में काव्य-परम्परानुमोदित संक्षिप्त विरह-वर्णन है। विशेषता यही है कि संक्षेप में विरह से सम्बन्धित अनेक बातों का समावेश है। एक विरहिणी के उद्गारों का सहज अकृत्रिम वर्णन है।

इस पुस्तिका की लिपि कहीं-कहीं नागरी लिपि से भिन्नता रखती है। कई बार पढ़ने पर इसके सवैये स्पष्ट हुए। ज, झ, व, भ, स, कृ, ए, च्छ, द्र आदि विचित्र ढंग से

---

*ये ग्रन्थ मुझे क्योंटरा (इटावा) के पं० बालकृष्ण त्रिपाठी, बालमुकुंद शुक्ल, रामसागर पाण्डे और ओंकारनाथ द्विवेदी तथा कुइता के योगेन्द्र किशोर तिवारी से प्राप्त हुए हैं। इन सभी पंडितों को उदारता के लिए लेखक अनुगृहीत है।

लिखे गये हैं। सवैया में फिट करने के लिए कुछ शब्दों को भी तोड़ा-मरोड़ा गया है—करक्क लगन्न (कर्कलग्न), कथन्न (कथन), सयन्न (शयन), बयन्न (बैन-वचन), सुपन्न (स्वप्न) रयन्न (रैन-रजनी), परब्ब (पर्व)।

वर्णन का संक्षिप्त रूप इस प्रकार है—पड़वा के दिन पत्नी ने मना किया कि कंत विदेश न जाओ, तुम्हारे बिना यह बेल सूख जायगी। किंतु वे नहीं माने, चले गये। दूज के दिन हिन्दू और मुसलमान बाजे गाजे और धूमधाम से पर्व मनाते हैं। प्रियतम ने तो बिसार दिया है किन्तु स्त्री का मन तो उसमें ही बसता है। तीज के दिन सखियाँ काजल और तिलक का शृंगार करती हैं, किंतु विरहिणी के लिए सावन की तीज व्यर्थ आती है। चौथ के दिन काम अधिक सताने लगा। प्रियतम के आने के लिए वह व्रत करती है। विरहिणी ने ताम्बूल और चन्दन को त्याग दिया। कंत पंचमी के बीत जाने पर भी नहीं आये। छठ के दिन वह पथिक के द्वारा सन्देश भेजती है। सप्तमी के स्वप्न में वह प्रियतम के साथ केलि करती है, किन्तु जागते ही दुःख के कारण अचेत हो जाती है। अष्टमी के दिन वह प्रेमोन्मत्त हो जाती है। सोलह शृंगार कर हास-विलास करती है, किंतु हृदय में धुवाँ घुट रहा है। बसंत की नवमी के दिन व्याकुल हो मंदिर के बाहर खड़ी होकर-सखियों को खेलती देख कर वह दुःख पाती है। दशमी के दिन तो सीता का वियोग भी मट गया था। दशहरे के दिन नाथ का विदेश रहना बहुत दुःखदायी हो गया। एकादशी के दिन लोग सुखसम्पत्ति के लिए व्रत करते हैं, परदेश से लोग घर का ओर चल पड़ते हैं। अब विरहिणी को विरह दुःख असह्य हो गया है। वह कहती है, मैं मर जाऊँगी, अब यह दुःख मेरी बला सहे। द्वादशी के दिन ब्राह्मणों से प्रिय के आने के विषय में पूछा, तो उन्होंने कर्क लग्न में मिलन बताया। तेरस आगयी, छह मास तक दिन और नक्षत्र गिनती रही। उजियाली चौदस के दिन नर-नारी मंदिर में जाकर वाद्य और सुगन्धित वस्तुओं से भवानी की पूजा करते हैं। विरहिणी क्यों किसी का ध्यान करे, उसके हृदय में तो उसके श्याम बसते हैं। पूर्णिमा के दिन दोनों का मिलन हुआ। कामिनी ने अपन शरीर का शृंगार किया, हृदय की आशाएँ फलित हुईं।

जसराज का एक सवैया बानगी के रूप में प्रस्तुत है—

दिन आयो इग्यारस को हरि पौढ़त वासग सेज पताल महैं।
व्रत लोग करैं सुख सम्पति कारण बैणगुणी जसराज कहैं॥
परदेसन तैं घर कूं उमहे दिन रैण बटाऊ सुपंथ बहैं।
निसनेही न आवत तौ ही सखी मरिऊँ मेरी दुष्य बलाइ सहैं॥११॥

अथ पनरह तिथि सवैया लिख्यते।

आज चले मन मोहन कंत विदेस मोहि छोरि इकेली।
कह्यौ समझाइ चलौ परिवा मत सूकैगी स्यांम बिना तनु बेली॥
तौही न मान्यौ कथन्न सयन्न वयन्नउ थापि चल्यौ री सहेली।
कै है जसराज रटै निसिवासर प्रेम परव्व सनेह गहेली॥१॥
दूज के द्यौस महोछव की जत देपि निसापति संझ समै।
घन घोर नीसांण घुरै पुर मंगल हींदू तुरक्क पछिम्म नमै॥

परदेस संदेसन पाऊँ जसा पिय देषि दिसा दृग पांनग मैं ।
मत मोहि विसार तजौ विण दूषण चित्त तुम्हारे समीपि रमैं ।।२।।
के ईसर्भं सिणगार अपार अणाइद रप्पण वेस वनाई ।
काजर नैन अनोपम रारत भाल तिलक्क की सोभ सवाई ।।
केई सहेली कै साथ विनोद सौं गावत गीत रुनाचत काई ।
मोहि जसा विण प्रीतम सावण मास की तीज अकारथ आई ।।३।।
चौथि वितीत भई तौहो प्रीतम कागद हा तिणि भेज न दीनौ ।
मोहि संतावत मैं न अहो निसि बांन लगावत काम उगीनौ ।।
नैन झरै जल पाउस काल ज्यूं घाउ कलेजै कीयौ जीउ लीनौ ।
चौथि करूं जसराज महाव्रत जौ घरि आवत नाह नगीनौ ।।४।।
जा दिन थें आली प्रांन धनी मोहि छोरि इकेली विदेस सिधायौ ।
ता दिन थैं न तंबोल भष्यौ न सरीर विषै घसि चंदन लायौ ।।
रा मनि षेल विनोद तजे सब नाहन भूषण वेस वणायौ ।
कौन जसा उपचार करूँ पांचिम आई पै कंत न आयौ ।।५।।
वीर बटाऊ संदेस कहूँ तोहि पाइ परूं फुनि लेन सिधावौ ।
लालची छाइ रह्यौ परदेस तहाँ जाइ कागद ले दिषलावौ ।।
मो मुष तैं मुष तेरै संदेस जसा जाइ प्रीतम कुं समझावौं ।
छठि कौ दीह अनीठ भयौ मोहि आइ मिलौ अब क्यौं ललचावौं ।।६।।
जाण्यौ मैं नाथ पधारे गृहंगण बांटत हूँ पुर मांहि बधाई ।
प्रेम विज्योग मिट्यौ तन अंतर प्रीतम सौं मिलि केल मचाई ।।
सातम सेज इकेली मैं सूती सुपन्न रयन्न कै आइ जगाई ।
जागत ही जसराज निरास अचेन भई मानुं वासिग खाई ।।७।।
आठिम आज भई जसराज विराजत कामणि प्रेम अघाई ।
हास विलास करै निसवासर सोल सिंगार वणावै लुगाई ।।
मोहिन मानत चित्त कछू हिरदा विधि धूम अगन्नि धुषाई ।
नाह कठिन्न भयौ नहीं आवत कौण सौं कूक पुकारौं री माई ।।८।।
मैं तेरै कारण मंदिर वार षरी नित की पिउ काग उडाऊँ ।
नौम वसंत सषी मिलि खेलत हूँ न धनी बिनु षेलन जाऊँ ।।
झूरत ही दृग जोति घटी पल लोहू घट्यौ सुष चैंन न पाऊँ ।
नैंन तजौ जसराज परै पिउ देहित सीष भलै समझाऊं ।।९।।
आज बडो दिन है दसरा हौ रुघप्पति जैत दसुं दिन पाई ।
सीत विजोग मिट्यो दसमी दिन रावण कूं हरि लोक लगाई ।।
बड़ बड़े राज महोछव गोठि करै दसमी जसराज सवाई ।
हूँ किण स्यूं गुण गोठ करूं आली नांह विदेस भयो सुषदाई ।।१०।।
दिन आयौ इग्यारसि कौ हरि पौढ़त वासग सेज पताल महै ।
व्रत लोक करै सुष संपति कारण वैण गुणी जसराज कहै ।।

परदेसन तें घर कुं उमहै दिन रैंण वटाऊ सु पंथ बहैं ।
निसनेही न आवत तौही सषी मरिहूँ मेरी दुष्य बलाइ सहै ।।११।।
वारसि बांभण बूझ्यौ सहेली री मोहि कह्यौ कब लालन मानै ।
जोतिष राउ बड़े जसराज सुतौ पिउ आगम साच बतावै ।।
करक्क लगन्न कह्यौ चिर सुंदर राम करै तो सही सुष पावै ।
च्यार दिवस्स में नाह मिले विरहानल को झल आइ बुझावै ।।१२।।
आज सषी षट मास बरावरि तेरसि वासर नीठ गमायौ ।
सनम्मुष राति अवाज भई दृग देषत ही जिय मैं झर आयौ ।।
नक्षत्र गिणंत निसां निरवौरी निसाकर आन सताप लगायौ ।
जमा पतियां लिषि दीनी सनेही कुंआ कौ कबै मोहि कागद नायौ ।।१३।।
उजुआरी चउद्दिसि देवी कौ वासर देउ लमंत मिले हरसै ।
सजि ताल कंसाल पपाउज लेन दुई मिलि नाचत रंभ तिसै ।।
घनसार अपार सुकेसर चंदन पूजन कुं नर नारि घसै ।
जसराज भवानी कुं ध्यावत नागर मो मन मे मेरो स्यांम बसै ।।१४।।
पूनिम दीप बधाई सषीरी तेरै घरि प्रीतम तोहि पधार्यौ ।
पुषी भई उठि सनम्मुष जाइ वदन्न विलोकित दुक्ख त्रिसार्यौ ।।
मिले दोऊ कामिण कंत हसंत शरीर तिया अपणौ सिणगार्यौ ।
फली उर की सब आस विलास भलैं जसराज सनेह बधार्यौ ।।१५।।

डॉ० रामनाथ त्रिपाठी

इति पनरह तिथि सवैया समाप्ता

विद्यापीठ के हस्तलिखित ग्रंथ

विद्यापीठ में अनुसंधान की प्रवृत्ति के उत्तरोत्तर बढ़ने के साथ-साथ हमारे संग्रहालय की उपयोगिता भी बढ़ती जा रही है। संग्रहालय के इन ग्रंथों से विद्यापीठ के छात्र एवं अन्य अनुसंधित्सु सभी लाभ उठाते हैं। पिछले वर्ष की अपेक्षा इस वर्ष ग्रंथों का संग्रह अच्छा हुआ है। अब की बार दान में प्राप्त एवं क्रय किए गए ग्रंथों की संख्या ३१३ रही है। इनमें से श्री टी० एन० के० आचार्य स्वामी, वैर (भरतपुर) राजस्थान ने ६ ग्रंथ, विद्यापीठ के शोध सहायक श्री राजेन्द्रकुशवाहा ने २ ग्रंथ, श्री लादूराम दुधौड़िया, चूरू (राजस्थान) ने महाकवि केशवदास के बारहमासा के १० चित्र, २ नक्शे और १ ग्रंथ विद्यापीठ संग्रहालय को प्रदान किये हैं। इस समय संग्रहालय में में कुल ३५५ ग्रंथ हैं। भक्ति, पिंगल, ज्ञानोपदेश, वैद्यक, वेदान्त, शृंगार, रीति, युद्ध, वैराग्य, स्वरोदय, संगीत, ज्योतिष, शालिहोत्र, कथा-वार्त्ता, प्रेमाख्यान, शकुन, रामायण, महाभारत, जैनागम, बारहमासा, नीति आदि विषयों के ग्रंथ शताब्दि क्रम से इस प्रकार हैं:—

शताब्दी—	१५	१६	१७	१८	१९	२०	फुटकर	
ग्रंथ संख्या—	४	१०	३९	२७	६५	३४	२७६	३५५

इस वर्ष संग्रहालय में ग्रंथों के अतिरिक्त महाकवि केशवदास के बारहमासे के दस (कलमी) चित्र तथा आगरा और दिल्ली के नक्शे भी संग्रह किये गए हैं। इनमें आगरे का नक्शा कई दृष्टियों से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें यमुना के उस पार की उन इमारतों के मानचित्र हैं जिनका अब कोई पता भी नहीं है।

संग्रहालय में ऐसी सामग्री निरन्तर आती रहती है जो राष्ट्रीय महत्त्व की हैं, परन्तु संग्रहालय की आर्थिक सीमा अत्यन्त सीमित होने से उक्त सामग्री का समुचित

संग्रह नहीं हो पाता । इसके लिए प्रतिवर्ष कम से कम १०,००० रुपये की राशि सुरक्षित रहनी चाहिए । यह राशि शोध-छात्रों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए और वस्तुओं के प्रतिदिन महार्घ होते जाने के कारण बहुत ही कम है ।

संख्या की दृष्टि से यह संग्रह अभी अपनी आरंभिक अवस्था में प्रतीत होता है, पर यह तो संग्रहालय के श्रीगणेश मात्र का परिणाम है । अभी गिनती के दिनों में ही विद्यापीठ ने अनेक अच्छे ग्रंथ उपलब्ध किए हैं जिनका साहित्य की दृष्टि से बहुत मूल्य है । इन ग्रंथों में रास संज्ञक ग्रंथों का अपना अलग महत्व है । इधर उत्तर भारत में इस प्रकार के रासों का अध्ययन नहीं हुआ है । गुजराती में कुछ अवश्य प्रकाशित हुए हैं । रास और चउपई एवं बात अथवा वार्ता साहित्य का संग्रह एक खास दृष्टिकोण से किया गया है । इसी प्रकार पिंगल ग्रंथों का संग्रह अपूर्व है । कवि मुरलीधर, भूषण के छन्दोहृदय प्रकाश का पूरा हस्तलेख पहली बार ही मिला है । जिस गुटके में यह ग्रंथ निबद्ध है उसमें पिंगल विषयक और भी ग्रंथ हैं । जिनमें सूरत मिश्र का पिंगल विषयक एक ग्रंथ भी है सूरत मिश्र के नाम से पाए जाने वाले ग्रंथों में अबतक इसका कोई उल्लेख नहीं है ।

संग्रहालय के महत्व पूर्ण ग्रंथों का विस्तृत विवरण की भारतीय साहित्य में प्रकाशित किया जा चुका है । जिन ग्रंथों का विवरण प्रकाशित हो चुका है उनकी नामावली इस प्रकार है:—

१ विजय मुक्तावली

२ अवतार चरित्र

३ वीसलदेव रास

४ पदमुक्तावली

५ रागमाला

६ धनुर्वेद

७ महाभारत

८ रामचरित मानस

इन विवृत ग्रंथों के अतिरिक्त कतिपय अन्य ग्रंथ भी बहुत महत्वपूर्ण हैं जिनका बिवरण भी भारतीय साहित्य में क्रमशः प्रकाशित होता रहेगा ।

---

१. अनूप संस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर में सुरक्षित "हृदयप्रकाश" खंडित है उसमें केवल १२ अध्याय हैं । रा० हिन्दी पुस्तकों की खोज, भाग २ पृष्ठ ११

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१.	विजय मुक्तावली*	छत्र कवि	१०१	सं० १७५७	
२.	शीघ्रबोध (संस्कृत)	काशी नाथ भट्टाचार्य	२२ से ६३		
३.	रसखानि कवित्त	रसखान	२९		लि० सं० १९००
४.	स्वायंभु मनु	बद्री दयाल सकसेना	३०	सं० १९६७	
५.	महाभारत कर्ण पर्व	+	३ खंडित	+	
६.	ज्ञान माला	+	८ से १९ तक खंडित		
७.	आदित्य हृदय	गुलाबदास	५६		लि० सं० १८७७
८.	रामायण-मानस	तुलसीदास	६ पत्र केवल		
९.	गोबिन्दाष्टक (संस्कृत)	शंकराचार्य			लि० सं० १९११
१०.	जगन्नाथाष्टक	शंकराचार्य	६		
११.	विवाह पद्धति	+	अपूर्ण	+	
१२.	पंचांग			सं० १९३३	
१३.	नारायण लीला	माधोदास	४० खंडित	सं० १९३६	
१४.	अहमक के लतीफ़े	—	२३		
१५.	भोगल पुरान	कबीर	१०		
१६.	सूर के कूट पदों की टीका	सूरदास	४५ खंडित		
१७.	पुरुषोत्तम सहस्रनाम		२१		

* चिह्नांकित ग्रंथों के विशेष विवरण क्रमशः भारतीय साहित्य में प्रकाशित हो चुके हैं

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१८.	नन्ददास के पद	नन्ददास	१७ खंडित		
१९.	पद संग्रह	सूरदास, कृष्णदास, चतुर्भुज-दास, छीतस्वामी	४		
२०.	गीता (संस्कृत)	—		सं० १९१९	
२१.	बोलचितावणी	सुन्दरदास	२८६		
२२.	मन्त्र	—	प्रथम पत्र खंडित	सं० १६६४	
२३.	दुर्गा सप्तशती (संस्कृत)	—	६ खंडित	—	
२४.	मुक्तावली कारिका पाठ(संस्कृत)	विश्वनाथ पंचानन	५		
२५.	रामचरितमानस	तुलसीदास	सुं० का० २२ अ० का० ३० कि० का० १३		
२६.	उषा चरित्र		७७	सं० १८८६	
२७.	राग संग्रह		७९ बीच में दो पत्र सादे		
२८.	शिव विवाह		२१	सं० १८४३	
२९.	गुटका	सुन्दर	१६८ खंडित		
३०.	बानीसंग्रह		१०८	सं० १६३८	
३१.	भक्तमाल	नाभाजी (प्रियादास की टीका)	१०८	सं० १७६६	लि० सं० १८२७
३२.	रुक्मिणी मंगल	श्री राम लला	११		
३३.	रामचरितमानस	तुलसीदास	३०१		लि० सं० १८२८
३४.	व्रजभाषा काव्य संग्रह		१६०		लि० सं० १९१४

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
३५.	सनेह लीला, दान लीला		८१		लि० सं० १९०१
३६.	ललित प्रकाश	सहचरिशरण	२५		
३७.	विविध पदसंग्रह		२७		लि० सं० १९८९
३८.	नरपति जयचर्या		२१ खंडित		
३९.	बहुरूप गर्भ	शारदा लिपि में लिखित	३२		
४०.	लक्ष्मी नारायण यंत्र				
४१.	द्वार पूजा				
४२.	शालहोत्र	माधवराज	६०		लि० सं० १९०२
४३.	पृथ्वीराज रासो (विजय खंड)	चंद	५९		लि० सं० १९१२
४४.	भीष्म पर्व (महाभारत)	भोला नाथ	२२५		लि० सं० १८८९
४५.	बसन्त राज (भाषा)		७९		लि० सं० १८७३
४६.	रामकथा {अवतार चरित्र}	बारहट नरहरिदास	१७७		लि० सं० १८१३
४७.	मसनवी (उर्दू)	मीर हसन	८१		११९९ हि०
४८.	शल्य पर्व (महाभारत)	शम्भू राम	६९		लि० सं० १८३७
४९.	क्षेत्र समास (सचित्र)		३६		लि० सं० १६३८
५०.	हंस बच्छराज रास		२७		लि० सं० १७०४
५१.	प्रश्नोत्तर काव्यवृति		२७		लि० सं० १६४०
५२.	गंगाष्ट पदी	जयदेव	२७		लि० सं० १८२६
५३.	गुटका (बानीसंग्रह)		१२०		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
५४.	भक्ति रत्नावली	विष्णुपुरी	४७		
५५.	श्री राम रस		३०		लि०सं० १८५३
५६.	श्री रामचरित्र		१८५		लि० सं० १८४०
५७.	गोपीचन्द कथा		८३		
५८.	ढाल सागर हरिवंश		३६		
५९.	कथा कौमुदी		४५		
६०.	पंचदशी टीका	अनेमानंद सरस्वती	१२५		
६१.	कल्प सूत्र		१०९		
६२.	नाशकेत जी की कथा		१४		लि० सं० १८८२
६३.	दिस्टान्त (पुरानी बातें)		५८		
६४.	नषशिख		६		
६५.	हरि लीला		२		
६६.	कुंडलिया	श्री गिरधर कविराय	८		
६७.	सुकनावली		७		लि० सं० १८६२
६८.	राजुल पच्चीसी		४		लि० सं० १८४३
६९.	अभिधान चिन्तामणि	हेमचंद्र	२७		लि० सं० १९४१
७०.	छन्द		२		
७१.	साजन गीत		५		लि० सं० १८८७
७२.	ज्ञान चिन्तामणि		४		लि० सं० १७२८

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
७३.	इन्द्रिय पराजय		५		
७४.	उपदेश रत्न कोष		४		लि० सं० १८५५
७५.	बूढ़ा चरित्र		४		लि० सं० १८३६
७६.	शनिदेव कथा		६१		
७७.	कवित्त अलंकार		७६		
७८.	सुदर्शन सेठ की कथा		८८		लि० सं० १८५१
७९.	ब्रह्मबावनी		९		लि० सं० १८४५
८०.	करुणा बत्तीसी		७		लि० सं० १९१९
८१.	राजा व बादशाह की कथा		७७		
८२.	(रत्नमाला) ज्योतिष शास्त्र		१६		लि० सं० १६५८
८३.	षंडाव्यस्यक		१८		लि० सं० १६४६
८४.	कोक शास्त्र		५०		
८५.	अरजन को ढालीयो		४		लि० सं० १८२३
८६.	सुभाषित काव्य		५		
८७.	हौलिका प्रबन्ध		२		
८८.	मंत्रों के पत्र		२१		
८९.	पुण्य बत्तीसी		५		लि० सं० १६९६
९०.	वास्तुप्रकरण		५		
९१.	वृंदसतसई		२६	र० का० सं० १७१६	

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
९२.	शीलोपदेश माला		४		
९३.	रमल		२०		
९४.	तुलसी कवच		२ खंडित		
९५.	वैराग्य गीत		१० खंडित		
९६.	ध्रुब चरित्र		२० खंडित		
९७.	अर्जुन गीता		१४ ,,		
९८.	पुरुषोत्तम सहस्रनाम		३५		
९९.	मुहूर्त्त चिन्तामणि (प्रमिताक्षरा टीका)		२७		
१००.	रामचरित मानस (उत्तर काण्ड)		४०		लि० सं० १९१४
१०१.	भगवद् गीता		८५		
१०२.	बाला सहस्रनाम स्तोत्र		२७		लि० सं० १८५२
१०३.	आदित्य स्तोत्र		२१		
१०४.	रुद्र विधान		७४		
१०५.	गुटका (कबीर के स्तोत्र आदि)		२११ खं०		
१०६.	लघु चाणक्य (५ अध्याय)		७		
१०७.	राम पटल		३३ खं०		लि० सं० १८७४
१०८.	गोपालाष्टक		२७		
१०९.	भगवद् गीता		७१ खं०		
११०.	नवस्मरण		१६		लि० सं० १८१६

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१११.	चाणक्य नीति		२१		लि० सं० १९३९
११२.	ग्रहोदय राशिफल		६		लि० सं० १७८१
११३.	मीन एकादशी व्याख्या		६		
११४.	शीघ्र बोध		१९		
११५.	षट पंचासिका		३		लि० सं० १८५४
११६.	कुंडली विचार		४		
११७.	दोसावली		५		
११८.	दुर्गा		५५		लि० सं० १८७२
११९.	षट पंचासिका (प्राचीन प्रति)		६		
१२०.	मीन एकादशी व्याख्यान		११		लि० सं० १७७६
१२१.	काम (कोक)		६४ खं०		
१२२.	होम पद्धति		११ खं०		
१२३.	विवाह पटल		६		
१२४.	हनुमन्नाटक		७७		लि० सं० १९०७
१२५.	आत्मनिद्या		३		लि० सं० १८९०
१२६.	पुरुष कुंडलीविचार (ज्योतिष)		३		लि० सं० १८४०
१२७.	प्रश्न दीपिका		४		लि० सं० १८५६
१२८.	षट पंचासिका (सप्तमोध्याय)		५		लि० सं० १८४४

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१२९.	प्रज्ञापनोपद विचार बीजक		४		लि० सं० १९११
१३०.	पद		३		लि० सं० १८४७
१३१.	चमत्कार चिन्तामणि		६		लि० सं० १८४०
१३२.	सम्बोह सत्तरि सूत्र		४		लि० सं० १५९५
१३३.	वस्तु काल परिमाण सिक्षा		४		लि० सं० १८७९
१३४.	उपसंग्रह स्तोत्र		८		
१३५.	महावीर स्तोत्र		२		
१३६.	शोभन स्तुति		७		
१३७.	शत्रुंजयमुख मंडण ऋषभ बीनती		६		लि० सं० १७१०
१३८.	वैद्यकसार		२४		
१३९.	अपामार्जन स्तोत्र		१०		
१४०.	लघुजातक		१३		लि० सं० १८७९
१४१.	त्रिलोक्य दीपिका		३१		
१४२.	वैद्य जीवन		१८		लि० सं० १८५१
१४३.	ज्योतिष कुलिका		२७ खं०		
१४४.	मुहूर्त्त चिन्तामणि		२१		
१४५.	वाग्भटालंकार		१६		
१४६.	दीपमालिका कथा		७		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१४७.	भाग्योदय फल		४		
१४८.	तिलक महिमा		७		
१४९.	किरातार्जुनीय (द्वितीय सर्ग)		१४		लि० सं० १९१०
१५०.	सारस्वत पूर्वार्द्ध		७९		लि० सं० १९२०
१५१.	शब्दरूपावली		३०		
१५२.	कालज्ञाने द्वारलक्षण		२२ (३)		
१५३.	अकल काष्ट की मूल टीका		६		लि० सं० १९१५
१५४.	श्रुतबोध		६		,, १८४१
१५५.	एकादशी कथा		६०		,, १९५०
१५६.	होलिका प्रबन्ध		२		
१५७.	अरजन को ढालियो		४		
१५८.	भवानी सहस्रनाम स्तोत्र		१७		,, १९०७
१५९.	रघुवंश महाकाव्य (१ सर्ग)		४		
१६०.	ज्ञान पंचमी महिमा		६		,, १९०६
१६१.	चौथी माताजी रो छन्द		७		,, १७८१
१६२.	भागवत माहात्म्य		२२		,, १८८२
१६३.	ऋषि पंचमी कथा		६		,, १९४२
१६४.	वैराग्य शतक		५		
१६५.	सुदर्शन चक्र		४		,, १९०१

नुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१६६.	रामायण अयोध्या काण्ड (सं.)		३६ खं०		
१६७.	बिष्णु पुराण		१२६		
१६८.	गीता		१०८		
१६९.	बृहत शान्ति		३		
१७०.	शुक्रावली		११		,, १९९३
१७१.	राम नवरस सार संग्रह—		७७		
	शिव-संहिता		१५		लि० सं० १९०७
१७२.	श्रुत बोध		१०		,, १९३२
१७३.	ज्योतिष तन कल्प		६		
१७४.	अध्यात्म रामायण		७८		
१७५.	रत्न माल		६		,, १९०६
१७६.	नारचन्द्रेण प्रथम प्रकरण		१९		,, १८१९
१७७.	अभिधान चिन्तामणि (देवकांड)	हेमचंद्र	५		
१७८.	सिद्धान्त चिन्तामणि नाम माला	हेमचंद्र	७१		,, १८७०
१७९.	नायिका भेद		३		
१८०.	सूर्योदय बिचार		३		,, १८१७
१८१.	सलोक ध्यासुर		४		
१८२.	रत्नमाला (श्रीपति)		५		,, १८०६

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
१८३.	दान खण्ड		६		,, १९३७
१८४.	पाराशरी टीका		६		,, १८९६
१८५.	पुग्दल गीता		५		
१८६.	तपावली विधि		१४		
१८७.	दशासिक कथा		६		,, १८८४
१८८.	गजेन्द्र स्तोत्र		१३		
१८९.	मंत्र शास्त्र		११		
१९०.	रहमनी गीत		५		
१९१.	सारस्वत (हसान्त नपुंसक लिंग)		१७		
१९२.	सारिणी		२६		लि० सं० १८९९
१९३.	राम चरितमानस (कि० कां०)		१४		,, १८८९
१९४.	महाभारत विराटपर्व		८३ खं०		
१९५.	राम पटल		९		
१९६.	सिद्धान्त चन्द्रिका		५७		
१९७.	आत्म पद	(समय सुन्दर)	३		
१९८.	अध्यात्म गीता		१०		,, १९०४
१९९.	देवी माहात्म्य (दुर्गा)		१०८		
२००.	मन्त्र संग्रह		१५		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
२०१.	सप्ततिका यंत्र		१६		
२०२.	तुरकी सगुनावली		३		
२०३.	शरभ कवच		६		„ १६०२
२०४.	चंडी मंत्र		३		„ १६०६
२०५.	रस प्रकाश		१४		„ १७६६
२०६.	संतोष वत्तीसी		८		„ १६८४
२०७.	चरण व्यूह		१०		
२०८.	हृदय प्रकाश पिंगल	मुरलीधर	५७	र० का० सं० १७२३	„ १८३६
	(इस गुटके में १२ ग्रंथ हैं)		१६१		
	वृत्तार्णव	जयदेवमिश्र	१५		
	लघुपिंगल	सूरतमिश्र	३		
	पिंगल कणका	दास	१		
	छंद सार पिंगल	वृन्दावनदास	१६		लि० का० सं० १८३६
	वृत्तरत्नाकरसेतु	भास्करभट्ट	२६		
	वृत्तरत्नाकर मूल	केदार भट्ट	५		
	श्रुतबोध		८		
	वृत्तिरत्नावली	चिरंजीविभट्ट	७		
	वृत्तरत्नमाला	आसानंद	६	र० सं० का० १७८६	
	भाषाभूषण	जसवंतसिंह	८		
	बावनाक्षरी	राम कवि	४		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
२०९.	स्वरोदय	चरणदास	६		लि० सं० १८७५
२१०.	रामायण (लंका काण्ड)		२३		,,
२११.	बैताल पचीसी	गंगेश मिश्र	५८ खं०		,, १८५३
२१२.	स्वरोदय सिद्धान्त		१०		१८८६
२१३.	राम पटल		१४		,, १८३९
२१४.	रस मंजरी	भानुदत्त	१७		,, १८५३
२१५.	पृथ्वीराज रासो		१५०		,, १७५७
२१६.	महात्माओं की वाणी (१२५०० वाणी)		८०२		,, १९०३
२१७.	रामायण चौपाइयाँ		३५६		,, १९३०
२१८.	कवित्त रत्नमाला (प्र० प० अ०)		१०२		,, १८९३
२१९.	पद मुक्तावली*	नागरीदास (सावंत सिंह)	२८०		,, १८०२
२२०.	कबीर की साखी (६५ पत्र) स्वामी दादूदयाल जी की उक्ति भगवत गीता (१०० पत्र)		२४७		
२२१.	जयमल दास का पद (२६ पत्र) महाराज रामदास जी का-				

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
	अनुभवप्रकाश (३५ पत्र) तुलसीकृत रामायण		४५६		लि० सं० १६०१
२२२.	दानलीला गुटका		१२१४		,, १६३६
२२३.	भक्तमाल	नामादास	२५०		,, १८६२
२२४.	कृष्ण चरित्र सागर		१३०		
२२५.	भक्तमाल (भक्ति रसबोधिनी)	प्रियादास	२२४		लि० सं० १८२६
२२६.	राम चन्द्रिका	केशवदास	१२०		
२२७.	दीप मालिका कल्प		६		,, १४८३
२२८.	हेम व्याकरण		८१		,, १४६१
२२६.	सम्यक्त मूल बारह व्रत		१४५		
२३१. २३०.	रत्नाकरावतारिकाख्याल छुटी पंचम परिच्छेद		६		लि० सं० १५४५
२३२.	श्री नल दमयंती चरित		११		
२३३.	विक्रम कथा		३६		,, १६६६
२३४.	वाग्भटालंकार		१६		
२३५.	श्रीपाल महाराज चौपाई		५४		
२३६.	क्षेत्रसमास टीका		३४		लि० सं० १६२८
२३७.	वर्द्धमान विद्या परिवार		३		,, १६३४
२३८.	अषाड़ रिषि धमाल		४		१६३८

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
२३९.	मौती कपासीय संवाद		४		,, १८८२
२४०.	असाढ़भूति मुनी धमाल		४		,, १६९६
२४१.	विसलदे रो रास *	नाल्ह	१४	सं० १०७७,	,, १७६०
२४२.	वैराग्यगीता	समय सुंदर	६		लि० सं० १७८८
२४३.	नेमनाथ जी रो सिलोका		५		,, १८०७
२४४.	प्रश्नोत्तर रत्नमाला		४		,, १६८०
२४५.	सुख बोधार्थ माला पद्धति		१२		
२४६.	उपदेश बावनी		१९		लि० सं० १८८७
२४७.	ढोला मारवणी चउपाई		२७		,, १६१३
२४८.	व्याकरण विशेष		१०		,, १६९२
२४९.	साधु समाचारी व्याख्यान		२७		
२५०.	कालिकाचार्य कथा		१३		लि० सं० १८०३
२५१.	कलावती चौपाई		३		,, १६५५
२५२.	जीवविचार प्रकरण		६		,, १६९२
२५३.	उत्तराध्यन सूत्र		८९		,, १५९१
२५४.	शील फाल्गुन विषय		४		,, १६७६
२५५.	उदैराज बावनी		६		
२५६.	मदन शत		७		लि० सं० १७५०
२५७.	चंद कुँवर की वार्ता		४		

अनुक्रम	ग्रन्थनाम	रचियता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
२५८.	राम अनेई गोविन्द चरित्र		५३		लि० सं० १६७७
२५९.	ढाल आठवीं (पद्मावती खण्ड)		१९		,, १६६४
२६०.	साध बन्दना		१६		
२६१.	प्रद्युम्न प्रबन्ध		३१		
२६२.	सिघदत्त कथा		४		लि० सं० १६५५
२६३.	तप: प्रभात्रे घमिल कथा		६		,, १६३८
२६४.	दण्डक बत्तीसी		२१		
२६५.	कुक्कुट मंजारी कथा		४		लि० सं० १६५८
२६६.	शिव सरोदा		३१		,, १९०२
२६७.	उपवास प्रत्याख्यान		१५७		,, १५३४
२६८.	गौतम प्रश्न कथा		१६		
२६९.	इक्कीस प्रकार की पूजा		१७		लि० सं० १८९७
२७०.	कोषक नृप ढाल		१०		
२७१.	कल्प सूत्र		६१		लि० सं० १७५२
२७२.	भुवन दीपिका		८		,, १६६२
२७३.	दिढ़ स्मगत्त चौपाई		३		,, १६९१
२७४.	दंडक वाला व बोध		२		,, १६९२
२७५.	श्रीपाल रास		१२		,, १५९६
२७६.	पिंगल		२		,, १६९३

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
२७७.	चवमास रो व्याख्यान		१३		,, १८९१
२७८.	गुणावलो चौपाई		५		,, १६०६
२७९.	अज्ञान प्रकरण प्रमेय रत्न कोश		२२		
२८०.	उत्तमकुमार चरित्र		२५		लि० सं० १६९१
२८१.	श्रीपाल राजा चरित्र		११		
२८२.	अमृत बेली		११		लि० सं १६६७
२८३.	रूपसेन राजा चउपाई		१४		,, १७५२
२८४.	मनहर छत्तीसी		२०७		,, १७५७
२८५.	कलयुग चलत्र रसरास दान लीला		२०		,, १९०३
२८६.	स्नेह लीला (ध्रुव चरित्र)		२८		
२८७.	नीति मंजरी, शृंगार मंजरी, वैराग्य मंजरी	सवाई प्रतापसिंह	२२		,, १८६६
२८८.	श्री विसूरण कवित्त	चन कवि	१९		
२८९.	स्वरोदय (पद)		२९		
२९०.	सुन्दर बिलास, सुकनावली भवानी बन्द		६६		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
२९१.	नरसी मेहता के पद		६७		
२९२.	श्याम सनेही सवैया		४१		
२९३.	आदि पुराण		१७		
२९४.	लाल बाबा चरित्र		३०		
२९५.	कबीर की साखी	कबीर	१६७		
२९६.	फूलकुँवरि की बात		८३		
२९७.	शनिसर नी कथा चौपई		४१		लि० सं० १९४४
२९८.	चिताबणी	सुन्दर दास	४०		
२९९.	सुन्दर शृंगार	सुन्दर कवि	८९		
३००.	चन्द्रकंवर री वार्ता		८		लि० सं० १८३९
३०१.	सनेह लीला		१७		
३०२.	कथा राजा हरिश्चन्द्र		१३		,, १८७४
३०३.	भागीरथ लीला		९		
३०४.	चरन दास जी रो सरोदो	चरन दास	२१		,, १८७३
३०५.	नाग मन्त्र		२२		
३०६.	वारहट के कवित्त		४०		,, १७७९
३०७.	युधिष्ठिर धर्म संवाद		४४		
३०८.	नाथ स्तवन		५५		
३०९.	राजा रत्नरो बचन		१०६		
३१०.	रस प्रकाश		३१		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
३११.	कवित्त संग्रह	आनन्द घन	८		
३१२.	भक्ति पत्र		३		
३१३.	नाग दमन		१२		
३१४.	कवित्त दोहा संग्रह		१२		,, १८५३
३१५.	नन्द लाल का दोहा		१४		
३१६.	पीयूष लहरी		९		
३१७.	कवित्त संग्रह		६		
३१८.	द्वारिका नगरी को विस्तार		२		
३१९.	छन्द बारहखड़ी		३		
३२०.	गोपीचन्द		२		
३२१.	कथा प्रदीप		३		
३२२.	गोपीचन्द नी सभाय		२		
३२३.	मेघदूत		६		
३२४.	होयाली		४		
३२५.	कवित्त संग्रह		३		
३२६.	सौकी की ढाल		२		
३२७.	पद		२		
३२८.	कृष्ण जी री बिवाह लो		३		
३२९.	अर्जन माली चरित्र		३		लि० सं० १८२३

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
३३०.	चन्द्रगुप्त रो चौढालियो		४		,, १८०८
३३१.	गंगा तेली		६		
३३२.	सवंग बत्तीसी		२		
३३३.	मारवणी मेवाडो संवाद		२		,, १७९३
३३४.	बारहमास रा दूहा		२		,, १८५४
३३५.	गंग की कविता		६		
३३६.	गंगा देवी कथा		२		
३३७.	पार्श्व स्तव		३		,, १६८१
३३८.	कवित्त संग्रह		२		
३३९.	मुनि मालिका		२		,, १६८०
३४०.	लखाका		२		
३४१.	लुकमान हकीम की नसीहत		१		
३४२.	हीरराभाँ छत्तीसी		६		
३४३.	पुरानी चिट्ठी (नमूना)		१		
३४४.	जीव दया रो छन्द		२		
३४५.	चिट्ठी		४		
३४६.	ध्रुव चरित्र		२३		
३४७.	तखतसिंह जस वर्णन		२१		

अनुक्रम	ग्रन्थ-नाम	रचयिता	पत्र-संख्या	रचना-काल	लिपि-काल
३४८.	दोहा शतक		६		
३४९.	हरजस		५		
३५०.	दान लीला		४		
३५१.	सोनल का दुहा		५		
३५२.	अमरकाश	अमरसिंह	६२		
३५३.	एकाक्षरी कोश	हेरण्याचार्य	२		
३५४.	पुन्य प्रकाश स्तवन		३६		
३५५.	गुरु चरित्र		३८१		

—उदयशङ्कर शास्त्री